सेतुमाहात्म्यखण्ड का सूचीपत्र ॥

———:०:———

भूमिका

—:o:—

विदित हो कि इस असार संसार में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पदार्थ सार हैं इसीलिये सब मनुष्य अपनी २ रुचि के अनुसार इनकी प्राप्ति के लिये यत्न करते हैं इनमें धर्म प्रधान है धर्म के सेवन से ये चारों प्राप्त होते हैं और धर्म की प्राप्ति अपने २ वर्ण और आश्रमों के लिये कथित वैदिक कर्म के अनुष्ठान से सदा होती रही इसीलिये पूर्वकाल में तीनों वर्ण के मनुष्य वेद पढ़ने में अतिपरिश्रम करते थे और वेद पढ़ तदुक्त कर्म का अनुष्ठानकर अपना २ अभीष्टफल पाते थे–परन्तु कलियुग के मनुष्य ऐसे अल्पायुष् और मन्दबुद्धि होंगे कि जो जन्म भर में अतिपरिश्रम करने से भी सम्पूर्ण वेद न पढ़सकेंगे यह विचार परमकारुणिक कृष्ण द्वैपायन मुनि ने वेद के चार भाग किये–इसी से उनका नाम वेदव्यास हुआ–और वेद का आशय लेकर अठारह पुराण और श्रीमहाभारत नाम इतिहास रचा जिन के पठन और श्रवण से थोड़े से परिश्रम करने सेही कलियुग के आलस्ययुक्त आर्यजनों को धर्म का ज्ञान भलीभांति होजाता था–और अपने २ धर्म का सेवनकर उत्तमफल पाते थे–परन्तु पुराण आदि का तात्पर्य समझने के लिये संस्कृत का ज्ञान चाहिये और वर्तमान काल में आर्यलोगों से प्रायः संस्कृत विद्या का अभ्यास छूटगया–इसी कारण पुराण आदि का परिशीलन नहीं करसक्के और वर्णाश्रमधर्म को नहीं जानते–जब धर्म का ज्ञानही नहीं तो आचरण क्योंकर होसक्ता है–और धर्माचरण विना आयुष्, बुद्धि, बल, ऐश्वर्य, तेज, विद्या, धन, पौरुष, सन्तान, कीर्ति आदि से हीन होतेजाते हैं यह दुर्दशा अपने बन्धु आर्यजनों की देख और सब पुरुषार्थप्राप्ति का मूल ज्ञानपूर्वक धर्माचरण और धर्मज्ञान का मूल पुराण आदि का परिशीलन समझ और आर्यजनों को प्रायः संस्कृत भाषा में अनभिज्ञ देख विज्ञातिविज्ञ भारतवर्ष के परमहितैषी आर्यजनों के

कल्याण में अहोरात्र तत्पर भार्गववंशावतंस अवधसमाचारपत्रसम्पादक श्रीमुंशी नवलकिशोर साहब ने यह इच्छा की कि यदि सब पुराण संस्कृत से आर्यभाषा में अनुवाद होकर मुद्रित होजायँ तो सब आर्यजन उनका तात्पर्य सुगमता से जानसकें और यथार्थ धर्म स्वरूप जान दुराचरण से बच सत्कर्म में प्रवृत्त रहें तो सब प्रकार के क्लेशों से छूट ईश्वर के अनुग्रह से अपरिमित आनन्द पावें—यह मन में निश्चय कर श्रीयुत मुंशीसाहब ने इस सत्कार्य में सत्कारपूर्वक हम को प्रवृत्त किया हम ने भी उन की इच्छानुसार लिङ्गपुराण और भविष्यपुराण का आर्यभाषा में अनुवाद किया जो मुंशीसाहब ने अतिस्वच्छता से मुद्रित कराया है—अब स्कन्द-पुराण के अनुवाद का प्रारम्भ किया परन्तु यह पुराण सब पुराणों में बड़ा है जिसकी श्लोकसंख्या ८११०० है और एक स्थान में मिलता भी नहीं इसलिये जो जो खण्ड इसका मिलता जाय उसीका अनुवाद होकर छपता जाय—यह विचार प्रथम हमने इस पुराण के ब्रह्मोत्तरखण्ड का अनुवाद किया वह छप भी गया है अब यह सेतुखण्ड अनुवादित होकर छपा है आगे भी जो खण्ड* प्राप्त होते जायँगे उनका अनुवाद होकर छपता जायगा और ईश्वर के अनुग्रह से कुछ काल में यह बड़ा पुराण सम्पूर्ण अनुवादित होजायगा—इस ग्रन्थ का अनुवाद हम ने अतिसावधानता से किया है और हमारे परममित्र पण्डितवर श्रीसरयूप्रसादजी ने इसके शोधन का परिश्रम स्वीकार किया है—अब हम आशा रखते हैं कि सरलहृदय और क्षमाशील सज्जन इस पुराण के पाठक आर्यजन दोषों पर दृष्टि न देकर गुणग्रहण ही करेंगे और ईश्वर के अनुग्रह से कल्याणभागी होंगे शुभम् ॥

भवदीय
दुर्गाप्रसाद

---

* अब पूरा स्कन्दपुराण भाषाटीका सहित छपगया है जिसमें ७ खण्ड हैं १ माहेश्वरखंड २ वैष्णवखंड ३ ब्रह्मखंड ४ काशीखंड ५ रेवाखंड ६ नागरखंड ७ प्रभासखंड ।

स्कन्दपुराणान्तर्गत

सेतुमाहात्म्यखण्ड भाषा ।

पहिला अध्याय ॥

मङ्गलाचरण सूतजी के प्रति शौनकआदि मुनियों का प्रश्न सूतजी का कथन रामेश्वरक्षेत्र की प्रशंसा और नरकों का वर्णन और नरक के अधिकारियों का वर्णन और सेतुबन्ध यात्रा का फल और विधि ॥

दो० विबुध मुकुटमणिदीपिका, नीराजित दिन रैन ॥
विघ्न हरें हेरम्ब के, चरणकमल सुखदैन ॥ १ ॥
भजों नित्य गौरी गिरिश, सकल सिद्धि के हेतु ॥
भक्त मनोरथ कल्पतरु, भवसागर के सेतु ॥ २ ॥

कथा ॥

शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ॥
प्रसन्नवदनं ध्यायेत् सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ १ ॥

नैमिषारण्य में बड़े महात्मा मुमुक्षु ब्रह्मज्ञान में तत्पर अष्टाङ्गयोग में निपुण निर्मम धर्मज्ञ असूया आदि दोषों से रहित जितेन्द्रिय जितक्रोध सब भूतों पर दया करनेहारे शौनक आदि छब्बीस सहस्र मुनि अपने शिष्य प्रशिष्यों सहित भक्ति से विष्णु भगवान् का पूजन करतेहुये उग्र तप करते थे एक समय मुक्ति के देनेहारे परमपुण्य उस क्षेत्र में सब मुनियों का समाज एकत्र हुआ और परस्पर अनेक प्रकार की कथा कहनेलगे

और भक्ति मुक्ति की प्राप्ति के लिये सुगम उपाय सोचनेलगे इसी अवसर में बड़े विद्वान् व्यासजी के शिष्य सब पौराणिकों में उत्तम और बड़े तपस्वी श्रीसूतजी वहां आये उनको देख सब मुनि उठे और बड़े आदर से सूतजी को आसनपर बैठाय पाद्य अर्घ्य आदि से उनका पूजनकर कुशल प्रश्न पूछा कुछ काल के अनन्तर सूतजी स्वस्थ हुये तब शौनक आदि मुनीश्वरों ने पूछा कि हे सूतजी! आपने सब पुराण श्रीवेदव्यास जी के मुख से श्रवण किये हैं इस कारण आप सब पुराणों का तात्पर्य भली भांति जानते हैं अब आप यह वर्णन करें कि भूमण्डल में कौन पुण्यतीर्थ है कौन पुण्यक्षेत्र है जीव संसारसागर से क्योंकर मुक्त होते हैं शिव और विष्णु में दृढ़भक्ति क्योंकर होसक्ती है और तीन प्रकार के कर्म का फल क्योंकर सिद्ध होता है यह सब आप कृपाकर कथन कीजिये क्योंकि यह सब विषय व्यासजी ने आपको उपदेश किये होंगे प्रिय शिष्य को गुरु रहस्यबात भी कहदेते हैं यह मुनियों का वचन सुन अपने गुरु श्रीवेदव्यासजी को प्रणामकर सूतजी कहनेलगे कि; हे मुनीश्वरो! आपने जगत् के हित के लिये यह बहुत उत्तम बात पूछी आजतक यह रहस्य हमने किसी से नहीं कहा अब आप एकाग्रचित्त हो भक्तिपूर्वक श्रवण कीजिये हम वर्णन करते हैं॥

रामचन्द्र के बांधे हुये सेतु के समीप सब क्षेत्र और तीर्थों में उत्तम रामेश्वर नाम क्षेत्र है जिसके दर्शनमात्र से शिव और विष्णु में भक्ति पुण्य की वृद्धि तीन प्रकार के कर्म की सिद्धि और संसार से मुक्ति होती है जो मनुष्य भक्ति से सेतु का दर्शन करे वह अपने माता पिता के दो कोटि कुलसहित एक कल्प पर्यन्त शिवलोक में निवास कर अन्त में मुक्ति पाता है भूमि के पांशु अर्थात् धूलि के कण गिन सक्ते हैं आकाश के तारे भी गिनसक्ते हैं परन्तु सेतुदर्शन के पुण्य को शेषनाग भी नहीं गिन सक्ते सब देवताओं का रूप सेतु है उसके दर्शन का सम्पूर्ण पुण्य कौन वर्णन करसक्ता है सेतुदर्शन करने से सम्पूर्ण यज्ञ करने का सब तीर्थों में स्नान करने का और सब प्रकार के तप करने का फल प्राप्त होता है जो

और मनुष्यों को सेतुदर्शन करने के लिये उपदेश करे वह भी अनन्त पुण्य पाता है सेतु के समीप स्नान करनेहारा मनुष्य अपने सातकोटि कुलों सहित विष्णुलोक में जाय वहांहीं मुक्त होता है सेतुरामेश्वरलिङ्ग और गन्धमादन पर्वत को चिन्तन करनेहारा मनुष्य सब पापों से छूटता है माता पिता आदि लक्षकोटि कुलों सहित तीन कल्प शिवलोक में निवास कर वहांहीं मुक्त होता है सेतुस्नान करनेहारा मनुष्य भूषावस्था, वसाकूप, वैतरणी नदी, श्वभक्ष, मूत्रपान, तप्तशूल, तप्तशिला, पुरीषह्रद, शोणितकूप, शाल्मल्यारोहण, रक्तभोजन, कृमिभोजन, स्वमांसभोजन, वह्निज्वालाप्रवेशन, शिलावृष्टि, अग्निवृष्टि, कालसूत्र, क्षारोदक, उष्णतोय आदि घोर नरकों को नहीं देखता महापातकी पुरुष भी सेतुस्नान करे तो माता पिता के सौकोटि कुल सहित तीन कल्प विष्णुलोक में निवासकर वहां हीं मुक्ति पावै अधःशिर, क्षारसेवन, पाषाणयन्त्रपीडन, गर्तप्रपतन, पुरीषलेप, क्रकचदारण, पुरीषभोजन, रेतःपान, सन्धिदाह, अङ्गारशय्याभ्रमण, मुशलमर्दन आदि नरकों को सेतुदर्शन करनेहारा मनुष्य नहीं देखता है जो पुरुष मन में यह चिन्तन करता है कि मैं सेतुबन्ध के दर्शन के लिये जाऊंगा अथवा सेतुबन्धयात्रा के अर्थ सौ पैर भी चले वह सब पापों से मुक्त हो स्वर्ग को जाताहै काष्ठयन्त्रपीडन, शस्त्रभेदन, पतनोत्पतन, गदादण्डनिपीडन, गजदन्तहनन, भुजगदंशन, धूमपान, पाशबन्ध, शूलनिपीडन, क्षारोदकसेचन, क्षाराम्बुपान, तप्तलोह, सूचिभक्षण, स्नायुदाह, स्नायुच्छेदन, अस्थिभेदन, श्लेष्मादन, पित्तपान, महातिक्तनिषेवण, उष्णतैलपान, क्षारोदकपान, कषायोदकपान, तप्तपाषाणभोजन, तप्तबालुकाभोजन, दशनमर्दन, तप्तलोहशयन, तप्ताम्बुनिषेचन आदि महानरकों को सेतुदर्शन करनेहारा नहीं देखता और जिन नरकों में पापियों के नेत्रों में सूची डालते हैं शिश्न और वृषणों में लोह का भार लटकाते हैं पापियों को वृक्ष से गिराते हैं तीखे शस्त्रों की शय्यापर सुलाते हैं और वीर्य पिलाते हैं इत्यादि दारुण नरकों को सेतु में स्नान करनेहारा नहीं देखता सेतु के समीप बालूरेत में लोटने से जितने पांशु के कण देह में लगें उतनी ब्रह्म-

हत्याओं का नाश होजाता है जिसके शरीर में सेतु का पवन लगे उसके दशहज़ार सुरापानपातक उसी क्षण निवृत्त होजाते हैं जिसके केश सेतु के समीप जल में गिरें उसके दशहज़ार गुरुदारगमननामक महापातक नाश को प्राप्त होते हैं जिस पुरुष के अस्थियों को उसके पुत्र पौत्र सेतुबन्ध में डालें उसके दशहज़ार स्वर्णस्तेयपातक दूर होते हैं और स्नान के समय सेतुबन्ध का स्मरण करने से संसर्गज महापातक कटते हैं मार्गभेदी अर्थात् रास्ता तोड़नेवाला केवल अपने लिये रसोई बनानेवाला यति ब्राह्मण-दूषक बहुत भोजन करनेवाला और वेद बेचनेवाला ये पांच ब्रह्मघातक हैं जो पुरुष ब्राह्मण को धन आदि कोई पदार्थ देना अङ्गीकार करके फिर न देवे जे धर्मोपदेश करनेहारे गुरु से द्वेष करें और जे ब्राह्मणों का तिरस्कार करें वे भी ब्रह्मघाती होते हैं जो पानी पीने के लिये आतेहुये गोसमूह को निवारण करे वह भी ब्रह्महा है ये सब पापी सेतुदर्शन करने से निष्पाप होजाते हैं उपासना त्यागनेहारा देवता के अन्न को भोजन करनेहारा वेश्या पतितसमूह आदि का अन्नभक्षण करनेवाला और सुरापान करनेहारी स्त्री से संग करनेहारा ये सब सुरापान करनेहारे के समान हैं ये सब सेतुस्नान करने से निष्पाप होजाते हैं कन्दमूल फल, कस्तूरी, पट्टवस्त्र, दूध, चन्दन, कपूर, सुपारी, शहद, घी, तांबा, कांसा और रुद्राक्ष की चोरी करनेहारे सुवर्णस्तेयी गिनेजाते हैं ये भी सेतुदर्शन से निष्पाप होते हैं और भी किसी द्रव्य की चोरी करनेहारे दुष्टपुरुष सेतु के दर्शन करतेही सब पापों से छूटजाते हैं बहिन, पुत्र की स्त्री, भाई की स्त्री, मित्र की स्त्री, रजस्वला, परस्त्री, मद्यपान करनेहारी स्त्री, हीन वर्ण की स्त्री और विधवा स्त्री से संग करनेहारे पुरुष गुरुदारगामी कहाते हैं ये सब सेतुस्नान से निष्पाप होजाते हैं जो इनके संसर्गी हैं वे भी सेतु दर्शन करने से पापरहित होते हैं जे पुरुष यज्ञ विना किये स्वर्ग में मेनका, घृताची आदि अप्सराओं के साथ विहार करना चाहें वे सेतु में स्नान करें सूर्य और अग्नि को विना सेवन किये और देवताओं के आराधन जो पुरुष अपना कल्याण चाहे वह भक्ति से सेतुस्नान करे तिल

भूमि सुवर्ण और अन्नदान किये विना जे स्वर्ग चाहें वे सेतुस्नान करें उपवास व्रतादि करके शरीर को सन्ताप दिये विना स्वर्ग की इच्छा होय तो सेतुस्नान करो सेतुस्नान करने से मन की शुद्धि होती है और मोक्ष प्राप्त होता है जप, होम, दान, यज्ञ, तप आदि से सेतुस्नान को पुराण में उत्तम कहा है जो पुरुष निष्काम हो सेतुस्नान करे उसके सब पाप निवृत्त होते हैं और पुनर्जन्म भी नहीं होता और जो पुरुष सम्पत्ति के लिये सेतुस्नान करे वह बड़ी सम्पत्ति पाता है शुद्धि के लिये स्नान करे तो शुद्धि पावे मुक्ति के लिये करे तो मुक्ति पावे और अप्सराओं के साथ रति के लिये सेतुस्नान करे तो स्वर्ग में जाय अप्सराओं के साथ उत्तम भोग भोगे सेतुस्नान से पाप का क्षय धर्म की वृद्धि और सब मनोरथों की सिद्धि होती है सब व्रत यज्ञ योग और तीर्थों से सेतुस्नान बढ़कर है ब्रह्म-लोक, वैकुण्ठ, कैलास अथवा इन्द्रादिलोकों में जिनकी विहार करने की इच्छा हो वे सेतुस्नान करें आयुष्, आरोग्य, सम्पत्ति, अतिरूप, सांग वेदों का ज्ञान, सब शास्त्रों का बोध, सब मन्त्रों में अभिज्ञता इत्यादि जिस कामना के उद्देश से सेतुस्नान करे वह कामना अवश्यही सिद्ध होय जो पुरुष दारिद्र्य और नरक से डरते हों वे सेतुस्नान करें श्रद्धा से अथवा विन श्रद्धा सेतुस्नान करनेहारा मनुष्य दुःखभागी नहीं होता सेतुस्नान से सब के पापसमूह नष्ट होते हैं और शुक्लपक्ष के चन्द्र की भांति पुण्य बढ़ता है जैसे समुद्र में रत्नों की वृद्धि होती है इसी भांति सेतुस्नान करने से धर्म की वृद्धि होती है कामधेनु कल्पवृक्ष अथवा चिन्तामणि जिस प्रकार मनुष्यों के सब मनोरथ सिद्ध करते हैं इसी भांति सेतुस्नान भी सब कामना सिद्ध करनेहारा है जो पुरुष दारिद्र्य से सेतुयात्रा करने को समर्थ न होयँ वे और मनुष्यों से धन मांगकर सेतुयात्रा करें जो पुरुष सेतुयात्रा करनेहारे को लेन देवें वे भी सेतुस्नान के समान फल पाते हैं सेतुयात्रा के लिये ब्राह्मण से धन लेवे ब्राह्मण न देवे तो क्षत्रिय से क्षत्रिय भी न देवे तो वैश्य से धन मांगे परन्तु शूद्र से कभी धन न लेवे सेतुयात्रा करनेहारे पुरुष को जो पुरुष धन धान्य वस्त्र भोजन आदि देवें

वे अश्वमेध आदि यज्ञों का फल पाते हैं और तुलापुरुष आदि महादान करने का और चारो वेदों के पारायण का भी फल पाते हैं सेतुस्नान से ब्रह्महत्या आदि पातक दूर होते हैं और सब मनोरथ सिद्ध होते हैं सेतुयात्रा के लिये जो याचना कर धन लेवे और यात्रा करे उसको प्रतिग्रह लेने का दोष नहीं होता और सेतुस्नान का भी सम्पूर्ण फल होता है जो पुरुष किसी से कहे कि तू सेतुयात्रा कर मैं तुझे धन दूंगा और पीछे से धन न देवे वह ब्रह्मघातक होता है और जो यात्रा के लिये याचना करके धन लेवे और यात्रा न करे वह भी ब्रह्मघातक है जो धनवान् होकर लोभसे यात्राके लिये धन मांगता फिरे वह चोर है जिस किसी उपाय से सेतुयात्रा करे जो यात्रा करने का अपने को अवसर न होय तो दक्षिणा देकर ब्राह्मण से सेतुयात्रा करावे धन मांगकर यज्ञ करने में जिस भांति दोष नहीं इसी प्रकार सेतुयात्रा में भी याचना करने का दोष नहीं औरों से द्रव्य याचना करके भी मनुष्यों को सेतुस्नान में प्रवृत्त करे सत्ययुग में ज्ञान से त्रेता में यज्ञ करने से द्वापर में दान देने से मोक्ष मिलता है और सेतुस्नान से चारो युगों में मोक्ष प्राप्त होता है॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांरामेश्वरक्षेत्रप्रशंसननरकनरकाधिकारि-
सेतुबन्धयात्राफलविधिनिदर्शनंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥

दूसरा अध्याय ॥

रामचन्द्रजी की कथा और सेतुबांधने का वर्णन सेतु के बीच
मुख्य चौबीस तीर्थों के नाम ॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि; हे सूतजी! रामचन्द्रजी ने अगाध समुद्र में क्योंकर सेतु बांधा और सेतु में गन्धमादनपर्वत के बीच कितने तीर्थ हैं यह आप वर्णन करें यह ऋषियों का वचन सुन सूतजी कहने लगे कि, हे मुनीश्वरो! रामचन्द्रजी ने जिस भांति समुद्र में सेतु बांधा वह हम वर्णन करते हैं आप प्रीतिपूर्वक श्रवण करें पिता की आज्ञासे दण्डकारण्य में पञ्चवटी के बीच कुटी बनाय सीता और लक्ष्मण सहित श्रीरामचन्द्रजी ने निवास किया वहांहीं मारीच के छल से रावण ने सीता को

हरा रामचन्द्र भी वन में सीता को ढूंढ़ते २ शोक मोह से व्याकुल पम्पासर के तीर पर पहुँचे वहां एक वानर को देखा उस वानर ने भी रामचन्द्र से पूछा कि आप कौन हैं तब रामचन्द्र ने अपना सब वृत्तान्त कहा और वानर से भी पूछा तब वह वानर कहनेलगा कि हे राम! वानरों के राजा सुग्रीव का मैं मन्त्री हूं और हनुमान् मेरा नाम है और आपके पास मुझे भेजा है वह आपसे मैत्री चाहते हैं इसलिये आपको वहां चलना चाहिये यह हनुमान् का वचन सुन रामचन्द्र सुग्रीव के पास गये और उसके साथ अग्निसाक्षी से मैत्री कर बाली के मारने की प्रतिज्ञा की और सुग्रीव ने सीता का ढूंढ़ना अङ्गीकार किया इसभांति दोनों प्रतिज्ञा कर बड़े स्नेह से ऋष्यमूक पर्वत में रहनेलगे सुग्रीव के निश्चय के लिये दुन्दुभि नाम राक्षस के शरीर को पैर के अँगूठे से रामचन्द्र ने कई योजन फेंक दिया और एक बाण से सात ताल के वृक्ष बेधे तब सुग्रीव ने प्रसन्न हो कहा कि, हे राम! आपको मित्रकर अब मुझे इन्द्रआदि देवताओं से भी भय नहीं है मैं रावण को मार अवश्य सीता को लाऊंगा फिर राम लक्ष्मण को साथ ले सुग्रीव किष्किन्धा में गया और गर्जनेलगा बाली भी उसके गर्जने को पहिंचान क्रोधकर अन्तःपुर से निकलकर अपने छोटे भाई सुग्रीव से युद्ध करनेलगा बाली ने एक मूका सुग्रीव के ऐसा मारा कि वह बिह्वल हो भगा और रामचन्द्र के समीप पहुँचा तब रामचन्द्र ने एक माला सुग्रीव को पहिनाय दी और फिर युद्ध करने के लिये भेजा सुग्रीव भी जाय बाली के साथ बाहुयुद्ध करनेलगा इसी अवसर में रामचन्द्र ने एक बाण ऐसा मारा कि बाली गिरपड़ा और मरगया किष्किन्धा का राज्य सुग्रीव ने पाया वर्षाऋतु व्यतीत होने के अनन्तर बहुत सी वानरों की सेना साथ ले सुग्रीव रामचन्द्र के पास आया और सीता के ढूंढ़ने को वानरों को भेजा उनमें हनुमान् लङ्का में पहुँचे और सीताजी को देखा और उनका दिया चूड़ामणि लाकर रामचन्द्र को दिया उसको देख रामचन्द्र को हर्ष और शोक एकही काल में हुये फिर लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान्, जाम्बवान् आदि को संग ले रामचन्द्रजी ने अभिजित मुहूर्त में लङ्का की ओर

प्रस्थान किया और कई देशों को लङ्घनकर महेन्द्र पर्वत में पहुँचे वहां चक्रतीर्थ पर निवास किया वहांहीं रावण का भाई विभीषण अपने चार मन्त्रियों समेत रामचन्द्रजी से आ मिला रामचन्द्रजी ने विभीषण का बड़ा आदर किया परन्तु सुग्रीव के मन में सन्देह हुआ कि यह रावण का दूत न होय तब रामचन्द्रजी ने सुग्रीव का सन्देह दूर किया और अनेक युक्तियों से विभीषण को निष्कपट जान अपने समीप रक्खा और सम्पूर्ण राक्षसोंका राजा बनाय सुग्रीव के समान उसको भी अपना मन्त्री बनाया रामचन्द्र जी ने सब वानरों से यह पूछा कि समुद्रलङ्घन करने का क्या उपाय किया जाय वानरों की सेना भी बहुत बड़ी और समुद्र भी दुस्तर है जिसमें बड़े २ तरङ्ग उठरहे हैं मत्स्य, शंख, शुक्ति, नक्र आदि जीवों से भरा है कहीं बड़-वाग्नि करके भयंकर है किसी ओर बड़े २ तरङ्ग उठते हैं कहीं प्रलय के मेघ गर्ज रहे हैं और सौ योजन इसका विस्तार है सब सेनासहित हम क्योंकर इसके पार होंगे यह बड़ाभारी विघ्न बीच में है सीता क्योंकर प्राप्त होंगी कौन उपाय कियाजाय जिससे समुद्र के पार होयँ बड़ा कष्ट हमारे ऊपर पड़ा राज्य से भ्रष्ट भये वनमें आये पिता मरगये और भार्या हरीगई ये सब दारुण दुःख तो थेही सबसे अधिक दुःख यह पड़ा कि, समुद्रलङ्घन किस भांति होय इस समुद्र के गर्जने को धिक्कार है कि जो हमारा दुःख नहीं देखता और अगस्त्यजी ने कहा था कि हे राम! तुम रावण को मार कर पाप निवृत्त होनेके लिये गन्धमादन पर्वत में जाना यह मुनि का वचन क्योंकर मिथ्या होसक्ता है इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि, हे मुनीश्वरो! रामचन्द्रजी का यह वचन सुन सुग्रीव आदि वानर हाथ जोड़ बोले कि हे महाराज! नौका और प्लवों करके सब सेना पार होजायगी आप क्यों चिन्ता करते हैं? तब विभीषण ने कहा कि, समुद्र का लङ्घन नौका आदि से नहीं होसक्ता इसका यह उपाय है कि रामचन्द्रजी समुद्र की शरण में प्राप्त होयँ क्योंकि रामचन्द्र के पूर्वपुरुषों ने समुद्र को खोदा है इसलिये समुद्र भी सगरवंश का अवश्यही सहाय करेगा यह विभीषण का वचन सुन सब वानरों को आश्वासन करते हुये रामचन्द्र बोले कि, सौ योजन समुद्र

का विस्तार है इससे नौका आदि करके सब सेना नहीं पार होसक्री और इतनी नौका भी कहाँ हैं कि जिनमें सब सेना बैठजाय और व्यापारियों को क्लेश देना और उनकी नौका छीनना हमको अङ्गीकार नहीं और नौका आदि पर चढ़कर समुद्र में प्रवेश करते ही कदाचित् शत्रु प्रहार करें तो न इधर के न उधर के इससे विभीषण का कथनहीं हमको उत्तम देख पड़ता है पहिले हम समुद्र की उपासना करते हैं जो हमको उपासना करने से भी मार्ग न देगा तो आग्नेयास्त्र से समुद्र को दग्ध करदेंगे यह विचारकर पवित्र हो आचमनकर लक्ष्मणसहित रामचन्द्रजी कुशों के बिछौनेपर समुद्रतट के ऊपर सोयगये इसप्रकार निराहार तीन दिन तीन रात्रि उसी कुशों के बिछौने पर सोतेरहे और समुद्र का उपासन करतेरहे परन्तु समुद्र ने रामचन्द्रजी को दर्शन न दिया तब कोपकर लक्ष्मण से रामचन्द्र जी ने कहा कि; आज हम शंख, शुक्ति, मगर, मत्स्य आदि जीवों समेत समुद्र को अपने बाणों से शुष्क करेंगे क्षमा करके युक्त हमको समुद्र असमर्थ जानता है इसलिये ऐसे में क्षमा करना अनुचित है हे लक्ष्मण! हमारा धनुष् लावो कि हम समुद्र को सुखादेवें और हमारी सेना पैरोंसे ही पार उतरजाय बड़े २ दैत्य महामकर और ऊंचे २ तरङ्गों करके युक्त इस निर्मर्याद समुद्र की आज हम मर्यादा तोड़ते हैं इतना कह रामचन्द्रजी ने क्रोधकर धनुष् पर बाण चढ़ाया उससमय उनका स्वरूप ऐसा दुर्धर्ष था जैसा त्रिपुरवध के समय शिवजी का होय फिर कोप से धनुष् को खींच तीनों लोकों को कम्पित करते हुये समुद्र पर बाण छोड़नेलगे उन बाणों के लगतेही भयभीत हो समुद्र पाताल से निकल रामचन्द्रजी की शरण में आया और ब्राह्मणरूप धार हाथजोड़ रामचन्द्रजी की स्तुति करनेलगा॥

समुद्र उवाच॥ नमामि ते राघवपादपङ्कजं सीतापते सौख्यदपादसेविनाम्॥ नमामि ते गौतमदारमोक्षदं श्रीपादरेणुं सुरवृन्दसेव्यम्॥ १॥ सुन्दप्रियादेहविदारिणे नमो नमोस्तु ते कौशिकयागरक्षिणे॥ नमो महादेवशरासभेदि-

ने नमोनमो राक्षससङ्घनाशिने ॥ २ ॥ राम राम नमस्यामि
भक्तानामिष्टदायिनम् ॥ अवतीर्णं रघुकुले देवकार्यचिकी-
र्षया ॥ ३ ॥ नारायणमनाद्यन्तं मोक्षदं शिवमच्युतम् ॥
राम राम महाबाहो रक्ष मां शरणागतम् ॥ ४ ॥

इस भांति स्तुतिकर समुद्र बोला कि हे रामचन्द्र ! हे दया के सागर !
तुम कोप को निवृत्त करो और मेरी रक्षा करो मैं आपकी शरण में प्राप्त हूं
भूमि, वायु, तेज, आकाश आदि का विधाता ने जो स्वभाव रचा है वे
उसी में स्थिर हैं इसी भांति मेरा स्वभाव अगाधता (अर्थात् जिसके तल
को कोई स्पर्श न करसके) है लोभ से, काम से, भय से और राग से मैं
अपने स्वभाव को कभी नहीं त्यागसक्ता परन्तु आपकी सेना उतरने के
लिये अवश्य सहायता करूंगा यह समुद्र का वचन सुन रामचन्द्रजी ने
कहा कि हे समुद्र ! तुम शुष्क होजावो जिससे हम सेना सहित लङ्का में
पहुँचें तब समुद्र ने फिर प्रार्थना की कि महाराज ! जो उपाय मैं कहूं वह
आप कीजिये जो मैं आपकी आज्ञा से शुष्क होजाऊं तो जो आवेगा वही
मुझे धनुष् का बल दिखावेगा और सूखने की आज्ञा देगा इसलिये आप
की सेना पार होनेका मैं उपाय कहता हूं आपकी सेना में विश्वकर्मा का
पुत्र बड़ा शिल्पी अर्थात् कारीगर नलनामक एक वानर है वह जो तृण,
काष्ठ, पाषाण आदि जल में फेंकेगा उसको मैं धारण करूंगा वही सेतु बन
जायगा उसी सेतु से सेनासहित तुम लङ्का को जावो इतना कह समुद्र
अन्तर्धान हुआ और रामचन्द्रजी ने नल से कहा कि तू समुद्र में सेतु बां-
धने को समर्थ है इसलिये सेतु बांध तब नल कहनेलगा कि हे रामचन्द्र
जी ! आपकी आज्ञा से समुद्र में मैं सेतु बांध सक्ता हूं मेरे पिता विश्वकर्मा
ने मुझे वर दिया है और मेरी माता को भी वर दिया है कि मेरे तुल्य
शिल्पी तेरा पुत्र होगा मैं विश्वकर्मा का औरस पुत्र हूं और विश्वकर्मा के
समान हूं इसलिये अभी सेतु बांधता हूं यह नल का वचन सुन रामचन्द्र
जी ने वानरों को आज्ञा दी और वानर भी क्षणभर में हजारों पर्वतों के

शृङ्ग, वृक्ष, वेलि, तृण आदि ले आये और नल ने समुद्र के ऊपर रामचन्द्र की आज्ञा से दशयोजन चौड़ा और सौ योजन लम्बा सेतु बांधा उस रामचन्द्रजी के बँधवायेहुये सेतु का जे मनुष्य दर्शन करें वे सब पातकों से छूटजाते हैं सेतुदर्शन से जैसे शिवजी प्रसन्न होते हैं ऐसे व्रत, दान, तप, होम आदि करके प्रसन्न नहीं होते सूर्य के तेज के समान जैसे कोई तेज नहीं इसी भांति सेतुस्नान के तुल्य स्नान नहीं जहां रामचन्द्रजी ने सेतु बांधा और जहां कुशशय्या पर सोये वही पीछे लोक में प्रसिद्ध बड़ा तीर्थ हुआ सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह हमने सेतुबन्धन की कथा कही सेतुबन्ध के समीप इतने तीर्थ हैं कि जिन सबकी गणना शेषजी भी अपनी हज़ार जिह्वा से नहीं करसके परन्तु जो तीर्थ वहां मुख्य हैं उनका हम माहात्म्य कहते हैं वहां चौबीस तीर्थ प्रधान हैं चक्रतीर्थ १ वेतालवरद २ पापविनाशन ३ सीतासर ४ मङ्गलतीर्थ ५ अमृतवापिका ६ ब्रह्मकुण्ड ७ हनुमत्कुण्ड ८ अगस्त्यतीर्थ ९ रामतीर्थ १० लक्ष्मणतीर्थ ११ जटातीर्थ १२ लक्ष्मीतीर्थ १३ अग्नितीर्थ १४ शक्रतीर्थ १५ शिवतीर्थ १६ शंखतीर्थ १७ यमुनातीर्थ १८ गङ्गातीर्थ १९ गयातीर्थ २० कोटितीर्थ २१ साध्यामृततीर्थ २२ मानसतीर्थ २३ और धनुष्कोटितीर्थ २४ ये चौबीस तीर्थ सेतु के समीप प्रधान हैं और महापातक हरनेहारे हैं जिसप्रकार रामचन्द्रजी ने सेतु बांधा और जो २ वहां प्रधान तीर्थ हैं वह सब हमने वर्णन किये जिनके श्रवण से मनुष्य मुक्ति पाते हैं जो भक्तिपूर्वक इस अध्याय को पढ़े अथवा श्रवण करे वह जय पाता है और जन्म मरण के क्लेश से छूटता है॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभ.प.व्याख्यायांरामकथानकसेतुबन्धचतुर्विंशतीर्थाभिधानंनामद्वितीयोऽध्यायः॥ २॥

तीसरा अध्याय॥

चौबीस तीर्थों में चक्रतीर्थ का माहात्म्य और गालवमुनि की अद्भुत कथा॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि, हे सूतजी ! आपने चौबीस तीर्थ सेतु के समीप कहे उनमें प्रथम तीर्थ का नाम चक्रतीर्थ क्योंकर हुआ यह आप वर्णन करें यह मुनियों का वचन सुन सूतजी बोले कि हे मुनी-

श्वरो! चौबीस तीर्थों में जो प्रथम तीर्थ है उस के स्मरण करने से गर्भ में वास नहीं होता और उस तीर्थ में स्नान आदि करने से लाखों जन्मों के किये पाप दूर होते हैं उस तीर्थ से अधिक अथवा उस के समान जगत् में कोई तीर्थ नहीं है गङ्गा, सरस्वती, नर्मदा, पम्पा, गोदावरी, यमुना, कावेरी, मणिकर्णिका आदि बड़े २ तीर्थ और उत्तम २ नदी इस तीर्थ के कोटि भाग के भी तुल्य नहीं हैं उस तीर्थ का पहिला नाम धर्मतीर्थ है उसकी जिस भांति चक्रतीर्थ संज्ञा हुई वह वर्णन करते हैं सेतुमूल के समीप जहां दर्भशयन है वहां हीं चक्रतीर्थ है पूर्वकाल में विष्णुभक्त गालव मुनि ने दक्षिणसमुद्र के किनारे हालास्य फुल्लग्राम क्षीरसर धर्मपुष्करिणी आदि तीर्थों में बहुत काल तप किया निरन्तर वेद पढ़ता दयायुक्त सत्यवादी जितेन्द्रिय सब भूतों को अपने तुल्य समझता विषयों से निःस्पृह सब जीवों के हित में तत्पर गालव मुनि तप करनेलगा बहुत काल तक निराहार रहा बहुतकाल वृक्ष का एक सूखा पत्ता खाकर रहा कुछ काल जलाहार रहा और बहुत कालतक वायु भक्षणकर तप किया पांच हजार वर्ष इस भांति घोरतप करके फिर पांचहजार वर्ष निराहार दृष्टि व श्वास रोककर तप किया वर्षाऋतु में वर्षा में रहना हेमन्त में जल के बीच शयन करना और ग्रीष्म में पञ्चाग्नि तापना इस भांति हृदय में विष्णुभगवान् का ध्यान और अष्टाक्षर मन्त्र का जप करते बड़ा उग्र तप किया तप करते २ गालव मुनि को लाखों वर्ष बीते तब उस के तप से प्रसन्न हो शंख, चक्र, गदा, पद्म धारे कोटि सूर्य के समान प्रकाशित गरुड़ पर चढ़े छत्र, चामर, हार, केयूर, कटक, मुकुट, कुण्डल आदि से भूषित विष्वक्सेन सुनन्द आदि सेवकों करके युक्त वेणु, वीणा, मृदङ्ग आदि बाजे बजाते और गातेहुये नारद आदि मुनियों करके सेवित पीताम्बर पहिने लक्ष्मी करके शोभित मेघ के समान नीलवर्ण दोनों ओर सनक आदि महायोगियों करके सेवित एक हाथ से कमल को हिलाते मन्दहास्य से तीनों लोकों को मोहित करते अपनी कान्ति से ...ों दिशाओं को प्रकाशित करते कण्ठ में कौस्तुभमणि करके भूषित

सुवर्ण की छड़ी हाथ में धारे हजारों कञ्चुकियों करके युक्त भक्तवत्सल विष्णुभगवान् गालव मुनि के सम्मुख प्रकट हुये गालव मुनि भी भगवान् के दर्शन पाय आनन्द में मग्न हो परमभक्ति से स्तुति करनेलगा॥

गालव उवाच॥ नमो देवाधिदेवाय शङ्खचक्रगदाभृते॥ नमो नित्याय शुद्धाय सच्चिदानन्दरूपिणे॥१॥ नमो भक्तार्त्तिहन्त्रे ते हव्यकव्यस्वरूपिणे॥ नमस्त्रिमूर्तये तुभ्यं सृष्टिस्थित्यन्तकारिणे॥२॥ नमः परेशाय नमो विभूम्ने नमोस्तु लक्ष्मीपतये विधात्रे॥ नमोस्तु सूर्येन्द्रविलोचनाय नमो विरञ्च्याद्यभिवन्दिताय॥३॥ यो नामजात्यादिविकल्पहीनस्समस्तदोषैरपि वर्जितो यः॥ समस्तसंसारभयापहारिणे तस्मै नमो दैत्यविनाशनाय॥४॥ वेदान्तवेद्याय रमेश्वराय वैकुण्ठवासाय विधातृपित्रे॥ नमोनमः सर्वजनार्तिहारिणे नारायणायामितविक्रमाय॥५॥ नमस्तुभ्यं भगवते वासुदेवायशार्ङ्गिणे॥ भूयोभूयो नमस्तुभ्यंशेषपर्यङ्कशायिने॥६॥

इस भांति स्तुतिकर गालव मुनि भगवान् का ध्यान करनेलगे भगवान् भी स्तुति सुनकर परमप्रसन्न हो प्रीति से मुनि को आलिङ्गन कर कहने लगे कि हे गालव! तेरे तप से और स्तोत्र से हम बहुत प्रसन्न हुये अब जो तेरी इच्छा होय सो वर मांग यह भगवान् का वचन सुन गालव मुनि प्रार्थना करनेलगे कि; हे नारायण! हे जगन्नाथ! हे गोविन्द! मैं आपके दर्शन से कृतार्थ हुआ और सब जगत् में श्रेष्ठ हुआ अधर्मी पुरुष आपको नहीं देखसक्के और ब्रह्मा शिव इन्द्र आदि देवता भी आप का तत्त्व नहीं जानते योगी और कर्मनिष्ठ आपका दर्शन नहीं पासक्के तीनों वेद भी आपका भली भांति प्रतिपादन नहीं करसक्के और मैंने साक्षात् आपका दर्शन पाया इससे अधिक और क्या वर होगा मैं अपने को आपके दर्शन से ही कृतार्थ मानता हूं जिनके नाम स्मरण से महापातकी

भी मुक्ति पाते हैं उनका मैं साक्षात् दर्शन करता हूं अब यही वर चाहता
हूं कि आपके चरणारविन्द में दृढ़ भक्ति होय यह गालव का वचन सुन
भगवान् ने कहा कि हे गालव! हमारे में तेरी निष्काम दृढ़भक्ति होगी और
सब कर्म का फल मेरे अर्पण करता हुआ और मेरे ध्यान में आसक्त इस देह
के अन्त में मुझ में लीन होगा अब तू इसी आश्रम में निवास कर यह
धर्मपुष्करिणी सब पाप हरनेहारी है इसके तीर पर तप करने से अवश्यही
सिद्धि होगी पूर्वकाल में दक्षिणसमुद्र के तटपर महादेवजी की प्रसन्नता
के लिये यहां बहुत कालतक धर्म ने तप किया है और यह तीर्थ स्नान
के लिये रचा इसी से इसका नाम धर्मपुष्करिणी हुआ जिसप्रकार हमारी
प्रसन्नता के लिये तैंने तप किया इसी भांति शिवजी के प्रसाद के अर्थ
धर्म ने बहुत तप किया तब प्रसन्न हो शिवजी ने धर्म को दर्शन दिया
धर्म भी दर्शन पाय परम सन्तुष्टहो भक्ति से शिवजीकी स्तुति करनेलगा॥

धर्म उवाच॥ प्रणमामि जगन्नाथमीशानं प्रणवात्मक-
म्॥ समस्तदेवतारूपमादिमध्यान्तवर्जितम्॥१॥ ऊर्ध्व-
बीजं विरूपाक्षं विश्वरूपं नमाम्यहम्॥ समस्तजगदाधार-
मनन्तमजमव्ययम्॥२॥ यमामनन्ति योगीन्द्रास्तं वन्दे
पुष्टिवर्द्धनम्॥ नमो लोकाधिनाथाय वञ्चते परिवञ्चते॥३॥
नमोस्तु नीलकण्ठाय पशूनां पतये नमः॥ नमः कल्म-
षनाशाय नमो मीढुष्टमाय च॥४॥ नमो रुद्राय देवाय
कद्रुद्राय प्रचेतसे॥ नमः पिनाकहस्ताय शूलहस्ताय ते
नमः॥५॥ नमश्चैतन्यरूपाय पुष्टीनां पतये नमः॥ नमः
पञ्चास्यदेवाय क्षेत्राणां पतये नमः॥६॥

इसप्रकार धर्म के मुख से स्तुति सुनकर महादेवजी प्रसन्न हो कहने
लगे कि हे धर्म! हम तेरे इस तप और स्तोत्र से बहुत प्रसन्न हुये अब जो
वर तू चाहे वह मांग तब धर्म ने प्रार्थना की कि हे नाथ! मैं सदा आप

का वाहन होकर रहूं यही वर चाहता हूं और इसी वर से मैं कृतार्थ होजा-
ऊंगा यह धर्म की प्रार्थना सुन श्रीमहादेवजी ने कहा कि हे धर्म ! तू
हमारा वाहन हो और हमारे धारण करने की तुझ में शक्ति होय तेरी सेवा
करनेवाले पुरुषों की हमारे में दृढ़ भक्ति होजायगी यह महादेवजी की
आज्ञा पातेही धर्म ने वृषरूप धार महादेवजी को अपने ऊपर चढ़ालिया
महादेवजी भी उस पर चढ़ प्रसन्न हो कहनेलगे कि हे धर्म ! दक्षिण
समुद्र के तीरपर जो तीर्थ तैंने बनाया वह धर्मपुष्करिणी नाम से लोक
में प्रसिद्ध होगा इसके तटपर कियेहुये जप, होम, दान, वेदपाठ आदि
धर्मकृत्य अनन्तफल को देनेहारे होंगे इतना वर इस तीर्थ को दे उसी
वृषरूप धर्म के ऊपर चढ़ेहुये महादेवजी कैलास को गये इतनी कथा
सुनाय विष्णुभगवान् ने कहा कि; हे गालव ! तूभी इसी धर्मपुष्करिणी
के तटपर जबतक शरीर रहे तबतक निवास कर पीछे हमारे लोक में प्राप्त
होगा जो यहां कुछ तुझे भय होगा तो हमारी आज्ञा से सुदर्शनचक्र तेरे
भय को निवृत्त करेगा इतना कह विष्णुभगवान् अन्तर्धान हुये सूतजी
कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! विष्णुभगवान् के अन्तर्धान होनेके अनन्तर
गालवमुनि भी धर्मपुष्करिणी के तटपर तीनकाल शालग्राम शिला में
विष्णुभगवान् का पूजन करता और विरक्त हो विष्णुभगवान् का ध्यान
करता एकदिन माघशुक्ल एकादशी का उपवास कर जागरण किया और
विष्णुभगवान् का पूजन किया द्वादशी को प्रभातही स्नानकर धर्म-
पुष्करिणी के तीरपर सन्ध्यावन्दन आदि कर्म कर भांति २ के पुष्प और
तुलसीदल लाकर भक्ति से विष्णुभगवान् का गालवमुनि ने पूजन किया
और स्तुति करनेलगा ॥

गालव उवाच ॥ सहस्रशिरसं विष्णुं मत्स्यरूपधरं
हरिम् ॥ नमस्यामि हृषीकेशं कूर्मवाराहरूपिणम् ॥ १ ॥
नारसिंहं वामनाख्यं जामदग्न्यं च राघवम् ॥ बलभद्रं च-
कृष्णं च कल्किं विष्णुं नमाम्यहम् ॥ २ ॥ वासुदेवमना-

धारं प्रणतार्तिविनाशनम् ॥ आधारं सर्वभूतानां प्रणमामि
जनार्दनम् ॥ ३ ॥ सर्वज्ञं सर्वकर्तारं सच्चिदानन्दविग्रहम् ॥
अप्रतर्क्यमनिर्देश्यं प्रणतोस्मि जनार्दनम् ॥ ४ ॥

इस भांति भगवान् की स्तुति कर गालवमुनि धर्मपुष्करिणी के तीरपर
विष्णुभगवान् का ध्यान करनेलगा इसी अवसर में एक राक्षस भूख से
व्याकुल वहां आनिकला और गालवमुनि को देख बहुत प्रसन्न हुआ
और दौड़कर मुनि को जा पकड़ा गालवमुनि भी अपनी यह दशा देख
पुकारनेलगा कि हे नारायण ! हे करुणासिन्धो ! हे शरणागतपालक !
हे दामोदर ! हे लक्ष्मीकान्त ! हे गरुड़ध्वज ! जिस भांति आपने प्रह्लाद की
रक्षा की और ग्राह से गज को छुटाया उसी भांति इस दुष्टराक्षस से मेरे
प्राण बचाइये इसप्रकार गालवमुनि को भयभीत जान विष्णुभगवान् ने
उसकी रक्षा के लिये सुदर्शनचक्र को आज्ञा दी आज्ञा पातेही अनेक सूर्यों
के समान प्रकाशवान् सुदर्शनचक्र घोरशब्द करता हुआ धर्मपुष्करिणी
के तटपर आया उसको देखतेही वह राक्षस भगा परन्तु सुदर्शन ने उसका
शिर काटदिया गालवमुनि राक्षस को भूमिपर गिरे देख अतिप्रसन्न हो
सुदर्शनचक्र की स्तुति करनेलगा ॥

गालव उवाच ॥ विष्णुचक्र नमस्तेस्तु विश्वरक्षणदी-
क्षित ॥ नारायणकराम्भोजभूषणाय नमोस्तु ते ॥ १ ॥
युद्धेष्वसुरसंहारकुशलाय महारव ॥ सुदर्शन नमस्तुभ्यं
भक्तानामार्तिनाशिने ॥ २ ॥ रक्ष मां भयसंविग्नं सर्वस्मा-
दपि कल्मषात् ॥ ३ ॥

इतनी स्तुतिकर गालवमुनि ने कहा कि; हे विष्णुचक्र ! हे प्रभो !
आप जगत् के कल्याण के अर्थ इस धर्मतीर्थ में विराजमान होयँ यह
गालवमुनि का वचन सुन बड़ी प्रीति से सुदर्शनचक्र बोला कि; हे गा-
! यह धर्मतीर्थ बहुत पुण्यप्रद है इसलिये लोकों के हित के अर्थ मैं

इसमें निवास करूंगा तेरी पीड़ा देख विष्णुभगवान् ने मुझको भेजा मैंने भी शीघ्र आकर तेरी रक्षा की और इस दुष्ट राक्षस को मारा तू विष्णु भगवान् का परमभक्त है अब इस धर्मपुष्करिणी में लोकरक्षा के अर्थ मैं सन्निधान करता हूं मेरे सान्निध्य से तुझको व और भी जीवों को यहां भूत राक्षस आदि की बाधा न होगी यह धर्मपुष्करिणी पूर्वकाल में धर्म ने देवीपत्तनपर्यन्त बनाई है इस सब स्थान में मैं निवास करूंगा और मेरे सान्निध्य से इसका नाम चक्रतीर्थ होगा जो पुरुष भक्ति से इस चक्रतीर्थ में स्नान करेंगे उनके वंश के सब मनुष्य निष्पाप हो विष्णुलोक को जायँगे जो पुरुष यहां पितरों के उद्देश से पिण्डदान करेंगे वे अपने पितरों सहित स्वर्ग में प्राप्त होंगे इतना कह गालवमुनि के और सब मुनियों के देखते २ सुदर्शनचक्र ने धर्मपुष्करिणी में प्रवेश किया इतना कह सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! धर्मतीर्थ का जिस निमित्त चक्रतीर्थ नाम हुआ वह हमने आप को श्रवण कराया चक्रतीर्थ के तुल्य दूसरा तीर्थ न हुआ न होगा इस तीर्थ में स्नान करनेहारे अवश्य मुक्ति पावेंगे जो पुरुष इस अध्याय को भक्ति से पढ़ेंगे अथवा श्रवण करेंगे वे चक्रतीर्थस्नानका फल पावेंगे और इस लोक में सुख भोगकर सद्गति पावेंगे धर्मतीर्थ को समाधि करतेहुये गालवमुनि को और राक्षसों के नाश करनेहारे सुदर्शनचक्र को जो पुरुष स्मरण करेंगे वे सब पापों से छूटेंगे॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांचक्रतीर्थमाहात्म्यगालवाद्भुतकथानकंनामतृतीयोऽध्यायः॥ ३॥

चौथा अध्याय॥

एक राक्षस की कथा जिसने गालवमुनि को पीड़ा दी थी व चक्रतीर्थ का माहात्म्य और चक्रतीर्थसीमा का कथन॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि; हे सूतजी! वह राक्षस कौन था जिसने परमविष्णुभक्त गालवमुनि को पीड़ा दी यह आप कृपाकर वर्णन कीजिये यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! अब हम उसका वर्णन करते हैं जिस भांति मुनियों के शाप से वह राक्षस हुआ पूर्वकाल में कैलास के शिखरपर हालास्य नाम शिवमन्दिर में

वशिष्ठ अत्रि आदि चौबीस हज़ार मुनि ब्रह्मवादी परमशिवभक्त सब अङ्गों
में भस्म धारे रुद्राक्षमाला पहिनें त्रिपुण्ड्र दिये पञ्चाक्षर का जप करते हुये
मुक्ति के लिये हालास्य नामक शिवजी की उपासना करते थे और मथुरा
पुरवासी भी उपासना कररहे थे इसी अवसर में विश्वावसुनाम गन्धर्व का
पुत्र बड़ा कामी अपनी सौ स्त्रियोंसहित नग्न होकर हालास्य के समीप
तीर्थजल में विहार करनेलगा और वशिष्ठ मुनि भी सब मुनियों सहित
मध्याह्नकृत्य करने को शिवमन्दिर से उठ उसी तीर्थपर आये उन मुनी-
श्वरों को देख भय और लज्जा से सब स्त्रियोंने वस्त्र धारण करलिये परन्तु
निर्लज्ज उस दुर्दम नाम गन्धर्व ने वस्त्र न धारे तब क्रोध कर वशिष्ठजी
बोले कि हे निर्लज्ज! तैंने हमको देखकर भी वस्त्र न धारे इसलिये तू रा-
क्षस होजा इतना कह वशिष्ठजी ने उन स्त्रियों से कहा कि हे नारियो!
तुम ने हम को देख लज्जा से वस्त्र धारे इसलिये तुमको शाप नहीं देते
अब तुम स्वर्ग को जावो यह वशिष्ठजी का वचन सुन सब स्त्री हाथ जोड़
नम्र हो प्रार्थना करनेलगीं कि हे ब्रह्मपुत्र! हे सर्वधर्मज्ञ! हे वशिष्ठजी!
आप कृपा करें और इस कोप को शान्त करें स्त्रियों का पतिही भूषण है
चाहे सौ पुत्र भी होयँ परन्तु पतिहीन नारी विधवा ही कहाती है और वि-
धवा होना स्त्री को मरण के तुल्य है इसलिये आप हमारे पति का यह अप-
राध क्षमा करें और इसपर कृपा करें तत्त्वदर्शी मुनि अपराध क्षमा किया
करते हैं इसलिये आप भी इस अपने दासपर क्षमा करें यह स्त्रियों का
वचन सुन प्रसन्न हो वशिष्ठजी बोले कि हे स्त्रियो! हमारा वचन मिथ्या
तो नहीं होसक्ता परन्तु जो हम कहें उसको श्रद्धा से सुनो यह शाप सो-
लह वर्ष पर्यन्त रहे सोलहवर्ष के अनन्तर राक्षस हुआ यह तुम्हारा पति
चक्रतीर्थ पर अपनी इच्छा से जायगा वहां विष्णुभक्त गालव मुनि को
भक्षण करने के लिये ग्रहण करेगा तब विष्णुभगवान् की आज्ञा से सुद-
र्शनचक्र इसका शिर काटेगा तब यह अपना पहिला दिव्यरूप धार स्वर्ग
में जाय आनन्द से तुम्हारे साथ विहार करेगा इसमें कुछ संशय नहीं है
सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना कह वशिष्ठजी तो मुनियों

सहित हालास्यके स्थान को गये और वे स्त्री अपने पति दुर्दम को आलिङ्गन कर दुःख से रोदन करनेलगीं और वह दुर्दम भी उनके देखते २ ही महाभयंकर राक्षस होगया कि बड़ी २ जिसकी दाढ़ लाल रंग के केश दाढ़ी और नेत्र अतिकृष्ण जिसका वर्ण ऐसा उसका रूप देख वे नारी भयभीत हो स्वर्ग को गईं और वह राक्षसरूप दुर्दम भी जीवों को भक्षण करता देश २ और वन २ में विचरनेलगा इसप्रकार सोलह वर्ष बीते तब चक्रतीर्थ पर पहुँचा और गालवमुनि को भक्षण करने दौड़ा गालवमुनि ने विष्णुभगवान् की स्तुति की तब भगवान् की आज्ञा पाय सुदर्शनचक्र ने राक्षस का शिर काटा और गालवमुनि के प्राण बचाये वह दुर्दम भी शिर कटते ही राक्षसदेह छोड़ दिव्यदेह होगया और उत्तम विमान में बैठ हाथ जोड़ प्रणाम कर भक्ति से सुदर्शनचक्र की स्तुति करनेलगा ॥

दुर्दम उवाच ॥ सुदर्शन नमस्तेस्तु विष्णुहस्तैकभूषण ॥ नमस्तेऽसुरसंहर्त्रे सहस्रादित्यवर्चसे ॥ १ ॥ कृपालेशेन भवतस्त्यक्ताहं राक्षसीतनुम् ॥ स्वरूपमभजं विष्णोश्चक्रायुध नमोस्तु ते ॥ २ ॥ त्वन्मनस्को भविष्यामि यावज्जीवं यथा ह्यहम् ॥ तथा कृपां कुरुष्व त्वं मयि चक्र नमोस्तु ते ॥ ३ ॥

इतनी स्तुति कर दुर्दम ने प्रार्थना की कि हे चक्रराज ! अब आप मुझे स्वर्ग जानेकी आज्ञा दीजिये विरह करके पीड़ित मेरी भार्या मेरा स्मरण कररही होगी यह दुर्दम की बिनती सुन सुदर्शनचक्र ने उसको प्रसन्न हो स्वर्ग में जाने की आज्ञा दी दुर्दम आज्ञा पातेही गालवमुनि को प्रणाम कर और उनकी भी आज्ञा ले स्वर्ग को गया दुर्दम के स्वर्ग जाने के अनन्तर गालवमुनि ने फिर सुदर्शनचक्र से प्रार्थना की कि हे चक्रराज ! आपको हम बारम्बार प्रणाम कर प्रार्थना करते हैं कि देवीपत्तन पर्यन्त इस धर्मतीर्थ में आप सन्निधान करें और यहां स्नान करनेहारे पुरुषों के सब पाप दूरकर मोक्ष देवें और यह तीर्थ लोक में चक्रतीर्थ नाम

से प्रसिद्ध होय और यहां के निवासी मुनियों को भूत, प्रेत, पिशाच,
राक्षस आदिकों का कभी भय न होय यह गालव की प्रार्थना अङ्गीकार
कर सुदर्शनचक्र उसी तीर्थ में अन्तर्धान होगया सूतजी कहते हैं कि
हे मुनीश्वरो ! चक्रतीर्थ का माहात्म्य और राक्षस की उत्पत्ति हमने वर्णन
की इसके श्रवण करने से मनुष्यों के सब पाप दूर होजाते हैं शौनक
आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी ! दर्भशयन से देवीपत्तन पर्यन्त आपने
चक्रतीर्थ वर्णन किया वह बीच २ में क्योंकर विच्छिन होगया यह
हमारा सन्देह आप निवृत्त करें यह मुनीश्वरोंका प्रश्न सुन सूतजी कहने
लगे कि हे ऋषीश्वरो ! पूर्वकाल में सब पर्वत उड़ते थे और उड़ते २ जिस
नगर ग्राम आदिके ऊपर गिरते वही चूर्ण होजाता और हजारों मनुष्य पशु
पक्षी आदि मरते ब्राह्मण आदि वर्ण इस उपद्रव से नष्ट होगये और पृथ्वी
पर यज्ञ होने बन्द होगये इससे देवताओंको भी बड़ा क्लेश हुआ तब इन्द्रने
क्रोध कर अपने वज्र से पर्वतोंके पक्ष काटना आरम्भ किया उससमय भय-
भीत हुये पर्वत समुद्र में गिरे और समुद्र की भ्रान्ति से कोई २ चक्रतीर्थ में
भी प्रविष्ट होगये इसी से चक्रतीर्थ बीच २ में विच्छिन्न होगया किनारोंपर
पर्वत न गिरे इसलिये दर्भशयन और देवीपत्तन के समीप तो चक्रतीर्थ
ठीक रहा और बीच में पर्वतों के गिरने से विभक्त अर्थात् बांटागया सूतजी
कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! जिस भांति चक्रतीर्थ बीच में स्थूल होगय
और इन्द्र के पक्ष काटने पर जिस प्रकार पर्व्वत समुद्र में प्रविष्ट हुये यह सब
हमने वर्णन किया अब आप क्या श्रवण किया चाहते हैं ॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांराक्षसार्दितगालवकथानकचक्रतीर्थ-
सीमानिरूपणंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

पांचवां अध्याय ॥

चक्रतीर्थ की प्रशंसा और राजा सहस्रानीक की अद्भुत कथा ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! हम फिर भी चक्रतीर्थ का प्रभाव
करते हैं विधूमनामक वसु और अलम्बुषा नाम अप्सरा ब्रह्माजी के

शाप से मनुष्य होगये और चक्रतीर्थ में स्नान कर शापसे मुक्त हुये इतना सुन मुनियों ने पूछा कि हे सूतजी ! उन दोनों को ब्रह्माजी ने किस अपराध पर शाप दिया और शाप होनेके अनन्तर कहां जन्म लिया किसके पुत्र हुये और उनका शापान्त क्योंकर हुआ यह आप विस्तार से वर्णन करें आप व्यासजी के शिष्य हैं और महाबुद्धिमान् हैं इसलिये कोई वृत्तान्त आप से छिपा नहीं है यह मुनियों का वचन सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! पूर्वकाल में ब्रह्माजी अपनी सभा में विराजमान थे सावित्री और सरस्वती उनके दोनों ओर बैठी थीं सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार, नारद आदि मुनीश्वर सब देवताओं समेत इन्द्र, सूर्य आदि ग्रह, सिद्ध, साध्य, मरुत, किन्नर, वसु आदि सब सेवा में स्थित थे और उर्वशी आदि अप्सरा नृत्य करती थीं इस भांति सत्यलोक के बीच ब्रह्माजी की सभा जम रही थी सब नृत्य देखते थे मृदङ्ग वीणा वंशी आदि के मधुर शब्द सुननेवालों को आनन्द देते थे और गङ्गाजल के कणिका लिये शीतल मन्द सुगन्ध पवन चलताथा एक अप्सरा जब नृत्य से श्रान्त होजाती तब दूसरी नाचनेलगती इसी भांति नाचते २ अतिरूपवती अलम्बुषा नाम अप्सरा सब सभा को मोहित करती हुई नाचनेलगी उस अवसर में वायु से उसका अधोवस्त्र दूर होगया और गुप्तअङ्ग दीखनेलगा तब ब्रह्मादि देवताओं ने लज्जा से आंख मूंदली परन्तु विधूम नाम वसु कामके वश हो उसके गुप्तअङ्ग को देखेगया और प्रसन्नता से उसके नेत्र प्रफुल्ल होगये और शरीर में रोमांच भी हुआ यह उसकी दुर्विनीतपना देख ब्रह्माजी ने शाप दिया कि हे विधूम ! तैंने हमारी सभा में इस अप्सरा पर कुदृष्टि की इसलिये तू मनुष्यलोक में जन्म लेकर मनुष्य हो और यह देवाङ्गना तेरी भार्या होगी वह ब्रह्माजी के मुख से शाप सुनकर विधूम बहुत व्याकुल हुआ और ब्रह्माजी के चरणों पर गिर प्रार्थना करनेलगा कि हे महाराज ! मैं आपके इस दारुण शाप के योग्य नहीं हूं आप कृपाकर मेरा अपराध क्षमा करें और इस घोरशाप से मुझे बचावें इसप्रकार विधूम के अतिदीन वचन सुन ब्रह्माजी के दया आई और कहनेलगे कि हे विधूम ! हमारा वचन

मिथ्या तो नहीं होसक्ता परन्तु पृथ्वीपर जन्म ले चक्रवर्ती राजा होगा और यह तेरी रानी होगी बहुत काल निष्कण्टक राज्यकर इसमें पुत्र उत्पन्न कर उसको राज्य दे दक्षिणसमुद्रके तीरपर फुल्लग्राम के समीप चक्रतीर्थ के बीच इस अपनी भार्यासहित स्नान करेगा तब मनुष्यदेहको त्याग दोनों अपने लोक में प्राप्त होवोगे चक्रतीर्थ में स्नान किये विना यह दारुण शाप निवृत्त न होगा यह ब्रह्माजीका वचन सुन उदास होकर विधूम अपने स्थान में आया और चिन्तन करनेलगा कि मर्त्यलोक में किसके घर जन्म लूं और कौन मेरे माता पिता होयँ यह विचार करते २ निश्चय किया कि कौशाम्बीनगरी में बड़ावीर और धर्मनिष्ठ राजा शतानीकहै और उसकी रानी विष्णुमती बड़ी पतिव्रता है इसलिये उनसेही जन्म लेना चाहिये यह मन में ठान पुष्पदन्त माल्यवान् बलोत्कट नाम अपने तीन सेवकों को बुलाकर कहा कि हे मेरे प्यारे सेवको ! ब्रह्माजी के शाप से शतानीक की रानी विष्णुमती में मैं जन्म लेता हूं तुम सबको विदित रहे यह अपने स्वामी का वचन सुन अतिव्याकुलहो अश्रुपात करतेहुये सेवक बोले कि हे स्वामिन् ! हम तीनों आपका वियोग नहीं सहसक्ते इसलिये हमको भी आप मनुष्यलोक में अपने संग लेचलें शतानीक राजा के मन्त्री युगन्धर के सेनापति विप्रतीप के और शतानीक के नर्मसुहृत् वसन्तक नाम ब्राह्मण के हम तीनों पुत्र होकर आपकी सेवा में रहेंगे यह भृत्यों का वचन सुन विधूम कहनेलगा कि हे मेरे प्रिय सेवको ! मैं तुम्हारा स्नेह भलीभांति जानता हूं परन्तु मनुष्यलोक अतिनिन्द्य है मुझे तो ब्रह्माजी के दारुणशाप से जन्म लेना पड़ा अब तुम भी इस कष्ट में मत पड़ो और थोड़े दिन मेरा वियोग सहो मनुष्यलोक में जन्म लेनेकी कभी इच्छा मत करो यह विधूम का वचनसुन वे फिर बोले कि हे प्रभो ! क्या आपके वियोगसे भी मनुष्यलोक में जन्म लेने से अधिक दुःख है हम आपका वियोग क्षणमात्र भी नहीं सह सक्ते इसलिये आपको हमारा त्याग न करना चाहिये आपके साथ मनुष्यलोक में भी रहनेसे कुछ दुःख नहीं और आपके बिना यह स्वर्ग भी दुःखोंकी खानि देखपड़ता है इस भांति सेवकों का दृढ़ निश्चय देख विधूम ने उनका

वचन अङ्गीकार किया और तीनों को संग ले कौशाम्बीनगरी को चला इस अवसर में चन्द्रवंशभूषण अर्जुन के प्रपौत्र जनमेजय का पुत्र बड़ा प्रतापी बुद्धिमान् प्रजापालन में तत्पर शतानीक नाम कौशाम्बी का राजा था उसका मुख्य मन्त्री युगन्धर नाम था सेनापति विप्रतीक और परमसुहृत् वल्लभ नाम ब्राह्मण था और विष्णुमती नाम रानी सब रानियों में मुख्य और राजा की अतिप्रिया जिस प्रकार विष्णुभगवान् के लक्ष्मी थीं परन्तु राजा के पुत्र न था इसलिये वह दुःखी रहता एक दिन राजा ने अपने मन्त्री युगन्धर को बुलाकर कहा कि मेरे पुत्र क्योंकर उत्पन्न होय इसका विचार करना चाहिये तब युगन्धर मन्त्री ने विचारकर प्रार्थना की कि महाराज शाण्डिल्य नाम मुनि बड़े महात्मा सत्यवादी तपस्वी और दयालु हैं आप उनकी शरण में जायँ विनय से पुत्र की याचना करें तो वे अवश्य ही आपको पुत्र देंगे यह मन्त्री का वचन सुन राजा बहुत प्रसन्न हुआ और मन्त्री को संग ले शाण्डिल्यमुनि के आश्रम में गया और वहां जाय अतितेजस्वी शाण्डिल्यमुनि के चरणों में प्रणाम किया शाण्डिल्यमुनि ने भी राजा का बड़ा सत्कार किया और पाद्य अर्घ्य आदि देकर कहा कि; हे राजन्! आप किस प्रयोजन के लिये हमारे आश्रम में आये हमसे कहो कि हम शीघ्रही तुम्हारा मनोरथ सिद्ध करें यह ऋषिका वचन सुन युगन्धर कहनेलगा कि हे मुनीश्वर! ये महाराज पुत्र न होनेसे दुःखी हैं और अब आपके शरण में आये हैं इसलिये आप इनका यह दुःख दूर करें यह मन्त्री का वचन सुन शाण्डिल्यमुनि ने प्रतिज्ञा की कि हम अवश्य पुत्र देंगे और राजा के साथ कौशाम्बी में आय राजा से पुत्रेष्टि कराई उस इष्टि के प्रभाव से राजा के पुत्र हुआ जिस भांति महाराज दशरथ के घर श्रीरामचन्द्र जन्मे थे उस पुत्र का नाम राजा ने सहस्रानीक रक्खा इस भांति विधूमवसु राजा शतानीक का पुत्र हुआ माल्यवान् युगन्धर का पुत्र हुआ जिसका नाम उसके पिता ने यौगन्धरायण रक्खा पुष्पदन्त विप्रतीक का पुत्र रुमण्वान् नाम हुआ और बलोत्कट वसन्तक का पुत्र वल्लभ नाम हुआ जो राजा सहस्रानीक का परममित्र हुआ राजकुमार के सहित

ये तीनों दिन २ वृद्धि को प्राप्त होनेलगे और पांच २ वर्ष के हुये तब अ-
लम्बुषा नाम अप्सरा भी अयोध्या के राजा कृतवर्मा की पुत्री हो जन्मी
जिसका नाम पिता ने मृगावती रक्खा इस भांति विधूम आदि सब मर्त्य-
लोक में जन्मे इसी अवसर में बड़े पराक्रमी अहिदंष्ट्रनाम दैत्य ने अपने
मित्र स्थूलशिरा को साथ ले बड़ी सेना से स्वर्ग को जा घेरा और देव-
ताओं को पीड़ा देनेलगा और देवता दैत्यों के युद्ध का आरम्भ हुआ तब
इन्द्र ने अपनी सहायता के लिये राजा शतानीक को बुलाया राजा श-
तानीक भी पुत्र को राज्य देकर इन्द्रके रथ में बैठ स्वर्ग में आया और इन्द्र
की आज्ञा से दैत्यों को मारनेलगा और बड़ी वीरता से अहिदंष्ट्र को मारा
परन्तु आप भी उसी युद्ध में काम आया तब इन्द्र ने राजा का शरीर रथ
में रख उसकी राजधानी को भेजा इन्द्र का सारथि मातलि भी राजा के
शरीर को रथ में रख मर्त्यलोक में आया और राजा सहस्रानीक से सब
वृत्तान्त कहा सहस्रानीक ने भी पिता की मृत्यु सुन बड़ा विलाप किया
और सब प्रेतकृत्य किया और शतानीक की रानी विष्णुमती अपने पति
के साथ सती हुई और युगन्धर विप्रतीक और वल्लभ भी थोड़े दिन
के अनन्तर परलोक को सिधारे और राजा सहस्रानीक यौगन्धरायण
आदि मन्त्रियों सहित धर्मराज्य करनेलगा कुछ काल के अनन्तर स्वर्ग
में कुछ उत्सव था वहां इन्द्र ने राजा सहस्रानीकको भी निमन्त्रण दे बुल-
वाया उत्सव के अन्त में इन्द्र ने कहा कि हे राजन् ! तुम विधूम नाम वसु
हो ब्रह्माजी की सभा में अलम्बुषा नाम अप्सरा को वायु करके नग्न हुई
देख तुम कामातुर हुये इसलिये ब्रह्माजी ने तुम को शाप दिया कि मर्त्य-
लोक में जन्मो उसी शाप से तुम मनुष्य हुये और वह अप्सरा अयोध्या के
राजा कृतवर्मा की कन्या हुई वही तुम्हारी रानी होगी बहुतकाल राज्य कर
पुत्र को राज्यपर बैठाय अपनी रानी मृगावती समेत जब दक्षिणसमुद्र के
तट पर फुल्लग्राम के समीप चक्रतीर्थ पर आय स्नान करोगे तब शाप से
मुक्त होगे यह सत्यलोक में ब्रह्माजी ने कहा है यह इन्द्र का वचन सुन
वहां से विदा हो इसी बातको विचारताहुआ राजा सहस्रानीक अपनी

राजधानी को चला मार्ग में तिलोत्तमा नाम अप्सरा प्रीति करके राजा से बोली परन्तु राजा का चित्त और बात में लगरहा था इसलिये तिलोत्तमा को कुछ उत्तर न दिया तब अनादर से लज्जित हो तिलोत्तमा ने शाप दिया कि हे राजन्! मैं तुझ से प्रीति करके बोलती हूं और तू उत्तर नहीं देता सौभाग्यवती और रूपवती स्त्री इतना अनादर नहीं सहती हैं मृगावती का ध्यान करताहुआ मुझ से सम्भाषण नहीं करता इसलिये चौदह वर्ष मृगावती से तेरा वियोग होगा यह तिलोत्तमा का शाप सुन राजा ने कहा कि जो मृगावती प्राप्त होगी तो वियोग भी सहलेंगे इतना कह अपनी राजधानी में आया और मृगावती से विवाह किया विलासरूप वृक्षकी मञ्जरी और विभ्रमरूप समुद्र की लहरी उस मृगावती को पाय राजा बड़े आनन्द को प्राप्त हुआ कुछ काल के अनन्तर रानी मृगावती के गर्भ रहा और अङ्ग पीतवर्ण होगये स्तनों के अग्र कृष्ण होनेलगे मृगावती दोहद की व्यथा में जो २ मनोरथ राजा से कहती सब सिद्ध होता एक दिन रानी ने कहा कि हे महाराज! आज मेरी इच्छा रुधिर की भरी वापी में स्नान करने की है यह रानी का वचन सुन राजा ने कुसुम के रङ्ग से बावली भरवाई और रानी उसमें स्नान करनेलगी रानी के सब अङ्ग लाल होगये इसी अवसर में गरुड़ के वंश का एक पक्षी पर्वत के तुल्य आकाश में उड़ाजाता था उसने रानी को देखा और मांसपिण्ड की भ्रान्ति से चोंच में उठाय लेउड़ा और जब देखा कि यह जीती है तब उदयाचलपर्वत की कन्दरा में रानी को छोड़ आप चलागया थोड़े काल में रानीकी जब मूर्च्छा खुली तो अपने को उस घोर वन में अकेली देख भय से कांपतीहुई और कमलतुल्य नेत्रों से आंसू टपकातीहुई विलाप करनेलगी कि हे नाथ! हे प्रिय! तेरे वियोग करके पीड़ित कहां जाऊं क्या करूं और क्योंकर तुम्हारे दर्शन होवें इस भांति अनेक प्रकार के विलाप कर मरने के लिये कभी तो सिंह के सम्मुख जाती कभी मस्त हाथी के आगे गिरती परन्तु उन्होंने भी उसको न मारा तब फिर विलाप करनेलगी कि आपत्काल में मनुष्य को मरण भी दुर्लभ है उसका अतिकरुणायुक्त विलाप सुन मृगों ने चरन

छोड़दिया और पक्षी उड़ने से बन्द हुये इस अवसर में जमदग्निऋषि का शिष्य उस वन में आया था उसने रानी को देखा और बहुतसा आश्वासन दे उसको अपने साथ आश्रम में लेगया वहां जाय अपने गुरु जमदग्नि मुनि से रानी का सब वृत्तान्त कहा जमदग्निमुनि ने भी रानी का बहुत आश्वासन किया और कहा कि हे पुत्रि! अपने पिता कृतवर्मा के तुल्य मुझे समझ और प्रसन्नता से यहां रह परमेश्वर तेरा सब दुःख दूर करेगा यह मुनि का वचन सुन रानी मृगावती उसी आश्रम में रहनेलगी कुछ काल के अनन्तर रानी के बड़ा तेजस्वी पुत्र जन्मा और मुनियों की पत्नियों ने बड़ी प्रीति से सूतिका के सब नेग जैसे घरमें होने चाहिये किये आकाशवाणी हुई कि उदयाचलमें जन्म लेनेसे इस बालक का नाम उदयन होगा जमदग्निमुनि ने उस बालक के सब संस्कार किये और सब विद्या पढ़ाई और वह बालक तरुण अवस्था को प्राप्त हुआ एक दिन उदयन मृगया खेलने वन में गया था वहां देखा कि एक व्याध सर्प को पकड़ेलाता है उसको देख राजकुमार को दया आई और व्याध से कहा कि रे व्याध! तू इस सर्प को क्यों क्लेश देता है छोड़ दे तू इसका क्या करेगा यह उदयन का वचन सुन व्याध बोला कि हे महाराज! मेरी जीविका इसी से है नगर और ग्रामों में इस को दिखलाने से मुझे धन और अन्न मिलेगा इस लिये मैं इसको छोड़ नहीं सक्ता इतना कह व्याध ने उस सर्प को पिटारी में बांध लिया तब उदयन ने अपने हाथ से सुवर्ण का कङ्कण उतारा जो उसकी माता ने बालअवस्था में पहिनाया था और जिसमें सहस्रानीक का नाम भी खुदा था उस व्याध को दे सर्प को बन्धन से छुड़ाया सर्प भी छूटते ही मनुष्यरूप धर हाथ जोड़ उदयन को प्रणामकर बड़ी प्रीति से अपने साथ नागलोक में लेगया उदयन भी धृतराष्ट्रनाग के पुत्र उस किन्नर नाम नाग के साथ पाताल में जाय पहुँचा वहां धृतराष्ट्रनाग ने अतिसुन्दरी ललिता नाम अपनी कन्या उदयन को विवाह दी उदयन भी अपनी प्रिया के साथ नागलोक में सुख भोगनेलगा कुछ काल में ललिता के गर्भ रहा और पुत्र उत्पन्न हुआ पुत्र होतेही ललिता ने उदयन से कहा

कि हे प्रिय! मैं पूर्वजन्म में सुवर्णी नाम विद्याधरी थी और शाप से नागकन्या हुई अब वह मेरा शाप निवृत्त हुआ इसलिये आप इस अपने पुत्र को लीजिये और मुझे मेरे लोक को जाने की आज्ञा दीजिये इतना कह वह पुत्र और पुष्पमाला जो कभी न कुम्हिलाय और घोषवती नाम एक अतिउत्तम वीणा उदयन को दी और सब के देखते २ ही आकाश को उड़कर चलीगई उदयन भी माला वीणा और अपने पुत्र को ले अपने श्वशुर से बिदा हो बहुत दिन के वियोग से दुःखिनी अपनी माता के समीप को चला और जमदग्निमुनि के आश्रम में पहुँच अपनी माता को प्रसन्न किया और सब वृत्तान्त उससे कहा मृगावती भी अपने पुत्र और पौत्रको देख बहुत प्रसन्न हुई इतने में वह व्याध भी उस सुवर्णकङ्कण को बेचने के लिये कौशाम्बी में पहुँचा और एक वैश्य को दिखाया वैश्य उस जड़ाऊ कड़े को देख और उसपर राजा का नाम खुदाहुआ देख उस व्याध को साथ ले राजा के समीप गया और सब वृत्तान्त निवेदन किया राजा ने भी व्याध से सब वृत्तान्त पूछा और बहुतसा धन दे कङ्कण उससे लेलिया और कङ्कण को अपनी छाती से लगा अनेक प्रकार के विलाप करनेलगा और बहुत काल विलाप कर अपने मन्त्रियों को संग ले व्याध के कहे के अनुसार अपनी रानी मृगावती की प्राप्ति के लिये उदयाचल को चला कुछ मार्ग चलकर विश्राम किया राजा को मृगावती के विरह से निद्रा नहीं आती थी इसलिये वसन्तक ने भांति २ की मनोहर कथा सुनाय राजा के चित्त को प्रसन्न किया और कथा सुनते २ वह रात्रि बिताई प्रभात होतेही वहां से चले कुछ काल के अनन्तर राजा सहस्रानीक अपनी सेनासमेत उदयाचल के बीच जमदग्निमुनि के आश्रम में पहुँचे और मुनि के चरणोंपर भक्ति से प्रणाम किया मुनि ने भी राजा को यथायोग्य आशीर्वाद दिया और पाद्य अर्घ्य आचमन आसन आदि दे यह कहा कि हे राजन्! तुम्हारी मृगावती रानी में यह बड़ा प्रतापी पुत्र उत्पन्न हुआ है जो सब दिशाओं को जीतेगा इसका नाम हमने उदयन रक्खा है और यह उदयन का पुत्र और आपका पौत्र है और यह परमपतिव्रता तुम्हारी

रानी मृगावती है अब इन तीनों को ग्रहण कीजिये इतना कह मुनि ने राजा को तीनों अर्पण किये राजा भी रानी पुत्र और पौत्र को पाय अतिहर्षित हो मुनि से विदा हुआ और कुछ दिनों में कौशाम्बी में आपहुँचा वहां आय राजा ने इन्द्र का वचन स्मरण कर मनुष्यजन्म की निन्दा कर सम्पूर्ण राज्यव्यवहार उदयन को सौंपा उदयन भी भलीभांति प्रजापालन करनेलगा और राजा सहस्रानीक रानी मृगावती यौगन्धरायण वसन्तक रुमरवान् आदि अपने मन्त्रियों को साथ ले शापमुक्ति के लिये दक्षिणसमुद्र के तट पर चक्रतीर्थ में स्नान करने चले और थोड़ेही काल में चक्रतीर्थ पर पहुँचे और तीर्थ में सब ने स्नान किया स्नान करतेही दिव्यदेह धार दिव्य वस्त्र भूषण आदि से भूषित उत्तम विमानों पर चढ़ चक्रतीर्थ की प्रशंसा करतेहुये सबके देखते २ स्वर्ग को गये उस दिन से सब मनुष्यों ने चक्रतीर्थ का प्रभाव जाना और सब भक्ति से स्नान करने लगे उस चक्रतीर्थ में जो भक्ति से स्नान करे वह अवश्यही स्वर्ग को जाय इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! यह विधूम का चरित हमने वर्णन किया इस अध्याय को जो भक्ति से पढ़े अथवा सुने उसके सब मनोरथ सिद्ध होते हैं॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांचक्रतीर्थप्रशंसनशतानीक-
नृपाद्भुतकथानकंनामपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

छठा अध्याय॥

देवीपुर के नाम का कारण और महिषासुर के युद्ध का वर्णन॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे व्यासशिष्य, सूतजी ! आपने पहिले वर्णन किया है कि देवीपत्तनपर्यन्त चक्रतीर्थ है अब आप यह वर्णन करें कि देवीपत्तन कहां है और उस स्थान का नाम देवीपत्तन क्योंकर हुआ और सेतुमूल में तथा चक्रतीर्थ में स्नान करनेवाले मनुष्यों को क्या पुण्य होती है ये सब आप वर्णन करें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! आप सावधान होकर श्रवण करें जो आप ने पूछा उस सबका हम वर्णन करते हैं जिसके सुनने से सब पातक निवृत्त

होजायँ जहां नैमिषारण्य स्थापन कर पहिले रामचन्द्रजी ने सेतु बांधने का आरम्भ किया है वहांहीं देवीपुर है जहांतक चक्रतीर्थ की सीमा है और जिस कारण उस स्थान की देवीपुर संज्ञा हुई वह भी हम वर्णन करते हैं पूर्वकाल में देवता और दैत्यों का युद्ध हुआ उसमें देवताओं ने सब दैत्य मारदिये तब दैत्यों की माता दिति अपनी कन्या से दुःखी हो बोली कि हे पुत्रि! वन में जाकर तप कर और ऐसा पुत्र उत्पन्न कर कि जो इन्द्र आदि देवताओंको जीते यह माता की आज्ञा पाय महिषी का रूप धर दिति की कन्या तप करने के लिये वन को गई और वन में जाय पञ्चाग्नि के मध्य में बैठ ऐसा घोर तप किया कि तीनों लोक कांप उठे और इन्द्र आदि देवता भयभीत होगये तब ब्रह्माजी सुपार्श्वमुनि का रूप धर उस के समीप आये और कहा हे महिषि! तेरे तप से हम बहुत प्रसन्न हुये बड़ा प्रतापी और इन्द्र आदि देवताओं का जीतनेवाला तेरे पुत्र होगा जिसका मुख महिष का और शरीर मनुष्य का होगा वह महिष नाम तेरा पुत्र स्वर्ग को पीड़ा देगा इतना वर दे और उसको तप से निवारण कर सुपार्श्व-मुनिरूपधारी ब्रह्माजी अपने लोक को गये और कुछ काल के अन-न्तर उसके पुत्र भी उत्पन्न हुआ और प्रतिदिन बढ़नेलगा जब वह तरुण हुआ तब विप्रचित्ति का पुत्र विद्युन्माली नाम दैत्य बहुत से दैत्यों को संग ले महिषासुर के समीप आया और कहनेलगा कि हे महिष! पहिले स्वर्ग में हमाराही राज्य था पीछे विष्णु के सहाय से देवताओं ने हमारा राज्य छीनलिया अब तू अपना पराक्रम प्रकट कर और इन्द्र को मार स्वर्ग का राज्य फिर ले ब्रह्माजी के वर से कोई तुझे न जीतसकेगा यह विद्युन्माली का वचन सुन सब दैत्यों को संग ले महिषासुर अमरावती नगरी पर चढ़ा और जाय देवताओं से युद्ध करनेलगा सौ वर्षतक घोर युद्ध हुआ अन्त में इन्द्र आदि देवता हारे और युद्ध से भागकर ब्रह्माजी की शरण में पहुँचे ब्रह्माजी उन सब देवताओं को साथ ले वहां गये जहां शिवजी और विष्णुजी थे वहां जाय नमस्कार कर ब्रह्माजी ने शिवजी और विष्णुजी की स्तुति की और महिषासुर का सब वृत्तान्त कहा कि इन्द्र,

अग्नि, यम, कुबेर, वरुण आदि सब देवताओं के अधिकार महिष ने छीन लिये और सब देवता स्वर्ग से निकाल दिये अब मनुष्यों की भांति देवता भूमिपर घूमते हैं यह वृत्तान्त आपको विदित करने के लिये हम आये हैं इसमें जो उचित होय वह कीजिये यह ब्रह्माजी का वचन सुन शिवजी ने और विष्णुजी ने बड़ा क्रोध किया और उनके मुख क्रोध से प्रज्वलित अतिभयंकर होगये तब विष्णुजी शिवजी और ब्रह्माजी के मुख से तेज निकला और इन्द्र आदि देवताओं के शरीर से भी तेज निकला वह सब तेज एकत्र हुआ और जलते हुये पर्वत की भांति अपनी ज्वालाओं से दिशाओं को व्याप्त करनेलगा और सब देवताओं के देखते २ क्षणमात्र में वह तेज एक अतिसुन्दरी स्त्री होगया शिवजी के तेज से उस का मुख विष्णु के तेज से भुजा ब्रह्मतेज से चरण इन्द्र के तेज से मध्य-भाग यम के तेज से केश चन्द्र के तेज से कुच वरुण के तेज से जंघा और ऊरु पृथ्वी के तेज से नितम्ब सूर्य के तेज से पैरों की अंगुली वसुवों के तेज से हाथों की अंगुली कुबेर के तेज से नासिका प्रजापतियों के तेज से दन्तपंक्ति अग्नि के तेज से नेत्र सन्ध्याओं के तेज से भ्रू वायु के तेज से कर्ण इस भांति सब देवताओं के तेज से उस भगवती दुर्गा के सब अङ्ग बनगये सबके तेज से उत्पन्न भगवती के रूप को देख महिषासुरके सतायेहुये सब देवता बहुत प्रसन्न हुये और शिव विष्णु आदि देवताओंने अपने २ आयुधों से उत्पन्नकर शूल चक्रआदि आयुध दिये और भांति २ के भूषण, वस्त्र, माला, चन्दन आदि सब देवताओं ने दिये भगवती भी उत्तम वस्त्र, भूषण, माला आदि से भूषित हो सब शस्त्र धार अट्टहास और भयंकर शब्द करनेलगी जिसशब्द से तीनों लोक कांप उठे सिंह के ऊपर चढ़ीहुई भगवतीकी सब देवता मुनि गन्धर्व आदि स्तुति करनेलगे भगवती के गर्जने को सुनकर महिषासुर ने बड़ा क्रोध किया और अपनी सेना साथ ले उस शब्द के अनुसार वहां पहुँचा जहां सब देवताओं करके सेवित जगदम्बा विराजमानथी महिषासुर ने देखा कि अनन्त भुजाओं करके युक्त एक परमसुन्दरी स्त्री सब शस्त्र धारे सिंहपर चढ़ीहुई खड़ी है जिसके तेज से

सब जगत् व्याप्त होरहा है यह रूप भगवती का देख सब दैत्योंसमेत महिषासुर युद्ध करनेलगा अस्त्र, शस्त्र, चक्र, गदा, खड्ग, बाण, मुशल आदि की वृष्टि होनेलगी हाथी, घोड़े, रथ आदि करके युक्त महिषासुर युद्ध करने लगा महिषासुर की सेना में कई करोड़ प्रधान दैत्य थे और उनमें एक २ के साथ इतनी सेना थी कि जिसकी गिन्ती नहीं होसक्ती वे सब दैत्य एकबारही भगवती पर शस्त्रों की वर्षा करनेलगे परन्तु भगवती अपने बाणों करके उनके शस्त्रों को अनायास से काटदेती थी और भगवती के आश्रय से सब देवता भी निर्भय हो दैत्यों के साथ युद्ध करते थे भगवती की शक्ति पाकर देवताओं ने महिषासुर की सब सेना का संहार कर दिया तब महिषासुर क्रोध कर देवताओं को बाण मारनेलगा इन्द्र को दशहज़ार बाण यमराज को पांचहज़ार वरुण को आठहज़ार और कुबेरको छहहज़ार बाण मारके सूर्य, चन्द्र, अग्नि, वसु, वायु आदि देवताओं के शरीरों में भी महिषासुर ने बाण मारे तब देवता भयभीत हो युद्ध से भगे और त्राहि २ कहते भगवती की शरण में आये तब भगवती ने अपने गण भूत बेताल आदि को आज्ञा दी कि तुम महिषासुर की सेना को मारो जो बची है और मैं महिषासुर के साथ युद्ध करती हूं यह भगवती की आज्ञा पातेही गणों ने महिषासुर की सेना का संहार किया तब महानाद, सुचक्षु, महाहनु, महाचण्ड, महाभक्ष, महोदर, महोत्कट, पञ्चास्य, पादचूड़, बहुनेत्र, प्रबाहुक, एकाक्ष, एकपाद, बहुपाद, अपाद आदि अपने बड़े २ वीर मन्त्रियोंसमेत महिषासुर भगवती के साथ बड़े कोप से युद्ध करनेलगा तब सिंह पर चढ़ीहुई भगवती भी धनुष का भयंकर शब्द कर बाणों की वर्षा करनेलगी दशलाख हाथी एककरोड़ घोड़े दशकरोड़ रथ और एक अर्व पयादों करके युक्त महाहनु नाम दैत्य को क्षणमात्र में भगवती ने मार गिराया और भी महिषासुर के सब मन्त्री इतनी २ ही सेना करके युक्त थे परन्तु एक पहर में भगवती ने सबका संहार किया यह देख सब देवताओं को बड़ा आश्चर्य हुआ ॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांदेवीपुरकारणकमहिषासुरयुद्धनिरूपणं नामषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

सातवां अध्याय॥

महिषासुर के संहार का वर्णन॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस भांति भगवती से कियेहुये सेनासंहार को देख बड़े कोप से चण्डकोप नाम अपने मन्त्री से महिषासुर कहनेलगा कि हे चण्डकोप! इस दुष्टा स्त्री से तू युद्ध कर यह अपने प्रभु की आज्ञा पाय चण्डकोप भगवती को बाण मारनेलगा परन्तु उसके बाणों को भगवती लीला से ही काटदेती थी और अपने बाणों से चण्ड-कोप के घोड़े, ध्वजा, धनुष्, रथ और सारथि छेदन करदिये तब चण्डकोप खड्ग और चर्म अर्थात् ढाल लेकर भगवती से युद्ध करनेलगा पहिले एक खड्ग का प्रहार सिंह पर किया पीछे भगवती की बांई भुजा पर खड्ग चलाया परन्तु भगवती की भुजा पर लगतेही उस खड्ग के हजारों टुकड़े होगये तब त्रिशूल उठाय भगवती ने चण्डकोप की छाती में मारा जिससे वह गिरा और मरगया फिर हाथी पर चढ़ाहुआ चित्रभानु नाम दैत्य युद्ध करने आया और घण्टाओं करके भूषित अतिभयंकर बर्छी उसने भगवती पर चलाई परन्तु उस बर्छी को अपने हुंकारशब्द से निवारण कर एक त्रिशूल का प्रहार भगवती ने चित्रभानु के हृदय में ऐसा किया कि वह हाथी से गिरा और मृत हुआ उसके मरने पर और भी कई प्रधान दैत्य युद्ध करने आये उनमें कराल को भगवती ने अपनी मुष्टि के प्रहार से गिराया मदोन्मत्त को गदा से मारा बाष्कलि को पट्टिश से संहार किया और अन्धक को चक्र करके यमलोक को भेजा इस भांति और भी महिषासुर के मन्त्री त्रिशूल से मारे तब महिषासुर महिष का रूप धार भगवती के गणों को त्रास देनेलगा कई गणों को अपने मुख से कइयों को सींग और खुरों से मारा और कितनेही गण अपनी श्वास के पवन से उड़ादिये इसप्रकार गणों का संहार कर भगवती के वाहन सिंह को मारने चला उसको आते देख सिंह ने भी कोप कर नखों से उसको विदारण किया और भगवती ने भी महिष के मारने का विचार किया और उस को

पाश से बांधा परन्तु वह पाश से निकलगया और सिंह का रूप धार गर्जने लगा जबतक भगवती उसका शिर काटा चाहें इतनेही में वह खड्ग हाथ में लिये पुरुष होगया भगवती उस पुरुषको अपने तीक्ष्ण बाणों करके विदारण करने लगी तब वह बड़े २ दांतों करके शोभित पर्वत के समान ऊंचा एक मस्त हाथी बनगया और अपनी सूंड़ से सिंह को खींचनेलगा सिंह ने उसकी सूंड़ को अपने तीखे नखों से भेदन किया तब फिर वह महिषरूप हुआ और युद्ध करनेलगा तब भगवती ने मधुपान किया जिससे लालनेत्र होगये और अट्टहास किया और महिषासुर भी अपने सींगों से बड़े २ पहाड़ उठाय भगवती पर फेंकनेलगा उन पर्वतों को अपने बाणों से काट भगवती ने महिषासुर से कहा कि रे मूढ़! मैं मधुपान करूं तबतक तू गर्ज ले पान करके तुझे मैं यमलोक को भेजतीहूं और तेरे मारेजाने पर सब देवता अपना २ अधिकार पावेंगे इतना कह जगदम्बा ने मधुपान कर एक मूका महिषासुर के ऐसा मारा कि वह व्याकुल होकर भगा भगवती उसके पीछे लगी परन्तु महिषासुर दक्षिण समुद्र के तटपर जाय दशयोजन लम्बी चौड़ी धर्मपुष्करिणी के जल में जगदम्बा के भय से गुप्त होगया और भगवती ने उसको वहां न देखा तब आकाशवाणी हुई कि हे महादेवि! तुम्हारे भय से वह दुष्ट दैत्य धर्मपुष्करिणी के जल में छिपगया है इसको किसी उपाय से मारो यह आकाशवाणी सुन जगदम्बा ने अपने वाहन को आज्ञा दी कि हे मृगेन्द्र! तू इस धर्मपुष्करिणी के सम्पूर्ण जल को पान करजा यह आज्ञा पातेही सिंह सब जल को पीगया और भयभीत हुआ महिषासुर उससे निकला तब भगवती ने अपना चरण महिष के मस्तकपर रख त्रिशूल से उसके कण्ठ को भेदन किया और खड्ग से उसका शिर काटदिया इस भांति उस दैत्य को दुर्गा ने मारा सब देवता ऋषि गन्धर्व सिद्ध आदि भगवती की स्तुति करनेलगे फिर भगवती ने देवताओं को अपने २ अधिकार दिये और दक्षिणसमुद्र के तटपर अपने नाम से नगर बसाया वही देवीपुर हुआ जगदम्बा की आज्ञा से धर्मपुष्करिणी को देवताओं ने अमृत से

भरदिया और भगवती ने पुर को यह वर दिया कि इस नगर में रोग का भय न होगा और यहां के पशु हृष्ट पुष्ट रहेंगे और धर्मपुष्करिणी को भी वर दिया कि इसमें जे पुरुष स्नान करेंगे उनके सब मनोरथ सिद्ध होंगे इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! देवी ने बसाया इसलिये उस नगर का नाम देवीपत्तन हुआ गणेशजी का पूजन कर और तिलकस्वामी को प्रणाम कर शिवजी की आज्ञा पाय देवीपत्तन के समीप नवशिला रामचन्द्रजी ने सेतुकी अपने हाथसे स्थापना की फिर रामचन्द्र जी तो सिंहासन पर बैठे देखतेरहे और वानरों ने सेतु बांधा पर्वत, वृक्ष, पत्थर, काष्ठ, तृण आदि तो सब वानर लाये और नल ने सेतु बांधा देवी-पत्तन से लङ्कातक सौयोजन लम्बा और दशयोजन चौड़ा सेतु पांचदिन में पूरा हुआ देवीपुर के निकट नवपाषाणों के समीप सब पाप निवृत्त होने के लिये स्नान करे पीछे चक्रतीर्थ में स्नान कर सेतु के अधिपति भगवान् का दर्शन करे देवीपत्तन से सेतु का आरम्भ हुआ इसलिये देवीपुर सेतु-मूल कहाया सेतु का पश्चिमअग्र दर्भशय्या और पूर्वअग्र देवीपत्तन है ये दोनों स्थान सेतुमूल हैं जिनके दर्शनसे सब पाप निवृत्त होते हैं सेतुमूल में स्नान कर चक्रतीर्थ में स्नान करे पीछे संकल्प कर सेतुबन्धन को जाय देवीपुर दर्भशय्या और चक्रतीर्थ में स्नान करने से सब पातक दूर होते हैं और पुण्य की वृद्धि होती है चक्रतीर्थ के स्मरण से भी सब पाप निवृत्त होते हैं जन्म मरण से मनुष्य छूटता है और मुक्ति भी अनायास से मिलती है चक्रतीर्थ के तुल्य तीर्थ न हुआ न होगा भूलोक में जितने गङ्गादि तीर्थ हैं वे चक्रतीर्थ की सोलहवीं कला की भी तुलना नहीं करसके पहिले नवपाषाण के समीप समुद्र में स्नान कर चक्रतीर्थ में जाय तीर्थश्राद्ध करे और सब पाप निवृत्त होने के लिये सेतुनाथ भगवान् का सेवन करे इसी भांति दर्भशय्या में भी पिण्डदान आदि करे नल के बनाये सिंहासन को जिसपर रामचन्द्र बैठे थे जो मनुष्य प्रणाम करें उनको नरक का भय नहीं होता रामचन्द्रजी का ध्यान करताहुआ सेतुका दर्शन करे और ये मन्त्र पढ़े॥

रघुवीरपदन्यासपवित्रीकृतपांशवे॥ दशकण्ठशिरश्छेदहेतवे सेतवे नमः॥ १ ॥ केतवे रामचन्द्रस्य मोक्षमार्गैकसेतवे ॥ सीताया मानसाम्भोजभानवे सेतवे नमः ॥ २ ॥

ये मन्त्र पढ़ सेतु को साष्टाङ्ग प्रणाम कर वेतालवरद नाम तीर्थ को जाय इस अध्याय को जो पुरुष भक्ति से पढ़े अथवा श्रवण करे उसको स्वर्ग आदि दुर्लभ नहीं और मुक्ति भी हाथपर हो रक्खी है ॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांमहिषासुरवधोनामसप्तमोऽध्यायः॥ ७ ॥

आठवां अध्याय ॥

वेतालवरदतीर्थ का माहात्म्य और दो विद्याधरकुमारों की अद्भुतकथा ॥

शौनकादि ऋषि कहते हैं कि हे सूतजी! आपके वचनरूप अमृतपान करते २ हमको तृप्ति नहीं होती इसलिये और भी अतिमधुर कथा आप वर्णन करें आपने पहिले कहा था कि चक्रतीर्थ के दक्षिणभाग में वेतालवरद नाम तीर्थ है अब आप उस तीर्थ का प्रभाव और वेतालवरद नाम का कारण वर्णन कीजिये यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! आपने अतिगुप्त बात पूछी इसका हम वर्णन करते हैं इस कथा के श्रवण करने से पामर पुरुष भी आनन्द को प्राप्त होते हैं पूर्वकाल में यह कथा कैलासपर्वत के बीच एकान्त में शिवजी ने पार्वतीजी को सुनाई है उसी अतिअद्भुत कथा को हम वर्णन करते हैं पूर्वकाल में अपने आश्रम के बीच गालवमुनि तप करते थे और उनकी कान्तिमती नाम परमसुन्दरी कन्या उनकी सेवा करती पूजन के लिये पुष्प हवन के लिये समिधा वन से लाती और नित्य वेदी का मार्जन आदि करती एक दिन कान्तिमती उत्तम पुष्प लेने के अर्थ दूर वन में गई वहां से पुष्प लेकर आश्रम को चलीआती थी उसको सुदर्शन और सुकर्ण नाम दो विद्याधरकुमारों ने देखा जो विमान में बैठे आकाशमार्ग में चले जाते थे रूप और यौवन करके युक्त मानो साक्षात् कामदेवकी पत्नी रतिही होय ऐसी गालवमुनि की कन्या को देख काम करके पीड़ित सुदर्शन उसके

साथ रति की इच्छा से विमान से उतरपड़ा और उस चन्द्रमुखी को देख प्रसन्न होताहुआ समीप जाय बड़ी प्रीति से पूछनेलगा कि हे भद्रे ! तू कौन है और किसकी पुत्री है तेरा यह परमसुन्दर रूप मेरे मन को बहुत आह्लाद देता है और तुझे देख कामदेव भी मुझे सताता है सुकण्ठ नाम विद्याधरराज का मैं सुदर्शन नाम पुत्र हूं तू मेरे ऊपर कृपादृष्टि कर मैं तेरा दास हूं तू भी मुझ सरीखे पतिको पाय उत्तम २ भोग भोगेगी यह सुदर्शन का वाक्य सुन कान्तिमती कहने लगी हे महाभाग, विद्याधरकुमार ! मैं गालवमुनि की कन्या कान्तिमती हूं और मेरा विवाह नहीं हुआ है पिता की सेवा करती हूं आज भी पुष्प लेने आई थी एक प्रहर मुझे आये होगया इसलिये पिता मुझपर क्रोध करेगा अब मैं पुष्प लेकर पिता के समीप जाती हूं कन्या पिता के अधीन होती है स्वतन्त्र नहीं होती जो तुझको मेरी इच्छा होय तो मेरे पिता से मेरी याचना कर इतना सुदर्शन से कहकर कान्तिमती अपने आश्रम को चली परन्तु सुदर्शन काम के वश होरहा था उसने दौड़कर कान्तिमती के केश पकड़लिये केश पकड़तेही कान्तिमती पुकारी कि हे पितः ! शीघ्र मेरी रक्षा करो यह दुष्ट विद्याधरकुमार बल से मुझे पकड़ता है यह शब्द सुनतेही गन्धमादन पर्वत के वासी सब मुनियोंसमेत गालवमुनि वहां दौड़ेआये और देखा कि एक विद्याधरकुमार ने कान्तिमती को पकड़रक्खा है और दूसरा उसके पास खड़ा है यह देखतेही महायोगी गालवमुनि क्रोध से जल उठे और शाप दिया कि रे अधम, सुदर्शन ! तैंने यह निन्द्य काम किया इसलिये मनुष्ययोनि में जन्म ले और इस पाप का फल भोग और थोड़े काल मनुष्य रहकर तू वेताल होजायगा और मांस रुधिर आदि बुरे पदार्थ खाता फिरेगा राक्षस वेताल आदिकही पराई कन्या को हठ से पकड़ते हैं इसलिये तू भी मनुष्य होकर वेताल होजायगा और यह तेरा छोटा भाई सुकर्ण भी इस कुकर्म का साक्षी है इसलिये यह भी मनुष्य होगा परन्तु इस ने साक्षात् कुछ पाप नहीं किया केवल तेरा अनुमोदनही किया है इसलिये मनुष्यही रहेगा वेताल न होगा और विज्ञप्तिकौतुक नाम विद्याधर गुरु

को जब देखेगा तभी शाप से मुक्त होजायगा और तैंने यह महापापकर्म किया इसलिये मनुष्य होगा और उसी जन्म में वेताल होकर बहुत काल लोक में विचरेगा यह शाप उन विद्याधरकुमारों को देकर अपनी कन्या को साथ ले गालवमुनि सब मुनियोंसमेत आश्रम को गये मुनि के जाने के अनन्तर अतिव्याकुल हो सुदर्शन और सुकर्ण ने विचारकर यह निश्चय किया कि यमुनातटनिवासी गोविन्दस्वामी नाम ब्राह्मण बहुत उत्तम हैं उनकेही पुत्र होना चाहिये यह मन में ठान दोनों ने गोविन्दस्वामी के घर जन्म लिया गोविन्दस्वामी ने बड़े पुत्र का नाम विजयदत्त और छोटे का नाम अशोकदत्त रक्खा वे दोनों कुछ काल में तरुण हुये इसी अवसर में बारह वर्ष वृष्टि न होने से अतिदुर्भिक्ष पड़ा तब गोविन्दस्वामी अपने नगर को छोड़ स्त्रीपुत्रों को साथ ले कालक्षेप करने के लिये काशी को चला कुछ दिनों में प्रयाग में पहुँचा और अक्षयवट का दर्शन किया और एक सन्न्यासी को गोविन्दस्वामी ने देखा जो कपालमाला पहिने था मानो साक्षात् शिवही होय उसको गोविन्दस्वामी ने प्रणाम किया सन्न्यासी ने भी आशीर्वाद देकर गोविन्दस्वामी से कहा कि हे ब्राह्मण ! तेरे इस बड़े पुत्र विजयदत्त से तेरा वियोग होगा इतना कह सन्न्यासी तो चलेगये और गोविन्दस्वामी चित्त में खिन्न हुआ इतने में सूर्य अस्त हुआ तब गोविन्दस्वामी ने सन्ध्याआदि कर रात्रि बिताने के लिये एक पुराने शून्य देवालय में अपने स्त्री पुत्रों समेत प्रवेश किया वे सब मार्ग के परिश्रम से थकरहे थे इसलिये ब्राह्मणी और अशोकदत्त तो निद्रावश होकर सोगये और विजयदत्त को मार्ग के खेद से शीत लगकर ज्वर चढ़ आया गोविन्दस्वामी ने विजयदत्त को बहुत से वस्त्र उढ़ाये और ऊपर से दबाया परन्तु उसका शीत न उतरा गोविन्दस्वामी से विजयदत्त ने कहा कि हे पितः ! मुझे शीत बहुत पीड़ा देरहा है इसलिये कहीं से अग्नि लावो तब गोविन्दस्वामी अग्नि लेने गया परन्तु कहीं अग्नि न मिला तब आकर पुत्र से कहा कि इस अर्धरात्र के समय सब सोते हैं सबके द्वार बन्द हैं मैंने बहुत यत्न किया परन्तु कहीं अग्नि नहीं मिलता तब विजयदत्त

फिर दीनवचन बोला कि हे पितः! मुझे बहुत शीत लगता है और शीतल पवन चलरहा है किसी भांति मुझे चैन नहीं पड़ता और आपने मिथ्या ही कहदिया कि कहीं अग्नि नहीं मिलता देखो सम्मुख कैसा प्रचण्ड अग्नि जल रहा है जिसकी ज्वाला आकाश तक उठती है आप जाकर वहां से अग्नि ले आवें यह विजयदत्त का वचन सुन गोविन्दस्वामी बोले कि हे पुत्र! मैं कभी मिथ्या नहीं बोलता इस समय अग्नि कहीं नहीं मिलता यह सामने श्मशान है उसके बीच चिता जलरही है वही अग्नि देख पड़ता है इस अग्निसेवन से आयुष् का क्षय होता है इसलिये इस अपवित्र और अमङ्गल अग्नि को मैं नहीं लाया तुझे इस अग्नि का स्पर्शकरना योग्य नहीं यह सुन विजयदत्त फिर व्याकुल हो बोला कि हे पितः! चाहे यह चिता का अग्नि हो चाहे यज्ञ का आप शीघ्र लाइये नहीं तो मेरे प्राण जाते हैं यह पुत्र का वचन सुन स्नेहवश हो गोविन्द-स्वामी श्मशान में अग्नि लेने चला तब विजयदत्त भी उठकर उसके पीछे २ चलदिया वहां जाय चिताग्नि से अपने शरीर को सेंका और कुछ शीत-बाधा निवृत्त हुई तब विजयदत्त बोला कि हे पितः! चिता के बीच यह गोल २ कमलसा क्या पदार्थ जलरहा है मुझे बतावो तब गोविन्दस्वामी ने कहा कि हे पुत्र! मज्जा से भरा यह मनुष्य का कपाल जलरहा है यह सुन विजयदत्त ने एक लकड़ी से उसको फोड़दिया तब उसमें से मज्जा उछलकर विजयदत्त के मुख में गिरी उसके मुख में गिरतेही वह अति-भयंकर वेताल होगया और घोर शब्द करनेलगा कि जिससे आकाश और भूमि मानो फटजायँ और कपाल को चिता से निकाल सब मज्जा चाट गया और अपने पिता को भी भक्षण करने दौड़ा तब आकाशवाणी हुई कि अरे तू यह साहस मत कर तब वह अपने पिता को छोड़ आकाश को उड़गया और वेतालों के समूह में जामिला वे वेताल उसको देख बोले कि कपाल के फोड़ने से यह वेताल हुआ इसलिये इसका नाम कपाल-स्फोट है यह उसका नाम रख सब वेताल उसको अपने राजा नरास्थिभूषण के पास लेगये नरास्थिभूषण देखकर बहुत प्रसन्न हुआ और कपालस्फोट को

अपना सेनापति बनाया कुछ काल के अनन्तर चित्रसेन गन्धर्व से राजा नरास्थिभूषण का युद्ध हुआ उसमें नरास्थिभूषण मारागया तब सब वेतालों ने मिलकर कपालस्फोट को अपना राजा बनाया इस भांति विद्याधरेन्द्र का पुत्र मुनिशाप से मनुष्य हुआ मनुष्य से वेताल और वेताल से वेतालों का राजा बनगया और सुख से राज्य करनेलगा ॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्येभाषाव्याख्यायांवेतालवरदतीर्थमाहात्म्यविद्याधरकुमारद्वयाद्भुतकथानकंनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

नववां अध्याय ॥

वेतालवरदतीर्थ की प्रशंसा और दोनों विद्याधरकुमारों का शापमोक्ष ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! प्रभात होतेही अपनी स्त्री और पुत्रसमेत गोविन्दस्वामी विलाप करनेलगा उसको विलाप करते देख समुद्रदत्त नाम एक वैश्य दया कर अपने घर को लेआया और गोविन्द-स्वामी को बहुत आश्वासनकर अपने धन की रक्षा का अधिकार उसे दिया गोविन्दस्वामी भी अपने पुत्र विजयदत्त के फिर मिलने की आशा से वैश्य के घर में कालक्षेप करनेलगा गोविन्दस्वामी का छोटा पुत्र अशोक-दत्त शास्त्र में और शस्त्रविद्या में बड़ा विचक्षण हुआ और २ भी विद्याओं में उसने इतना अभ्यास किया कि उसके तुल्य विद्वान् और कोई भूमण्डल में न निकले और सब नगर में प्रसिद्ध होगया इसी अवसर में काशी के राजा प्रतापमुकुट के समीप एक बड़ा बलवान् मल्ल देशान्तर से आया उसके साथ काशी के किसी मल्ल ने लड़ना अङ्गीकार न किया तब राजा ने गोविन्दस्वामी के पुत्र अशोकदत्त को बुलवाया अशोकदत्त भी राजा की आज्ञा से सभा में आया तब राजा ने कहा कि हे अशोकदत्त ! तू सब बलवान् पुरुषों में अधिक बली है इसलिये इस दुर्जय मल्ल को जीत दक्षिण देश के सब मल्लों का यह स्वामी है यदि तू इसको जीतेगा तो जो मांगेगा वही मुझ से पावेगा यह राजा का वचन सुन प्रसन्न हो अशोक-दत्त उस दक्षिणी मल्ल के साथ युद्ध करनेलगा अशोकदत्त ने उसको नीचे गिराकर ऐसा दबाया कि उसकी पुतली फिरगई और प्राण मुक्त हुये

यह दुष्कर कर्म देख राजा बहुत प्रसन्न हुआ और बहुत से धन ग्राम आदि देकर अशोकदत्त को प्रसन्न किया और सदा उसको अपने समीप रखने लगा एक दिन सायंकाल के समय राजा अशोकदत्त को साथ लेकर एकान्त में विचरने गया वहां अकस्मात् एक ओर से यह शब्द हुआ कि हे राजन्! मुझे विना अपराध नगर के दण्डपाल ने मेरे शत्रु की प्रेरणा से शूली पर चढ़ा दिया आज चार दिन हुये पूर्वजन्म के पाप से मेरे प्राण नहीं निकलते और इस समय मुझे तृषा बहुत पीड़ा देती है आप जल पिलावो यह दीनवचन सुन राजा ने अशोकदत्त को आज्ञा दी कि तू इस निरपराध मनुष्य को जल पिलाय आ यह राजा का वचन सुन जल का कलश भर उस श्मशान में अशोकदत्त गया जहां से वह शब्द सुना था वहां जाकर देखा कि एक परमसुन्दरी स्त्री सब भूषणों से भूषित खड़ी है उससे अशोकदत्त ने पूछा कि हे भद्रे! तू कौन है और इस भयंकर श्मशान में रात्रि के समय इस शूलीपर चढ़ाये हुये पुरुष के नीचे क्यों खड़ी है तब वह स्त्री बोली कि हे महात्मन्! इस शूलपर मेरे पति को राजा ने चढ़ा दिया कृपणपुरुष जिस भांति धन नहीं त्यागे इस भांति यह प्राण नहीं त्यागता मैं इसके साथ सती होने के लिये यहां आई हूं अब यह तृषा से पुकारता है परन्तु मैं शूल के ऊपर नहीं पहुँच सकी कि इसके मुख में जल डालूं शूल बहुत ऊंचा है यह स्त्री का वचन सुन अशोकदत्त ने कहा कि हे मातः! तू मेरी पीठ पर चढ़कर इसको ठंढा जल पिलादे इतना कह अशोकदत्त शूल के नीचे झुकगया और वह नारी भी झटपट उसके ऊपर चढ़ गई थोड़े काल में अशोकदत्त के ऊपर रुधिर गिरा तब उसने ऊपर को दृष्टि की तो देखा कि वह स्त्री उस पुरुष के मांस को खाती है अशोकदत्त ने उस स्त्री का पैर पकड़ा परन्तु वह पैर को छुटाय आकाश को उड़गई और एक जड़ाऊ नूपुर अर्थात् पाजेब अशोकदत्त के हाथ में रहगया उस नूपुर को लेकर अशोकदत्त राजा के समीप आया और सम्पूर्ण वृत्तान्त राजा को सुनाय वह नूपुर दिया राजा अशोकदत्त का धैर्य देख बहुत प्रसन्न हुआ और उस वीर को अपनी मदनलेखा नाम परमसुन्दरी कन्या ब्याह दी

अशोकदत्त भी आनन्द से रहनेलगा एक दिन राजा उस दिव्यनूपुर को देख बोला कि ऐसा दूसरा नूपुर कहां से मिले यह राजा के वचन सुन अशोकदत्त ने मन में विचार किया कि श्मशान में यह नूपुर मिला था अब वह स्त्री फिर कहां मिले कि दूसरा नूपुर भी प्राप्त होय इस भांति अनेक प्रकार के विचारकर अशोकदत्त ने निश्चय किया कि श्मशान में जाय महामांस विक्रय करूं तब सब भूत प्रेत पिशाच आदि मन्त्र के बल से आजायँगे उनमें वह राक्षसी भी अवश्य आवेगी तब बल से उसका दूसरा नूपुर भी लूंगा हज़ारों भूत प्रेत भी मेरा कुछ नहीं करसक्के यह मन में ठान महामांस अर्थात् मनुष्यमांस ले रात्रिके समय श्मशान में गया और मन्त्र पढ़ यह पुकारनेलगा कि मैं महामांस बेचता हूं जिसकी इच्छा होय वह लेवे यह शब्द सुनतेही अतिहर्षित हो चारो ओर से किलकिलाते हुये भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस, कंकाल, वेताल आय इकट्ठे हुये इतने में महामांस की इच्छा से बहुतसी राक्षसकन्याओं करके युक्त वह राक्षसी भी वहां आय पहुँची और अशोकदत्त ने भी उसको पहिंचाना उस राक्षसी ने पूछा कि महामांस का क्या मोल होगा तब अशोकदत्त ने कहा कि दूसरा नूपुर राक्षसी बोली कि मैं तेरे धैर्य पर बहुत प्रसन्न हूं इसलिये दूसरा नूपुर और अपनी कन्या भी तुझे देती हूं महामांस की मुझे कुछ आकांक्षा नहीं इतना कह उस विद्युत्केशी नाम राक्षसी ने अपनी रूप यौवन करके युक्त विद्युत्प्रभा नाम कन्या अशोकदत्त को विवाह दी और वह नूपुर देकर एक सुवर्ण का कमल भी दिया नूपुर सुवर्णकमल और विद्युत्प्रभा को साथ ले अपनी सासु विद्युत्केशी से बिदा हो अशोकदत्त राजा के समीप पहुँचा और वह नूपुर राजा को दिया राजा भी दूसरा नूपुर पाय बहुत प्रसन्न हुआ और अशोकदत्त की प्रशंसा करनेलगा एक दिन अशोकदत्त ने अपनी प्रिया विद्युत्प्रभा से पूछा कि हे प्राणप्रिये! यह सुवर्णकमल तेरी माता ने कहां से पाया मुझे ऐसे कमलों की और भी इच्छा है यदि तू बतावे तो मैं लेआऊं तब विद्युत्प्रभाने कहा कि हे प्रिय! कपालस्फोट नाम वेतालों का राजा है उसके सरोवर में ऐसे कमल होते हैं मेरी माता एक दिन जल-

क्रीड़ा करने उस सरोवर में गई थी तब एक पुष्प तोड़ लाई थी यह अपनी प्रिया का वचन सुन अशोकदत्त ने कहा कि मुझे उस सरोवर के तटपर पहुँचा दे तब विद्युत्प्रभा अशोकदत्त को लेउड़ी और क्षणभर में वहां पहुँचा दिया और सरोवर में घुसकर सुवर्णकमल तोड़नेलगा तब उस सरोवर के रक्षक अशोकदत्त को मारने दौड़े परन्तु उस वीर ने उन सबको मारदिया तब कपालस्फोट आप युद्ध करने निकला और अशोकदत्त से युद्ध करने लगा अशोकदत्त अपने खड्ग से कपालस्फोट के दो टुकड़े करना चाहता था इतने में विद्याधर गुरु विज्ञप्तिकौतुक विमान में बैठे वहां आनिकले वे पुकारे कि हे अशोकदत्त ! साहस मत कर यह वचन सुन अशोकदत्त ने ऊपर को दृष्टि की तो देखा कि अतिप्रभावान् विद्याधर गुरु विमान में बैठे हैं उनको देखतेही अशोकदत्त शाप से मुक्त हुआ और मनुष्य देह छोड़ दिव्यदेह होगया तब विद्याधर गुरुने अशोकदत्त को अपने पहिले रूप में प्राप्त हुये देख कहा कि हे सुकर्ण ! यह तेरा भाई गालवमुनि के शाप से वेताल हुआ है इसने गालवमुनि की कन्या को स्पर्श किया था और इस पाप का तैंने अनुमोदन किया था इसलिये तुझे भी गालव मुनि ने शाप दिया तेरा शाप मेरे दर्शन तक था और इस तेरे भाई के शाप का अन्त गालवमुनि ने कुछ कल्पन नहीं किया अब तू शाप से मुक्त हुआ इसलिये स्वर्ग को चल और उत्तमभोग भोग यह गुरु का वचन सुन सुकर्ण ने कहा कि हे महाराज ! बड़े भाई को इसी दुर्दशा में छोड़ मुझे स्वर्ग में जाना उचित नहीं आप कोई ऐसा उपाय बतावें कि जिससे यह भी शाप से मुक्त होय यह सुन विज्ञप्तिकौतुक ने कहा कि यह शाप-निवृत्ति होना अतिकठिन है परन्तु एक गुप्त बात हम कहते हैं जो ब्रह्मा जी ने सनत्कुमार आदि से कही थी दक्षिणसमुद्र के तटपर चक्रतीर्थ के समीप एक तीर्थ है जिसके दर्शनमात्र से ही सब पाप निवृत्त होजाते हैं उसमें स्नान करने से जो फल होता है उसका तो कौन वर्णन करसके उस तीर्थ में जाकर तेरा भाई स्नान करे तो वेतालपनेसे मुक्तहो दिव्य देह धार स्वर्ग को जाय सुकर्ण यह वचन सुन अपने भ्राता कपालस्फोट नाम

को साथ ले दक्षिणसमुद्र के तटपर उस तीर्थपर पहुँचा जो विज्ञसिकौतुक ने बताया था वहां जाय सुकर्ण ने अपने भाई से कहा कि हे भ्रातः! तू इस तीर्थ में स्नानकर जिससे यह गालवमुनि का शाप निवृत्त होय इतने में पवन चला उससे तीर्थ के जलकण उड़कर कपालस्फोट की देहपर गिरे उन जलकणों के गिरतेही वेतालरूप छोड़ ब्राह्मणपुत्र विजयदत्त होगया फिर उसने तीर्थ में स्नान किया तब मनुष्यदेह छोड़ दिव्यदेह होगया और दोनों भाई उत्तम विमानपर चढ़ दिव्य स्त्रियोंसहित उस तीर्थ की प्रशंसा करते हुये अपने गुरु विज्ञसिकौतुक के संग स्वर्ग को गये उस दिन से उस तीर्थ का नाम वेतालवरद हुआ चक्रतीर्थ के दक्षिणभाग में स्थित वेतालवरदनामक तीर्थ में जे स्नान करेंगे वे जीवन्मुक्त होंगे इस तीर्थ के तुल्य और तीर्थ न हुआ है न होगा इसमें स्नान करने से वेताल-पना छूटा यहां संकल्पकर स्नान करे और नियमपूर्वक पिण्डदान पितरों के निमित्त करे इतना कह सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! यह हमने वेतालवरद तीर्थ के नाम का कारण और माहात्म्य वर्णन किया जो पुरुष इस अध्याय को पढ़े अथवा भक्ति से श्रवण करे वह मुक्त होय॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां विद्याधरकुमारद्वयशाप विमोक्षणंनामनवमोऽध्यायः॥ ६॥

दशवां अध्याय॥

गन्धमादनपर्वत का माहात्म्य और एक शूद्र और एक मुनिकी कथा और पापनाशनतीर्थ का माहात्म्य॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! वेतालवरद तीर्थ में स्नान कर धीरे २ गन्धमादन पर्वत को जाय समुद्र में जो सेतुरूप करके गन्धमा-दनपर्वत स्थित है वह ब्रह्मलोक का मार्ग विश्वकर्मा ने बनाया है लाखों सरोवर, नदी, समुद्र, महापुण्यवन, आश्रम, पुण्यक्षेत्र अरण्य, वेद, वशिष्ठ आदि मुनि, सिद्ध, चारण, किन्नर, लक्ष्मी और धरणीसहित विष्णुभगवान्, सावित्री और सरस्वतीसहित ब्रह्माजी, गणपति, कार्त्तिकेय, इन्द्र आदि देवता, सूर्य आदि ग्रह, अष्ट वसु, पितर, लोकपाल सब उस पर्वत में निवास

करते हैं और दर्शन करनेहारों के महापातक हरते हैं इसी पर्वत में शिव पार्वती विहार करते हैं किन्नर, गन्धर्व, विद्याधर आदि इसी पर्वत में अपनी कान्ताओं के साथ क्रीड़ा करते हैं गन्धमादन के दर्शन करते ही उत्तम बुद्धि और सौख्य प्राप्त होता है उसके ऊपर निवास करनेवाले सिद्ध, चारण, गन्धर्व आदि सदा सदाशिवजी का पूजन करते हैं गन्धमादन का पवन शरीर में लगतेही करोड़ों ब्रह्महत्या आदि महापातक नष्ट हो-जाते हैं पहिले यह पर्वत समुद्र के मध्य में होने से मनुष्यों को अगम्य था केवल देवता और ऋषिही इसमें रहते थे श्रीरामचन्द्रजी की आज्ञा से नल ने सेतु बांधा उसके मध्य में यह पर्वत आगया तब से मनुष्य जाने लगे गन्धमादनपर्वत के समीप जाय प्रार्थना करे और ये मन्त्र पढ़े ॥

क्षमाधर महापुण्य सर्वदेवनमस्कृत ॥ विष्णवादयोपि यं देवास्सेवन्ते श्रद्धया सह ॥ १ ॥ तं भवन्तमहं पद्भ्या-माक्रमामि नगोत्तम ॥ क्षमस्व पादघातं मे दयया पापचे-तसः ॥ २ ॥ त्वन्मूर्द्धनि कृतावासं शंकरं दर्शयस्व मे ॥

इन मन्त्रों से प्रार्थनाकर धीरे २ गन्धमादनपर्वत में जाय समुद्र में स्नानकर गन्धमादन में पिण्डदान करे सरसों के तुल्य भी पितरों के निमित्त पिण्ड देवे तो एक युगपर्यन्त पितर तृप्त रहते हैं जो शमीवृक्ष के पत्र के तुल्य पिण्ड देवे तो उसके पितर नरक से स्वर्ग को जायँ और जो पहिलेही स्वर्ग में होयँ तो मुक्ति पावें गन्धमादन के ऊपर लोक में प्रसिद्ध पापवि-नाशन नाम तीर्थ है जिसके स्मरण करने सेही मनुष्य जन्म मरण से छूटे उस तीर्थ में जाय भक्ति से स्नान करे तो मुक्ति पावे इतनी कथा सुन शौनकआदि मुनीश्वरों ने पूछा कि हे सूतजी ! आप पापविनाशनतीर्थ का माहात्म्य विस्तार से वर्णन करें व्यासजी की अनुग्रह से आप सर्वज्ञ हैं यह मुनियों का वचन सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! हिमालय पर्वत में ब्रह्माजी के आश्रम के बीच जो कथा हुई उसको हम वर्णन करते हैं हिमालयपर्वत में अतिमनोहर एक आश्रम है जो अनेक वृक्ष, लता, गुल्म,

मृग, पक्षी, हाथी आदि से भरा है सिद्ध, चारण, व्रती, ऋषि, तपस्वी, ब्राह्मण, दीक्षित, ब्रह्मचारी, वेदपाठी, वानप्रस्थ, संन्यासी आदि करके नित्य सेवित है बालखिल्य मरीचि आदि मुनि जिस आश्रम में निवास करते हैं एक समय बड़ा साहसी दृढ़मति नाम एक शूद्र उन ब्राह्मणों के समीप आया वहां बड़े २ तेजस्वी और तपस्वी ब्राह्मणों को देख उसने साष्टाङ्ग दण्डवत् किया ब्राह्मणों ने उसका सत्कार किया ब्राह्मणों को देख उसकी भी इच्छा तप करने की हुई और कुलपति अर्थात् उन सब ऋषियों में मुख्य ऋषिके समीप आय प्रार्थना की कि हे महाराज! मैं शूद्र हूं और आपकी सेवा में रहकर तप किया चाहता हूं अब मैं आपकी शरण में प्राप्त हुआ इसलिये आप मुझे भी यज्ञ की दीक्षा दीजिये यह दृढ़मति का वचन सुन कुलपति ने कहा कि शूद्र को दीक्षा नहीं होसक्ती जो तेरी तप करने की इच्छा होय तो ब्राह्मणों की शुश्रूषा कर शूद्र को कभी उपदेश न करना चाहिये शूद्र के उपदेश करने से उपदेष्टा को बड़ा दोष होता है शूद्र को कभी न पढ़ावे और शूद्र से याचना भी न करे शास्त्र, व्याकरण, काव्य, नाटक, अलंकार, पुराण, इतिहास आदि शूद्र को कभी न पढ़ावे जो ब्राह्मण शूद्र को पढ़ावे उसको चाण्डाल के तुल्य समझ सब ब्राह्मण मिलकर अपने ग्राम से निकाल देवें और अक्षरयुक्त शूद्र का भी त्याग करें इसलिये हे दृढ़मति! तू श्रद्धा से ब्राह्मणों की सेवाकर इसी में तेरा कल्याण है मनु आदिकों ने ब्राह्मण की सेवा करना शूद्र का मुख्य कर्म कहा है इसलिये तुझे अपने जातिधर्म को त्याग न करना चाहिये यह मुनि का वचन सुन शूद्र चिन्तन करनेलगा कि अब मुझे क्या करना चाहिये मेरी श्रद्धा तो तप करने में पहिले से ही है इसलिये अब वही उपाय करना चाहिये जिस से मुझे ज्ञान प्राप्त होय यह मनमें ठान उस आश्रमसे दूर जाकर एक झोपड़ी बनाय उसमें एक देवमन्दिर बनाया और एक तालाब खोद उसके तटपर पुष्पवाटिका लगाई इसभांति आश्रम बनाय श्रद्धा से तप करनेलगा अभिषेक, उपवास, बलि, हवन, देवपूजन आदि नित्य करता फलाहार करता जितेन्द्रिय रहता और पुष्प, पत्र, फल, मूल आदि करके नित्य अतिथियों

का पूजन करता इसप्रकार तप करते २ बहुत काल व्यतीत हुआ एक बड़े तपस्वी गर्गकुल में उत्पन्न सुमतिनामक मुनि उसके आश्रम में आये दृढ़मति ने भी मुनि को स्वागतप्रश्न कर भलीभांति उनका पूजन किया और फल मूल आदि उनको भोजन कराय प्रणामकर अनेक प्रकार की कथा कह प्रसन्न किया मुनि भी सन्तुष्ट हो दृढ़मति को आशीर्वाद देकर अपने आश्रम को गये परन्तु उस दिन से सुमतिमुनि प्रतिदिन दृढ़मति के आश्रम में आनेलगे दृढ़मति भी उनका बहुत सत्कार और सेवा करता इस भांति उस शूद्र के साथ सुमति का बहुत स्नेह होगया और जो शूद्र कहता उसको मुनि भी अङ्गीकार करते एक दिन दृढ़मति ने सुमतिमुनि से कहा कि आप मुझे हव्यकव्यविधान के सब मन्त्र उपदेश करें जिससे मैं देवता और पितरों को सन्तुष्ट करूं महालयश्राद्ध अष्टकाश्राद्ध आदि का विधान और भी जो वैदिककृत्य होय वह सब आप मुझे सिखावें यह दृढ़मति का वचन सुन सुमतिमुनि ने सब मन्त्र और विधान उसको सिखाये और आप उससे श्राद्ध करवाया और शूद्र से बिदा हो प्रसन्नतापूर्वक अपने आश्रम को गये और दृढ़मति से नित्य मिलते वह भी उनकी सेवा करता सुमति को शूद्र का संसर्ग देख और मुनियों ने त्यागदिया अपना आयुष् भोगकर सुमतिमुनि मृत्युवश हुये तब उनको यमराज के दूतों ने लेजाकर नरक में डालदिया करोड़ों कल्प नरक में पड़ेरहे पीछे स्थावरयोनि अर्थात् वृक्षआदि हुये फिर क्रम से गर्दभ, ग्रामशूकर, श्वान, काक, चाण्डाल, शूद्र, वैश्य, क्षत्रियआदि योनियों में जन्म लेते ब्राह्मण के घर में जन्म पाया पिता ने उस बालक का आठवें वर्ष में यज्ञोपवीत किया और सब वैदिक आचार सिखाया एक दिन वह बालक वन में गया था वहां उसको ब्रह्मराक्षस का आवेश होगया वहां से रोता, हँसता, विलाप करता, गाता, गिरता, भ्रमता और हाहाशब्द करता घर में आया और सब वैदिककर्म उसने छोड़दिये पिता भी पुत्र की यह दशा देख अतिदुःखी हुआ और उसको संग लेकर [illegible] की शरण में गया वहां जाय अगस्त्यजी को प्रणामकर [illegible] ने प्रार्थना की कि हे महाराज! मेरे इस पुत्र में ब्रह्मराक्षस का आवेश

होगया है इसलिये क्षणमात्र भी इसको सुख नहीं और पितरों का ऋण निवृत्त करने के लिये मेरे कोई दूसरा पुत्र नहीं अब आप कृपा कर कोई उपाय बतावें आपके समान तीनों लोकों में कोई तपस्वी नहीं और सब ऋषि आपको शिवभक्तों में मुख्य गिनते हैं आपके विना कोई इसकी रक्षा करनेहारा नहीं इसलिये आप इस अनाथ पर और मुझ पर अनुग्रह करें महात्मा पुरुष दयालु होते हैं सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह ब्राह्मण का वचन सुन अगस्त्यजी ने ध्यान किया और बहुत काल तक ध्यानकर बोले कि हे ब्राह्मण! कई जन्म पहिले यह तेरा पुत्र सुमति नाम ब्राह्मण था इसने शूद्र को सब वैदिककर्म उपदेश किये उस पाप के फल से करोड़ों वर्ष नरकवास भोगकर स्थावर आदि अनेक दुष्टयोनियों में जन्म लेता अब तुम्हारा पुत्र हुआ अब भी पूर्वजन्म के पाप से यमराज के भेजेहुये ब्रह्मराक्षस ने इसको आ घेरा अब हम इसकी निवृत्ति का उपाय कहते हैं सावधान होकर श्रवण करो दक्षिणसमुद्र में देवताओं करके सेवित सेतुरूप से स्थित गन्धमादन नाम पर्वत है उसके ऊपर पापविनाशन नाम तीर्थ है उस तीर्थ में स्नान करने से भूत, प्रेत, पिशाच, ब्रह्मराक्षस और बड़े २ रोग नष्ट होते हैं हे ब्राह्मण! तू अपने पुत्रको वहां स्नान करावे दिन २ स्नान कराने से ब्रह्मराक्षस निवृत्त होजायगा इसके विना और कोई उपाय नहीं है इसलिये तुम विलम्ब मत करो शीघ्र ही जाय इस पुत्रको स्नान करावो यह अगस्त्यजी का वचन सुन उनको प्रणाम कर गन्धमादनपर्वत को चला वहां कुछ दिनों में पहुँच अपने पुत्रको पापविनाशन तीर्थ में तीन दिन संकल्पपूर्वक स्नान कराया और ब्राह्मण ने आप भी स्नान किया स्नान करते ही वह ब्राह्मणपुत्र आरोग्य और दिव्यरूप करके युक्त होगया और बहुत काल संसारसुख भोग अन्त में मुक्ति को प्राप्त हुआ ब्राह्मण भी तीर्थस्नान के फल से अपने आयुष् के अन्त में मुक्त हुआ और जिस शूद्र को वैदिक कर्म का सुमति ने उपदेश किया था वह भी बहुत काल नरक भोग अनेक बुरेजन्म भोगता गन्धमादनपर्वत में गीध हुआ एक दिन वह गीध पापनाशन तीर्थ में जलपीने आया वहां उसने जल पिया और देह पर भी

जल के छींटे लगाये उस जल के स्पर्श होतेही दिव्यदेह पुरुष होगया दिव्य वस्त्र, भूषण, माला आदि से भूषित हो उत्तम विमान में बैठ सुन्दरी स्त्रियों करके सेवित छत्र चामर आदि से शोभित हो स्वर्ग को गया हे मुनीश्वरो! पापविनाशन तीर्थ का ऐसा प्रभाव है स्वर्ग, मोक्ष, पुण्य आदि सब पदार्थ मिलते हैं और पापों का नाश होता है उस तीर्थ में स्नान करने से कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि देवता सदा उसका सेवन करते हैं पापों का नाश करने से उस तीर्थ का नाम पापनाशन पड़ा कल्याण की इच्छावाले पुरुष वहां अवश्यही स्नान करें हे मुनीश्वरो! यह पापविनाशन तीर्थ का परमगुप्त माहात्म्य संक्षेप से कहा है जिस तीर्थ के स्नान करने से अतिदुराचार शूद्र और ब्राह्मण भी मुक्त हुये उसकी महिमा कहांतक वर्णन करें ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषान्याख्यायां पापनाशनतीर्थमाहात्म्य निरूपणंनामदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

ग्यारहवां अध्याय ॥

सीतासरोवर का माहात्म्य और कपालाभरण नाम राक्षसराज की कथा ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! पापनाशन तीर्थ में स्नान कर फिर सीतासरोवर में जाना चाहिये संसार में गङ्गा आदि जितने तीर्थ हैं सब सीतासरोवर में निवास करते हैं काशी आदि क्षेत्र भी अपना २ पाप निवृत्त होने के लिये सदा उस तीर्थ का सेवन करते रहते हैं सब जीवों के पातक हरने के लिये शिवजी भी वहां निवास करते हैं इसी तीर्थ में स्नान करने से इन्द्र को ब्रह्महत्या ने छोड़ा यह सूतजी का वचन सुन मुनियों ने पूछा कि इन्द्र ने क्योंकर ब्रह्महत्या की और उस तीर्थ में स्नान किस भांति किये यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में कपालाभरण नाम एक बड़ा पराक्रमी राक्षस हुआ वह ब्रह्माजी के वर से सब देवताओं करके अवध्य था अर्थात् देवता उसको नहीं मार सक्ते थे उस राक्षस का मन्त्री शवभक्ष नाम था वैजयन्तनगर उस की राजधानी थी और सौ अक्षौहिणी सेना उस राक्षस की थी अपने

नगर में आनन्द से कपालाभरण निवास करता था एक दिन कपालाभरण ने अपने मन्त्री शवभक्ष को बुलाकर कहा कि हे प्रधान ! हमारी इच्छा है कि इन्द्र को जीतकर स्वर्ग में अपनी सेना समेत निवास करें यह अपने प्रभु का वचन सुन मन्त्री ने भी कहा कि बहुत उत्तम बात है तब कपाला-भरण दुर्मेधा नाम अपने पुत्र को राज्य देकर बहुत सी सेना लेकर अमरा-वतीनगरी को जीतने चला समुद्रों को सुखाता पर्वतों को चूर्णकरता घोड़े, हाथी, रथ, पयादों के शब्द से दिग्गजों को भी बधिर करता देवताओं के साथ युद्ध करने के लिये अमरावती के समीप जापहुँचा देवता भी सेना का कलकल सुन नगर के बाहर निकले और राक्षसों के साथ युद्ध होनेलगा ऐसा युद्ध हुआ कि न किसी ने पहिले देखा था न सुना था देवता राक्षसों को मारनेलगे और राक्षस देवताओं का परस्पर द्वन्द्वयुद्ध होनेलगा कपालाभरण इन्द्र के साथ, शवभक्ष यमराज के साथ, कौशिक वरुण के साथ और रुधिराक्ष कुबेर के साथ युद्ध करनेलगा मांसप्रिय, मद्यसेवी, क्रूरदृष्टि और भयावह ये चार कपालाभरण के छोटे भाई अश्विनीकुमार वायु और अग्नि के साथ युद्ध करनेलगे यमराज ने एक दण्ड ऐसा मारा कि शवभक्ष के प्राण मुक्त हुये और उसके साथ तीस अक्षौहिणी सेना थी वह भी यमराज ने मारडाली वरुण ने भाले से कौशिक का शिर काट लिया रुधिराक्ष को कुबेर ने मार गिराया कपालाभरण के चारो भाई अश्विनीकुमार वायु अग्नि ने मारे और इन्द्र ने कपालाभरण की सौ अक्षौहिणी सेना का क्षणमात्र में संहार किया कपाला-भरण अपनी सेना को नष्ट हुई देख क्रोध कर इन्द्र की ओर दौड़ा और इन्द्र से कहा कि खड़ारह इतना कह पांच बाण इन्द्र के मस्तक में मारे परन्तु उन बाणों को इन्द्र ने काट दिया तब इन्द्र के ऊपर कपालाभरण ने त्रिशूल फेंका उसको इन्द्र ने अपनी बर्छी से काट दिया तब क्रोधकर सौ हाथ लम्बी और पांच हजार मन भारी अतिभयंकर लोह की गदा उठाकर कपालाभरण ने इन्द्र की छाती में मारी उसके लगतेही इन्द्र मूर्च्छित होगया तब बृहस्पति ने मृतसंजीविनी विद्या जपकर इन्द्र को चैतन्य किया तब इन्द्र ऐरावत हस्ती पर चढ़ फिर कपालाभरण के सम्मुख आया और उसके ऊपर वज्र का

प्रहार किया वह भी वज्र लगतेही रथ सहित चूर्ण होगया उस राक्षस के मरतेही सब जगत् में आनन्द हुआ परन्तु वहां सेही उत्पन्न होकर एक घोर ब्रह्महत्या इन्द्र के पीछे लगी इतनी कथा सुन मुनीश्वरों ने पूछा कि हे सूतजी! वह राक्षस ब्राह्मण तो थाही नहीं फिर उसके मारने से इन्द्र को हत्या क्यों लगी तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! अतिगुप्त बात हम वर्णन करते हैं आप सावधान हो श्रवण करें पूर्वकाल में विन्ध्याचल पर्वत के बीच त्रिविक्रम नाम एक राक्षस रहता था उसकी परमसुन्दरी और सब उत्तम लक्षणों करके युक्त सुशीला नाम भार्या थी एकदिन सुशीला वन में विचरती थी वहांहीं शुचि नाम एक मुनि तप करते थे उन्हों ने सुशीला को देखा देखतेही काम के वश हुये और कहनेलगे कि हे सुन्दरि! तू किसकी भार्या है और इस भयंकर वन में अकेली क्यों आई है तू मुझे थकी सी देखपड़ती है इसलिये आज तू मेरे उटज अर्थात् झोपड़ी में सुख से निवासकर यह मुनि का वचन सुन सुशीला ने कहा कि हे महाराज! मैं त्रिविक्रम नाम राक्षस की भार्या हूं और पुष्प तोड़ने इस वन में आई हूं मुझे पति ने यह भी आज्ञा दी है कि शुचिमुनि को प्रसन्न कर उनसे पुत्र उत्पन्न करावे इसलिये आप कृपाकर मुझमें पुत्र उत्पन्न कीजिये यह सुशील का वचन सुन प्रसन्न हो मुनि बोले कि हे सुशीले! तुझे देख मुझे भी बहुत प्रीति हुई इसलिये मेरा मनोरथ तू शीघ्रही पूराकर इतना कह मुनि और सुशीला विहार करनेलगे तीन दिन मुनि उसके समीप रहे चौथे दिन उससे कहा कि हे प्रिये! तेरे गर्भ में पुत्र है वह चिरकाल राज्य करेगा उसका नाम कपालाभरण रखना हज़ारवर्ष तप करके ब्रह्माजी से वर पावेगा और इन्द्र के विना और किसी देवता का उसको भय न होगा इतना कह मुनि तो काशी को गये और कुछ काल के अनन्तर सुशीला के पुत्र हुआ वही कपालाभरण था जिसको इन्द्रने मारा शुचिमुनि के वीर्य से कपालाभरण उत्पन्न हुआ इसलिये उसके मरने से इन्द्र को ब्रह्महत्या लगी इन्द्र भी उस हत्या करके पीड़ित सब लोकों में दौड़ता फिरा परन्तु कहीं नहीं मिला तब ब्रह्मलोक में गया और ब्रह्माजी से प्रार्थना की कि

हे महाराज! यह ब्रह्महत्या मुझे बहुत दुःख देती है इसका आप कोई उपाय बताइये यह इन्द्र का वचन सुन ब्रह्माजी कहनेलगे कि हे देवराज! गन्धमादनपर्वत में सीताकुण्ड है वहां जाय उस तीर्थ में स्नानकर यज्ञ करो तब तुमको यह हत्या छोड़ेगी सीतासरोवर मुक्ति का देनेहारा है उसमें स्नान करने से सब पातक, उपपातक, दुःख, दारिद्र्यआदि दूर होते हैं यह ब्रह्माजी का वचन सुन इन्द्र सीतासरोवर पर पहुँचा वहां स्नानकर यज्ञ किया तब ब्रह्महत्या निवृत्त हुई और सुखी होकर इन्द्र स्वर्ग का राज्य करनेलगा इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! ऐसा प्रभाव सीतासरोवर का है रामचन्द्रजी का सन्देह निवृत्त करने के लिये सीता ने अग्नि में प्रवेश किया और अग्नि से निकल अपने नाम का यह तीर्थ बनाया और आप उसमें स्नान किया इसीसे उसका नाम सीतासरोवर हुआ उस तीर्थ में जो मनुष्य स्नान करे उसके सब मनोरथ सिद्ध होते हैं उस तीर्थ के जल से आचमन कर अनेक प्रकार के दान देवे बड़ी दक्षिणावाले यज्ञ करे तो अवश्यही मुक्ति पावे हे मुनीश्वरो! यह सीतासरोवर का प्रभाव हमने वर्णन किया इसको जो पढ़े अथवा सुने वह उत्तम भोग भोगकर अन्तसमय में सद्गति पाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सीतासरोवरमाहात्म्यकपालाभरणराक्षसराजकथानकंनामैकादशोऽध्यायः॥ ११॥

बारहवां अध्याय॥

मङ्गलतीर्थ का माहात्म्य और मनोजव राजा का इतिहास॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सीताकुण्ड में स्नानकर मङ्गल तीर्थ को जाना चाहिये उस तीर्थ में लक्ष्मी निवास करती है इन्द्रादि देवता अलक्ष्मी के नाश के लिये नित्य उस तीर्थ में स्नान करते हैं हे मुनीश्वरो! हम एक इतिहास वर्णन करते हैं उसको आप प्रीति से श्रवण करो पूर्व काल में चन्द्रवंश के बीच मनोजव नाम एक राजा हुआ वह राजा सदा वेद पढ़ता यज्ञ करता ब्राह्मण भोजन कराता वेद के अर्थ को चिन्तन करता नीतिशास्त्र का विचार करता और सब शत्रुवों को जीत धर्म से प्रजा की

रक्षा करता था इसप्रकार धर्मराज्य करते २ राजा के चित्त में अहंकार उत्पन्न हुआ हे मुनीश्वरो! जहां अहंकार होय वहां काम, क्रोध, लोभ, मद, हिंसा, असूया आदि सब दोष रहते हैं और इन सबके होनेसे पुरुष सम्पत्ति और सन्तान सहित नष्ट होजाता है राजा के चित्त में अहंकार उत्पन्न होते ही ईर्षा और लोभ भी उत्पन्न हुये राजा ने विचार किया कि ये ब्राह्मण कुछ कर नहीं देते इनसे भी दण्ड लेना चाहिये यह मन में निश्चय कर ब्राह्मणों के धन धान्य हरनेलगा शिव विष्णु आदि के मन्दिरों में जो धन था वह सब लेलिया ब्राह्मणों की और देवालयों की भूमि छीन ली इस प्रकार अन्याय करते २ उस राजा के नगर को एक समय रणदेश के राजा गोलभ ने अपनी चतुरङ्गिणी सेना से आघेरा उसके साथ परम अहंकारी मनोजव ने छह महीने पर्यन्त युद्ध किया परन्तु अन्त में हारकर भगा और राज्यछोड़ अपने पुत्र स्त्रियों को साथ ले वन को गया इसभांति मनोजव को निकाल गोलभ राज्य करनेलगा मनोजव भी भूखा प्यासा बड़े गह्वर वन में जा पहुँचा जहां सिंह व्याघ्र आदि जीव गर्जते थे हाथी चिंघाड़ते थे महिष वराह आदि दुष्टजीव चारो ओर फिरते थे उस वन में मनोजव राजा के बालक पुत्र ने कहा कि हे पितः! मुझे भोजन दो भूख लगी है और यही बात अपनी माता से भी कही यह पुत्र का वचन सुन राजा रानी बहुत दुःखी हुये और राजा ने अपनी सुमित्रा नाम रानी से कहा कि हे सुमित्रे! भख से मेरे प्राण जाते हैं प्यास से कण्ठ सूखता है और यह बालक जो भोजन न पावेगा तो मरही जायगा मुझसे मन्दभागी को विधाता ने क्यों उत्पन्न किया कौन मुझे इस विपत्ति से बचावेगा शिव, विष्णु, सूर्य, अग्नि आदि देवताओं का मैंने पूजन नहीं किया देव ब्राह्मणों की जीविका और धन मैंने हरा इन सब पापों सेही मैं राज्य से भ्रष्ट होकर वन में निकला तिसपर भी क्षुधा तृषा से कुटुम्ब व्याकुल होरहा है अब मैं इस बालक को अन्न कहां से लाकर दूं शिव आदि देवताओं का मैंने पूजन नहीं किया न हवन किया न तीर्थयात्रा की माता पिता का कभी पार्वण अथवा एकोद्दिष्ट श्राद्ध नहीं किया कभी बहुत से ब्राह्मणों को

भोजन नहीं कराया इन पापों से मुझे यह घोर दुःख प्राप्त हुआ चैत्रमास के चित्रा नक्षत्र में चित्रगुप्त की प्रसन्नता के लिये अनेक प्रकार के पाक, केला, कटहर आदि मीठे फल, छतुरी, दण्ड, खड़ाऊं, जूता, ताम्बूल, पुष्प, चन्दन आदि लेपन कभी ब्राह्मणों को न दिये उस पाप से यह दुःख मुझे पड़ा पीपल, बड़, आम्र, इमली, नीम, कैथा, आमला, नारिकेल आदि कोई वृक्ष भी मार्ग में मैंने नहीं लगवाये जिनकी छाया में कोई पथिक बैठे उसी पाप से यह दुःख मुझे मिला शिवालय आदि में मार्जन नहीं किया न कुवां, बावली, तालाब आदि खुदवाये न तुलसी अथवा पुष्पवाटिका लगाई न कोई देवालय बनवाया उसी पाप का यह फल है महालय पक्ष में मैंने कभी पितरों के निमित्त पार्वणश्राद्ध, अष्टकाश्राद्ध, नित्यश्राद्ध, नैमित्तिकश्राद्ध न किये इसीसे यह क्लेश भोगता हूं बहुत दक्षिणा वाले यज्ञ कभी नहीं किये एकादशी आदि व्रत नहीं किये धनुर्मास में शिव विष्णु आदि देवताओं का प्रभातही पूजन कर नैवेद्य नहीं लगाया उस पाप से आज मैं वन में भटकता हूं शिव विष्णु आदि नामों का मैंने कभी उच्चारण नहीं किया जाबालप्रोक्त मन्त्रों करके कभी विभूति नहीं धारण की और रुद्राक्ष कभी नहीं धारे शिव पञ्चाक्षरमन्त्र का जप और रुद्राध्याय का पाठ मैंने कभी नहीं किया इसी पाप से मेरे ऊपर यह विपत्ति पड़ी पुरुषसूक्त और अष्टाक्षरमन्त्र मैंने नहीं जपा और भी कोई धर्मकृत्य नहीं की इसी से वन में दुःख भोगता फिरता हूं इस भांति विलाप करता हुआ राजा मूर्च्छित हो भूमिपर गिरपड़ा पति को गिरे देख सुमित्रा भी उसको आलिङ्गनकर विलाप करनेलगी कि हे चन्द्रवंश के भूषण, महाराज ! मुझे इस वन में छोड़ कहां चले मैं अनाथ हूं जो आपका मृत्यु होगया होय तो मैं भी आपके साथ सती होजाऊं विधवा होकर क्षणमात्र भी नहीं जी सकी यह माता पिता की दशा देख उनका पुत्र चन्द्रकान्त भी विलाप करने लगा इसी अवसर में रुद्राक्षधारे सब अङ्गों में विभूति लगाये भस्म का त्रिपुण्ड्र मस्तक में दिये जटाधारे श्वेत यज्ञोपवीत पहिने मृगछाला ओढ़े पराशरमुनि वहां आय निकले सुमित्रा ने उनके चरणों

पर प्रणाम किया और अपने बालक पुत्र से भी प्रणाम करवाया पराशर मुनि ने आशीर्वाद देकर कहा कि हे भद्रे ! विलाप मत कर और मुझे यह बता कि तू कौन है यह भूमिपर कौन पड़ा है और यह बालक तेरा कौन लगता है यह पराशरमुनि का वचन सुन सुमित्रा बोली कि हे महाराज ! यह चन्द्रवंश का भूषण बड़ापराक्रमी मनोजव नाम राजा है मैं सुमित्रा नाम इसकी रानी हूं और यह बालक चन्द्रकान्त नाम हमारा पुत्र है इस राजाको इसके शत्रु गोलभ ने जीतकर राज्य से निकाल दिया तब राज्य-भ्रष्ट हो हमने इस घोरवन में प्रवेश किया यहां क्षुधा करके पीड़ित इस बालक ने भोजन मांगा परन्तु भोजन नहीं था यह दुःख देख राजा मूर्च्छित होगया यह सुमित्रा का दीनवचन सुन शक्तिमुनि के पुत्र परमदयालु पराशरमुनि बोले कि हे पतिव्रते ! कुछ भय मतकर शीघ्रही तुम्हारी यह विपत्ति दूर होजायगी और तुम्हारा पति भी जी उठेगा इतना कह पराशर मुनि ने राजा को अपने हाथ से स्पर्श किया और शिवजी का ध्यान कर मृत्युञ्जय मन्त्र पढ़ा तब राजा की मूर्च्छा खुलगई और उठकर मुनि को प्रणाम कर कहनेलगा कि हे महाराज ! आपके चरणों की कृपा से मेरी मूर्च्छा निवृत्त हुई और सब पाप भी कटगये पापी पुरुषों को आपका दर्शन नहीं होसक्ता मुझे शत्रुवों ने राज्य से निकाल दिया आप मुझपर कृपादृष्टि करें जिससे मेरे सब दुःख दूर होयँ यह राजा का वचन सुन पराशरमुनि कहनेलगे कि हे राजन् ! फिर राज्यप्राप्ति के लिये एक उपाय हम कहते हैं सावधान होकर सुनो सेतुबन्ध के बीच गन्धमादनपर्वत में मङ्गलतीर्थहै उस तीर्थ में सदा रामचन्द्र और सीता सन्निहित रहते हैं वहां स्नान करने से अलक्ष्मी का नाश होता है इसलिये हे राजन् ! तू अभी अपने पुत्र और रानी समेत वहां जाय भक्ति से स्नानकर और तीर्थश्राद्ध आदि सब कर्म कर उस तीर्थ के प्रभाव से तुझे फिर राज्य मिलेगा अलक्ष्मी दूर होगी और शत्रुवों को जीतेगा इसलिये तू शीघ्रही गन्धमादन को चल और तेरे कल्याण के अर्थ हम भी साथ चलेंगे इतना कह पराशरमुनि सकुटुम्ब राजा को साथ ले सेतुबन्ध को चले और वन पर्वत आदि उल्लङ्घन करते कुछ

दिनों में मङ्गलतीर्थ के समीप जायपहुँचे वहां जाय संकल्पकर विधिपूर्वक पराशरमुनि ने तीर्थ में स्नान किया और राजा रानी और उस बालक को भी स्नान कराया राजा ने श्राद्ध किया फिर तीन महीने तक नित्य स्नान करते रहे तीन महीने के अनन्तर पराशरमुनि ने राजा को रामचन्द्रजी का एकाक्षरमन्त्र उपदेश किया राजा भी मन्त्र पाय मुनि की बताई विधि के अनुसार मङ्गलतीर्थ के तट पर बैठ अनुष्ठान करनेलगा चालीस दिन में अनुष्ठान पूरा हुआ तब उस तीर्थ से एक बड़ा दृढ़ धनुष् बाण रखने के दो तूणीर जिनमें बाण कभी निबड़ें नहीं, सुवर्ण की मूठ की खड्ग, ढाल, गदा, मुशल, बड़ा शब्द करनेहारा शंख, सुवर्ण का कवच, घोड़े, सारथि और पताका समेत बहुत उत्तम रथ, हार, केयूर, कंकण, मुकुटआदि भूषण, सुवर्ण कमलों की वैजयन्ती माला और हजारों दिव्यवस्त्र राजा के आगे निकलआये उनको देख राजा ने पराशरमुनि से कहा तब मुनि ने तीर्थ का जल लेकर राजा का अभिषेक किया अभिषेक के अनन्तर राजा दिव्य भूषण वस्त्र पहिन कवच और मुकुट धार सब शस्त्रों को बांध रथ में बैठा उस समय राजा का तेज ऐसा था जिस भांति ग्रीष्मऋतु में मध्याह्न के सूर्य का हो पराशरमुनि ने राजा को सांग और सरहस्य ब्रह्मास्त्र का उपदेश किया और आशीर्वाद दिया कि तुम्हारी जय होय राजा भी मुनि की आज्ञा पाय अपनी रानी और पुत्र को अपने रथ में बैठाय मुनि को प्रणाम और प्रदक्षिणा कर विजय के लिये चला अपने नगर के समीप जाय वह दिव्यशंख बजाया शंखका घोरशब्द सुनतेही राजा गोलभ सेना समेत युद्ध के लिये निकला तीन दिन राजा मनोजव और गोलभ का युद्ध हुआ चौथे दिन मनोजव ने ब्रह्मास्त्र चलाया जिससे सेना समेत गोलभराजा भस्म हुआ और मनोजव नगर में जाय सिंहासनपर बैठा और धर्मराज्य करनेलगा उसी दिन से ईर्षा और अहंकार को त्याग दिया और धर्म में तत्पर हो प्रजा का पालन करनेलगा हजार वर्ष राज्य कर अन्त में विरक्त हो पुत्र को राज्य दे आप तप करने के लिये गन्धमादन पर्वत में मङ्गलतीर्थ पर गया वहां जाय हृदय में श्रीसदाशिव का ध्यान

करता हुआ तप करनेलगा बहुतकाल तप कर अन्त में देह त्याग तीर्थ
के प्रभाव से राजा शिवलोक को गया और रानी सुमित्रा भी उसके शरीर
के साथ दग्ध हुई और अपने पति के समीप शिवलोक में पहुँची सूत
जी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह मङ्गलतीर्थ का प्रभाव है मनोजव
राजा जिस तीर्थ के प्रभाव से शत्रुवों को जीत अन्त में शिवलोक को
गया इसलिये सब को इस तीर्थ में स्नान करना चाहिये हे मुनीश्वरो!
यह तीर्थ भुक्ति और मुक्ति को देनेहारा है और पापों को दग्ध करने के
लिये अग्नि है इसलिये आपको भी इस तीर्थ का सेवन करना चाहिये॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां मङ्गलतीर्थमाहात्म्यमनोजवराजेतिहास-
निरूपणंनामद्वादशोऽध्यायः॥ १२॥

तेरहवां अध्याय॥

एकान्तरामनाथ का और अमृतवापी का माहात्म्य और अगस्त्यमुनि के भ्राता की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! मङ्गलतीर्थ में स्नानकर एकान्त-
रामनाथनामक क्षेत्र को जाय वहां सीता सहित और हनुमान् आदि
वानरों करके सेवित श्रीरामचन्द्र लोकों के कल्याण के लिये सदा सन्नि-
हित रहते हैं उसी क्षेत्र में अमृतवापिका है जिसमें स्नान करनेहारे मनुष्य
शिवजीकी अनुग्रह से अजर और अमर होजाते हैं उस वापी में स्नान करने
वालों को मोक्ष देने के लिये श्रीसदाशिव वहां सदा निवास करते हैं इतना
सुन मुनीश्वरोंने पूछा कि हे सूतजी! इस वापी का नाम अमृतवापी क्योंकर
पड़ा और इसका क्या प्रभाव है आप वर्णन करें हे व्यासशिष्य, सूतजी!
आपका वचनरूप अमृत पान करते २ हमको तृप्ति नहीं होती यह मुनियों
का वचन सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! इस अमृतवापी का
प्रभाव और इसके नाम का कारण हम वर्णन करते हैं आप श्रवण कीजिये
पूर्वकाल में सिद्ध, चारण, गन्धर्व आदि देवताओं करके सेवित सिंह,
व्याघ्र, वराह, महिष, हाथी आदि जीवों करके युक्त तमाल, ताल, हिन्ताल,
, चम्पक, अशोक आदि वृक्षों करके शोभित हंस, चक्रवाक, कोकिल,
आदिक पक्षियों के शब्दों से मनोहर पद्म, कुमुद, नीलकमल

आदि से भरे सरोवरों करके रमणीय हिमालयपर्वत में अपने आश्रम के बीच सत्यवादी जितेन्द्रिय अगस्त्यमुनि का भाई तप करता था वह वन के फल फूलों करके तीन काल शिवपूजन करता जो अतिथि आता उस को कन्दमूल आदि भोजन से तृप्त करता नित्य सन्ध्यावन्दन गायत्रीं आदि मन्त्रों का जप अग्निहोत्र आदि कर्म करता प्रभातही स्नानकर वेदपाठ करता मध्याह्न में अतिथिपूजाकर पुराण बांचता नित्य पञ्चमहायज्ञ करता प्रतिवर्ष पितरों का श्राद्ध करता और निरन्तर शिवजी का ध्यान करता इस प्रकार उत्तम तप करते २ एक हज़ार वर्ष बीतगये परन्तु शिवजी के दर्शन न हुये तब वह अगस्त्यमुनि का भ्राता पञ्चाग्नि के बीच बायें पैर की कनिष्ठा अंगुली के ऊपर खड़ा होकर सूर्य में दृष्टि लगाये दोनों भुजा ऊपरको उठाय शिवजी का हृदय में ध्यान करता हुआ उग्रतप करनेलगा इस भांति उसका अतिकठिन तप देख शिवजी प्रसन्न हो प्रत्यक्ष हुये मुनि भी वृष के ऊपर चढ़े श्रीसदाशिव को देख प्रणामकर भक्ति से स्तुति करने लगे॥

मुनिरुवाच॥ नमस्ते पार्वतीनाथ नीलकण्ठ महेश्वर॥ शिव रुद्र महादेव नमस्ते शम्भवे विभो॥ १॥ श्रीकण्ठोमापते शूलिन्भगनेत्रहराऽव्यय॥ गङ्गाधर विरूपाक्ष नमस्ते रुद्रमन्यवे॥ २॥ अन्धकारे कामशत्रो देवदेव जगत्पते॥ स्वामिन् पशुपते शर्व नमस्ते शतधन्वने॥ ३॥ दक्षयज्ञविनाशाय स्तायूनां पतये नमः॥ निचेरवे नमस्तुभ्यं पुष्टानां पतये नमः॥ ४॥ भूयो भूयो नमस्तुभ्यं महादेव कृपालय॥ दुस्तराद्भवसिन्धोर्मां तारयस्व त्रिलोचन॥ ५॥

यह स्तुति सुन प्रसन्न हो श्रीशिवजी बोले कि हे मुने! तेरे तप से हम बहुत प्रसन्न हुये इसलिये मुक्ति के अर्थ एक बहुत सुगम उपाय हम तुझ को उपदेश करते हैं गन्धमादनपर्वत में मङ्गलतीर्थ के समीप एक तीर्थ है उसमें स्नान कर तो अवश्यही मुक्ति पावेगा इससे सीधा उपाय मोक्ष के लिये और नहीं है उस तीर्थ का सम्पूर्ण प्रभाव हम भी वर्णन नहीं करसक्के

इस बात में तू कुछ सन्देह मतकर और जाकर उस तीर्थ में स्नान कर तो अवश्यही मुक्ति पावेगा इतना कह शिवजी अन्तर्धान हुये और मुनि भी शिवजी की आज्ञा पाय गन्धमादनपर्वत में एकान्तरामनाथ नाम क्षेत्र में पहुँचे और उसी तीर्थ को ढूंढ़ा और उस तीर्थ में स्नान करनेलगे तीन वर्ष पर्यन्त नियमपूर्वक मुनिने स्नान किया चौथे वर्षमें समाधि करके प्राणायाम से अपने कपालको भेदनकर मुनिने प्राण त्यागे और तीर्थ के प्रभाव से मुक्ति पाई अगस्त्य के भ्राता की वहां मुक्ति हुई इसी से उस तीर्थ का नाम अमृत-वापी हुआ (अमृत मोक्ष को कहते हैं) इसी तीर्थ में जो मनुष्य तीन वर्ष स्नान करें वे निस्सन्देह मुक्ति पाते हैं इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! अमृतवापी के नाम का कारण और प्रभाव हमने वर्णन किया अब आप क्या श्रवण किया चाहते हैं वह कहें तब शौनक आदि मुनि बोले कि हे सूतजी ! उस क्षेत्र का नाम एकान्तरामनाथ क्यों हुआ यह आप वर्णन करें हमको श्रवण करने की बहुत इच्छा है तब सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो ! पूर्वकाल में लक्ष्मण, सुग्रीव, विभीषण, हनुमान्आदि के साथ श्रीरामचन्द्र रावण के वध का और सीता लाने का विचार करते थे और सब वानर सेतु बाँधने में लगरहे थे परन्तु समुद्र के तरङ्गों का ऐसा घोरशब्द होता था कि एक को दूसरे का वचन नहीं सुनाईदेता था तब रामचन्द्रजी ने क्रोधकर भृकुटी चढ़ाई और समुद्र को गर्जने से रोका और एकान्त में बैठ रावण के वध का विचार अपने मन्त्रियों के साथ किया उसी दिन से उस क्षेत्र का नाम एकान्तरामनाथ हुआ और उसी दिन से उस क्षेत्र के समीप समुद्र के जल में शब्द नहीं होता और तरङ्गें नहीं उठतीं जो पुरुष एकान्तरामनाथक्षेत्र में आकर अमृतवापी में स्नान करते हैं वे अवश्य मुक्ति पाते हैं अद्वैतज्ञान करके शून्य समाधि और वैराग्य से रहित यज्ञ अनुष्ठान आदि से वर्जित भी पुरुष अमृतवापी में स्नान करे तो अवश्यही मुक्ति पावे ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायामेकान्तरामनाथामृतवापिकामाहात्म्याऽगस्त्यमुनिभ्रातृकथानकंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

चौदहवां अध्याय॥

ब्रह्मकुण्ड का माहात्म्य और ब्रह्मा विष्णु के परस्पर कलह होने की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अमृतवापी में स्नानकर एकान्तराघव के दर्शन करे पीछे ब्रह्मकुण्ड में स्नान करने के लिये जाय गन्धमादनपर्वत के बीच ब्रह्महत्या आदि सब पाप और दारिद्र्य के नाश करने हारा ब्रह्मकुण्ड तीर्थ है जो मनुष्य ब्रह्मकुण्ड में स्नान करें उनको और तीर्थ, यज्ञ, तप, दान आदि से कुछ प्रयोजन नहीं है ब्रह्मकुण्ड में स्नान करने वाले मनुष्य वैकुण्ठ को जाते हैं ब्रह्मकुण्ड से निकली विभूति को जो धारे उसके समीप ब्रह्मा विष्णु और शिवजी सदा निवास करते हैं उस विभूति का जो मस्तक में त्रिपुण्ड्र धारे मुक्ति उसके हाथ परही धरी है जो उस विभूति से सारे देह में उद्धूलन करे उसके पुण्य को शिवजी भी नहीं वर्णन करसक्के उस विभूति को जो नहीं धारते वे रौरव नरक में प्रलय पर्यन्त पड़े रहते हैं जो उस भस्म से उद्धूलन अथवा त्रिपुण्ड्र नहीं करते वे कभी सुखी नहीं होते जो उस विभूति की निन्दा करे उसको वर्णसंकर जानना चाहिये जो ब्रह्मकुण्ड की विभूति को और विभूति के तुल्य कहे अथवा उस विभूति को छोड़ और विभूति को जो पुरुष धारे उसकी उत्पत्ति में भी संकर जानिये जो मनुष्य ब्रह्मकुण्ड का भस्म ब्राह्मण को देवे उस को सम्पूर्ण भूमिदान का फल होता है इस बात में कभी सन्देह मत करना हम तीन बार शपथ खाकर कहते हैं और भुजा उठाकर सत्य कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ब्रह्मकुण्ड के भस्म को अवश्य धारण करो पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने शिवजी का शाप निवृत्त करने के लिये गन्धमादनपर्वत में बड़ी दक्षिणावाले अनेक यज्ञ किये तब शिवजी के शाप से निवृत्त हुये उन यज्ञों का यह भस्म है जो पुरुष इस तीर्थ में स्नान करें वे अवश्य शिवलोक में निवास करते हैं इतनी कथा सुन शौनक आदि ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी! चौदह भुवन रचनेवाले ब्रह्माजी को शिवजी ने किस अपराध पर शाप दिया और क्या शाप दिया यह आप कृपाकर वर्णन करें तब

सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! एक समय ब्रह्माजी और विष्णुजी का परस्पर विवाद हुआ ब्रह्माजी कहें कि हम जगत् के कर्ता हैं इसलिये हमहीं सबसे बड़े हैं और विष्णुजी कहें कि हम सब से बड़े हैं इसी अवसर में उनका अहंकार हरने के लिये बीच में एक लिङ्ग प्रकट हुआ उस ज्योतिर्मय लिङ्ग को देख ब्रह्माजी और विष्णुजी चकित हो परस्पर कहनेलगे कि यह अनादिअन्त करोड़ों सूर्यों के तुल्य प्रकाशमान लिङ्ग देखपड़ता है हम दोनों में से जो इसके आदि अन्त का निश्चय करे वही सबसे बड़ा और लोककर्ता गिनाजावे ब्रह्माजी ने कहा कि हे विष्णुजी! हम लिङ्ग का अग्रभाग देखने ऊपर को जाते हैं और आप इसके अन्त का निश्चय करने के लिये नीचे को जावो यह निश्चय कर ब्रह्माजी हंस का रूप धर ऊपर को उड़े और वाराहरूप धार विष्णुजी नीचे को चले कई हजार वर्ष तक विष्णुभगवान् नीचे को गये परन्तु लिङ्ग का अन्त न पाया तब लौटआये और सब देवताओं से कहा कि हमको इस लिङ्ग का कहीं अन्त न मिला इतने में ब्रह्माजी भी आय पहुँचे और सब देवताओं के आगे असत्य बोले कि हम इस लिङ्ग का अग्र देख आये हैं यह ब्रह्माजी का वचन सुन हँस कर शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी! तुमने हमारे सम्मुख झूठ बोला इसलिये जगत् में कोई तुम्हारी पूजा न करेगा और विष्णुजी से कहा कि हे विष्णुजी! आपने कपट नहीं किया सत्य कहदिया इसलिये हमारे तुल्य आपका भी सब जगत् में पूजन होगा ब्रह्माजी शिवजी का वचन सुन बहुत दुःखी हो बोले कि हे नाथ! हमसे अपराध बनपड़ा आप क्षमा करें जगत्प्रभु को अपने सेवकों का अपराध क्षमा करना चाहिये तब शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी! हमारा वचन मिथ्या तो नहीं होसक्ता परन्तु तुम गन्धमादनपर्वत में जाय यज्ञ करो जिससे हमारे शाप का दोष तुम से निवृत्त होजायगा और श्रौत स्मार्त कर्मों में तुम्हारी पूजा भी होगी प्रतिमा में तुम्हारा पूजन न होगा इतना कह शिवजी तो अन्तर्धान होगये और ब्रह्माजी गन्धमादनपर्वत को गये वहां जाय इन्द्रादि देवताओं के सम्मुख शिवजी की प्रसन्नता के लिये अट्ठासीहजार वर्ष पर्यन्त ब्रह्माजी ने निरन्तर

पौण्डरीक आदि यज्ञ किये तब शिवजी प्रत्यक्ष हुये और प्रसन्न हो ब्रह्माजी को वर दिया कि हे ब्रह्माजी ! तुम्हारा दोष निवृत्त हुआ अब श्रौत स्मार्त कर्मों में तुम्हारा पूजन हुआ करेगा और तुम्हारा यह यज्ञ करने का स्थान जगत् में ब्रह्मकुण्ड के नाम से प्रसिद्ध होगा जो इस ब्रह्मकुण्ड में एक बार भी स्नान करेगा उसके लिये मुक्ति का द्वार खुलजायगा जो इस कुण्ड के भस्म को धारण करेगा वह अवश्यही मायारूप कपाट खोल कर मुक्ति के द्वार में प्रवेश करेगा जो इस भस्म को भक्ति से धारण करेगा वह अपने माता पिता का पुत्र न होगा ब्रह्मकुण्ड के स्नान से करोड़ों ब्रह्महत्या, सुरापान, सुवर्ण की चोरी, गुरुस्त्रीगमन आदि महापातक क्षणमात्र में नष्ट हो जायँगे और महापातक करनेहारों के संसर्ग से जो पातक लगे होयँ वे भी निवृत्त होंगे इस भस्म के धारण करने से भूत, प्रेत, पिशाच आदि समीप नहीं आवेंगे इतना कह शिवजी अन्तर्धान हुये उसदिन से ब्रह्मकुण्ड का प्रभाव जान मुनि, देवता, सिद्ध, चारण, गन्धर्व, किन्नर आदि निरन्तर वहां निवास करनेलगे और ब्रह्माजी भी यज्ञों को समाप्त कर अपना मनोरथ सफलकर सत्यलोक को गये उस दिन से और भी देवता ऋषि आदि वहां यज्ञ करनेलगे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यज्ञ करने की इच्छा होय तो ब्रह्मकुण्ड परही करना चाहिये सब देवता ऋषि आदि करके सेवित सब पाप हरनेहारा मोक्षप्रद और सब मनोरथ सिद्ध करनेहारा ब्रह्मकुण्ड है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां ब्रह्मकुण्डमाहात्म्यविधिविष्णुकलहनिरूपणंनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

पन्द्रहवां अध्याय ॥

हनुमत्कुण्ड का माहात्म्य और धर्मसख राजा की कथा ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! ब्रह्मकुण्ड में स्नानकर मनुष्य हनुमत्कुण्ड को जाय रावणको मार जब रामचन्द्र लौटे और गन्धमादनपर्वत पर पहुँचे तब अपने नामसे हनुमान्जी ने उत्तम तीर्थ बनाया उस तीर्थ को साक्षात् रुद्र सेवन करते हैं उस तीर्थ के तुल्य दूसरा तीर्थ न हुआ न होगा जिसमें स्नान करने से शिवलोक की प्राप्ति होती है जिस तीर्थ के बनने से सब नरक

खाली होगये उस तीर्थ के प्रभाव को शिवजी ही जानते हैं धर्मसख नाम राजा ने भक्तिपूर्वक उस तीर्थ में स्नानकर दीर्घायु और प्रतापी सौ पुत्र पाये शौनक आदि ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी! धर्मसख राजा ने हनुमत्कुण्ड के प्रभाव से सौ पुत्र किसप्रकार पाये आप उसका चरित्र वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! संक्षेप से हम धर्मसख का चरित्र वर्णन करते हैं आप प्रीति से श्रवण करो केकयवंश में बड़ा प्रतापी शत्रुवों को जीतनेहारा प्रजा के पालन करने में तत्पर धर्मसख नाम एक बड़ा धर्मात्मा राजा हुआ उसकी सौ रानी थीं परन्तु पुत्र एक में भी नहीं उत्पन्न हुआ राजा भी पुत्र के लिये सदा यत्न किया करता अश्वमेध आदि अनेक यज्ञ उसने किये तुला पुरुष आदि महादान दिये और सदा अभ्यागतों को उत्तम २ भोजन देता विधिपूर्वक श्राद्ध करता सन्तान देने वाले मन्त्रों का जप करता इस भांति पुत्र के लिये अनेक प्रकार के धर्म दान आदि करते २ राजा वृद्ध होगया तब वृद्धावस्था में बड़ी रानी के गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम सुचन्द्र रक्खा राजा की सब रानी उस बालक को बड़े प्रेम से पालने लगीं और राजा प्रजा राजमाता रानी मन्त्री आदि उस बालक को देख परम आनन्द को प्राप्त होते एक दिन वह बालक पालने में झूलता था उस समय उसके पैर में बीछू ने काटा काटतेही वह राजकुमार चिल्लाया उसके रोने से सब रानी रोदन करनेलगीं और अन्तःपुर में कोलाहल मचगया सभा में बैठेहुये राजा ने रोदन का शब्द सुन घबड़ाकर कञ्चुकी को भेजा कञ्चुकी ने अन्तःपुर के द्वारपर जाय नादिरों से पूछा कि भीतर सब स्त्री क्यों रोती हैं इसका कारण बतावो इसी लिये मुझे महाराज ने यहां भेजा है यह उसका वचन सुन नादिर भीतर गये और सब वृत्तान्त पूछकर कञ्चुकी से आ कहा कञ्चुकी ने सभा में आय राजा से कहा राजा भी पुरोहित और मन्त्री समेत अन्तःपुर में गया और बीछू का मन्त्र जाननेवालों से उस बालक की चिकित्सा कराई बालक अच्छा हुआ राजाने वैद्य और मन्त्रियों को बहुतसा धन दे बिदा किया और सभा में आकर सब ऋत्विक् और पुरोहितों को बुलाकर यह कहा कि एक

पुत्र होना बड़े दुःखका कारणहै इससे तो पुत्र न होनाही अच्छाहै हे ब्राह्मणो! मैंने सन्तान के अर्थ सौ विवाह किये अब वृद्धावस्था में एक पुत्र हुआ अब हम सब के प्राण इसमें रहते हैं जो कदाचित् यह बालक मरजाय तो हमारी सब रानी और हम भी नाश को प्राप्त होयँ इसलिये हे ब्राह्मणो! ऐसा कोई उपाय बतावो जिसमें मेरे बहुत पुत्र होयँ सौ रानियों में एक २ पुत्र होजाय ऐसा यत्न करो तुम जो उपाय कठिन सुगम छोटा बड़ा शास्त्र को देखकर बतावोगे वह सब मैं करूंगा यह राजा का वचन सुन सब ब्राह्मणों ने विचारकर कहा कि हे महाराज! एक उपाय है जिससे आप की सब रानियों में पुत्र होयँ दक्षिणसमुद्र के बीच सेतु के मध्य में सब पाप हरनेहारा देवता, ऋषि, गन्धर्व, सिद्ध, चारण आदि करके सेवित गन्धमादन नाम एक पर्वत है उस पर्वत में हनुमत्कुण्ड नाम एक तीर्थ है जिसमें स्नान करने से सब दुःख दारिद्र्य कटजाते हैं नरक का भय नहीं रहता और स्वर्ग प्राप्ति होती है उस कुण्ड में जो स्त्री स्नान करे उसके अवश्यही पुत्र उत्पन्न होता है इसलिये आप भी वहां जाय हनुमत्कुण्ड के तीरपर पुत्रेष्टि करें तब आपके सौ पुत्र अवश्य होंगे यह ब्राह्मणों का वचन सुन उन सबको साथ ले अपनी सब रानी और मन्त्रियों समेत राजा धर्मसख गन्धमादनपर्वत में गया वहां जाय हनुमत्कुण्ड के तीर पर डेरा किया और नित्य स्नान करनेलगा जब चैत्रमास आया तब यज्ञ का आरम्भ किया ऋत्विक् और पुरोहित सब काम यज्ञ का करनेलगे जब यज्ञ समाप्त हुआ तब हवन का शेष पुरोहित ने सब रानियों को खिलाया राजा ने हनुमत्कुण्ड में यज्ञान्तस्नान किया और ऋत्विजों को बहुत से ग्राम और रत्न दक्षिणा में दिये इस भांति यज्ञ कर राजा धर्मसख अपने परिवार समेत राजधानी को आया दश महीने के अनन्तर सब रानियों में एक २ पुत्र उत्पन्न हुआ राजा ने बड़े हर्ष से स्नान कर जातकर्म किया और गो, भूमि, तिल, सुवर्ण आदि ब्राह्मणों को दिये बड़ी रानी में दो पुत्र होगये एक पहिले था दूसरा सब रानियों के साथ हुआ इस भांति एकसौ एक पुत्र राजा धर्मसख के वृद्धिको प्राप्त होनेलगे जब ये राज्यभार के योग्य हुये

तब उनको सब राज्य बांट अपनी रानियों को संग ले राजा गन्धमादन पर्वत में तप करने गया वहां जाय हनुमत्कुण्ड के तीरपर तप करनेलगा बहुत काल तप और शिवजी का ध्यान करते २ राजा मृत्युवश हो कैलास को गया और सब रानी उसके साथ सतीहुईं सुचन्द्र नाम बड़े पुत्र ने उन सब के श्राद्ध आदि किये इस भांति राजा तो सद्गति को प्राप्त हुआ और सुचन्द्र आदि राजपुत्र धर्मसे राज्य करनेलगे हे मुनीश्वरो! हनुमत्कुण्ड का प्रभाव और राजा धर्मसख का चरित्र हमने वर्णन किया सब मनोरथ सिद्ध होने के लिये हनुमत्कुण्ड में स्नान करना चाहिये जो पुरुष इस अध्याय को भक्ति से पढ़े अथवा सुने वह इस लोक में सब सुख भोग परलोक में देवताओं के साथ विहार करता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां हनुमत्कुण्डमाहात्म्यधर्मसखराजकथानकंनामपञ्चदशोऽध्यायः॥ १५॥

सोलहवां अध्याय॥

अगस्त्यतीर्थ का माहात्म्य और कक्षीवान् मुनि का अद्भुत इतिहास॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! हनुमत्कुण्ड में स्नानकर अगस्त्यतीर्थ को जाना चाहिये यह तीर्थ साक्षात् अगस्त्यजी ने बनाया है पूर्वकाल में सुमेरुपर्वत और विन्ध्यपर्वत का परस्पर विवाद हुआ तब विन्ध्याचल दिन २ बढ़नेलगा इतना बढ़ा कि सब जीवों का श्वास रुकगया तब व्याकुल हो सब देवता कैलास में गये और शिवजी के आगे सब बात कही महादेवजी ने भी सप्तऋषियों को बुलाया उनमें वशिष्ठआदि ऋषियों को तो हिमालय के घर पार्वतीजी के सम्बन्ध के लिये भेजा और अगस्त्यजी को आज्ञादी कि तुम जाकर विन्ध्याचल का निग्रह करो तब अगस्त्यजी ने प्रार्थना की कि हे महाराज! हम आपके विवाहवेष का दर्शन कियाचाहते हैं तब श्रीमहादेवजी ने कहा कि तुम जाकर विन्ध्य का निग्रह करो हम तुम को वेदारण्य में विवाह केही वेष से दर्शन देंगे यह आज्ञा पातेही अगस्त्यजी विन्ध्याचल में गये और उस पर्वत को अपने पैर से कि वह भूमि के समान होगया फिर अगस्त्य वहां से चले और

दक्षिणदिशा में बिचरते हुये गन्धमादनपर्वत में पहुँचे वहां अपने नाम से तीर्थ बनाया जिसमें अगस्त्यजी अपनी भार्या लोपामुद्रा सहित आजतक भी निवास करते हैं उस तीर्थ में स्नान करे और उसका जल पीवे तो फिर जन्म न होय जगत् में उस तीर्थ के समान कोई तीर्थ नहीं वह तीर्थ भुक्ति और मुक्ति को देनेहारा है दीर्घतपामुनि के पुत्र कक्षीवान् ने उस तीर्थ के प्रभाव से स्वनय की परमसुन्दरी कन्या से विवाह किया हे मुनी-श्वरो! सब पापों के हरनेहारी कक्षीवान् की कथा हम कहते हैं आप प्रीति से सुनो दीर्घतपा नाम बड़ा तपस्वी एक मुनि था उसके कक्षीवान् नाम पुत्र हुआ दीर्घतपा ने अपने पुत्र का यज्ञोपवीत किया यज्ञोपवीत के अन-न्तर कक्षीवान् अपने गुरुकुल में जाय उत्तङ्कमुनि से वेद पढ़नेलगा चारो वेद, वेदके अङ्ग, छह शास्त्र, इतिहास, पुराण, उपनिषद् आदि सब साठ वर्ष में पढ़े और गुरुको दक्षिणा देकर अपने घरको कक्षीवान् चला तबहाथ जोड़ गुरु से प्रार्थना की कि आप मुझे घर जाने की आज्ञा दीजिये और मुझपर कृपादृष्टि रखिये यह कक्षीवान् का वचन सुन उत्तङ्कमुनि बोले कि हे पुत्र! सुख से घर को जा और विवाहकर तेरे विवाह के लिये एक उपाय मैं कहता हूं वह तू सुन दक्षिणसमुद्र के तीरपर अगस्त्यमुनि का बनाया सब मनोरथ सिद्ध करनेहारा एक तीर्थहै वहां जाय नियमसे तीनवर्ष निवासकर चौथावर्ष लगतेही उस तीर्थ से श्वेतवर्ण का और चारदन्तों करके युक्त एक बहुत बड़ा हाथी निकलेगा उस हाथीपर तू चढ़कर राजा स्वनय की पुरी को जाना राजा स्वनय भी तुझे इन्द्र की भांति चतुर्दन्त हाथीपर चढ़े देख अपनी कन्या के लिये निश्चिन्त होजायगा उस राजा की कन्या ने यह प्रतिज्ञा कररक्खी है कि श्वेतवर्ण के चतुर्दन्त हाथीपर चढ़कर जो यहां आवेगा वही मेरा भर्ता होगा यह अपनी कन्या की प्रतिज्ञा सुन राजा को बड़ी चिन्ता हुई इसी अवसर में नारदमुनि वहां आये राजा ने उनका पूजन किया और सिंहासन पर बैठाय यह प्रार्थना की कि हे महाराज! मेरी कन्या ने यह प्रतिज्ञा की है कि श्वेतवर्ण चतुर्दन्त हाथीपर जो चढ़कर आवेगा वही मेरा पति होगा यह कन्या की प्रतिज्ञा सुन मुझे बड़ी चिन्ता हुई कि

ऐसा हाथी इन्द्र विना दूसरे के पास नहीं है और इस कन्या ने मूर्खपने
से प्रतिज्ञा कर ली जबतक इस कन्या का विवाह न होगा मुझे चैन नहीं
यह राजा का वचन सुन नारदजी ने कहा कि हे राजन् ! चिन्ता मत कर
थोड़ेही काल में कक्षीवान् नाम ब्राह्मण ऐसे हाथीपर चढ़कर आवेगा वही
तुम्हारा जामाता होगा इतना कह नारदमुनि देवलोक को गये उस दिन
से राजा स्वनय दिन रात अपनी कन्या के लिये वर की राह देखता है
इसलिये हे कक्षीवान् ! तू अगस्त्यतीर्थ को जा वहां तेरा कल्याण होगा
यह उत्तङ्कमुनि की आज्ञा पाय कक्षीवान् गन्धमादनपर्वत को चला कुछ
दिन में अगस्त्यतीर्थ पर पहुँचा एक दिन तीर्थोपवास किया दूसरे दिन
से नियमपूर्वक स्नान करनेलगा रात्रि को भी तीर्थ के तटपरही सोता
इसप्रकार एक दिन न्यून तीन वर्ष पूरे हुये उस दिन भी कक्षीवान् सायं
सन्ध्याकर उसी तीर्थ के तट पर सोया जब एक प्रहर रात्रि शेष रही तब
अकस्मात् घोरशब्द हुआ और बड़ा कोलाहल मचा उस शब्द को
सुन कक्षीवान् की निद्रा खुलगई और देखा कि मथुरा का राजा स्वनय
अपनी सेना लिये मृगया खेलने के लिये वहां आया है अनेक सिंह,
व्याघ्र, शूकर, मृग, हाथी आदि जीवोंको मारताहुआ राजा स्वनय अगस्त्य
तीर्थ के तटपर आपहुँचा और वहां डेरा किया इतने में प्रभात हुआ कक्षीवान्
ने शौच आदि कर तीर्थ में स्नान किया और सन्ध्यावन्दन कर मन्त्र का
जप करनेलगा इसी अवसर में कैलासपर्वत के तुल्य ऊंचा और श्वेतवर्ण
चतुर्दन्त एक हाथी निकला और कक्षीवान् के समीप आया कक्षीवान् ने
भी देखकर पहिंचान लिया कि मेरे गुरु ने यही हाथी बताया था और
स्नानकर तीर्थ को प्रणामकर कक्षीवान् उस हाथीपर चढ़ बैठा और राजा
स्वनय के डेरे में पहुँचा राजा ने भी हाथी से पहिंचाना कि यही कक्षी-
वान् है राजा उठकर कक्षीवान् के समीप आया और पूछा कि हे ब्राह्मण !
तू किसका पुत्र है तेरा नाम क्या है और इस हाथी पर चढ़ कहां जाता है
यह राजा का वचन सुन कक्षीवान् बोला कि मैं दीर्घतपा का पुत्र कक्षी-
वान् हूं और इस चतुर्दन्त हाथीपर चढ़ स्वनयराजा की कन्या विवाहने

जाता हूं यह कक्षीवान् का वचन सुन राजा अतिमुदित हो कहनेलगा कि हे कक्षीवान्! मैंही राजा स्वनय हूं जिसकी कन्या से तू विवाह किया चाहता है और तेरे दर्शन से मैं कृतार्थ हूं हे बालब्रह्मचारिन्! तुझे स्वागत हो तू मेरी कन्या को ग्रहण कर और उसके सहित गृहस्थधर्म का सेवन कर यह राजा का वचन सुन कक्षीवान् बोला कि हे राजन्! मेरा पिता दीर्घतपामुनि वेदारण्य में तप करता है उसके समीप एक ब्राह्मण आप भेजदेवें जो यह वृत्तान्त मेरे पिता से कहआवे राजा ने अपने पुरोहित सुदर्शन को दीर्घतपा के समीप जाने की आज्ञा दी सुदर्शन भी आज्ञा पातेही बहुत से हाथी घोड़े और सेना साथ ले राजा की भांति चला और कुछ दिन में वेदारण्य के बीच पहुँचा वहां देखा कि पर्णशाला के भीतर समाधि लगाये दीर्घतपामुनि बैठे हैं उनको प्रणाम किया मुनि ने नेत्र खोले तब राजपुरोहित ने पूछा कि हे मुनीश्वर! आप प्रसन्न हैं और आपका तप निर्विघ्न होता है यह कुशलप्रश्न सुन मुनि ने कहा कि हे सुदर्शन! सब प्रकार ईश्वर की अनुग्रह से कुशल है तुम तो प्रसन्न हो आप तो राजा स्वनय के पुरोहित सुदर्शन हो राजा को छोड़ बहुत सी सेना साथ ले इस वन में किस निमित्त आये यह मुनि का वचन सुन नम्र हो सुदर्शन ने प्रार्थना की कि आपकी कृपादृष्टि से मैं बहुत प्रसन्न हूं और राजा स्वनय ने आपको साष्टाङ्ग दण्डवत् प्रणामपूर्वक यह प्रार्थना की है कि आपका पुत्र कक्षीवान् गन्धमादनपर्वत में अगस्त्यतीर्थ पर रहता है वह तप, धर्म, कुल और रूप करके उत्तम है और वेद शास्त्र भली भांति जानता है उसको मैं अपनी कन्या मनोरमा दिया चाहता हूं मृगया खेलने के लिये मैं गन्धमादनपर्वत में आया और अब आपके पुत्र के समीप हूं आपका पुत्र यह कहता है कि पिताकी आज्ञा विना मैं विवाह नहीं करता इसलिये सुदर्शन को आपके पास भेजता हूं आप कृपाकर अपने पुत्रको विवाह करने की आज्ञा दीजिये इतना कह सुदर्शन बोला कि हे महाराज! यह राजा का सन्देश है सो आपसे कहा अब आप जो आज्ञा देवें सो की जाय सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इतना कह सुदर्शन चुप

होगया तब दीर्घतपामुनि बोले कि हे सुदर्शन ! राजा की इच्छा हमको अङ्गीकार है हम भी गन्धमादनपर्वत को चलेंगे इतना कह वेदारण्य के स्वामी को प्रणाम कर दीर्घतपामुनि भी सुदर्शन के साथ चले और छह दिन में अगस्त्यतीर्थ पर आ पहुँचे कक्षीवान् ने अपने पिता के चरणों पर प्रणाम किया पिता ने भी उसको अपनी गोदी में बैठाय स्नेह से आलिङ्गन किया और उसके मस्तक को सूंघा और पूछा कि हे पुत्र ! तैंने सब वेद और शास्त्र किसभांति पढ़े तब कक्षीवान् ने सब वृत्तान्त अपने पिता से कहा ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायामगस्त्यतीर्थमाहात्म्य कक्षीवदितिहासवर्णनंनाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

सत्रहवां अध्याय ॥

राजा स्वनय की कन्या से कक्षीवान् के विवाह का वर्णन ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! कक्षीवान् ने अपने पिता से यह वृत्तान्त कहा कि मैं सब शास्त्र और वेद पढ़चुका तब मेरे गुरु उत्तङ्क ने मुझे यहां भेजा मैं भी यहां आय राजा स्वनय की कन्या से विवाह करने के अर्थ गुरु की आज्ञानुसार इस अगस्त्यतीर्थ का सेवन करनेलगा तीन वर्ष के अनन्तर राजा स्वनय यहांही आगया और उसने मुझसे यह कहा कि हे ब्राह्मण ! मैं अपनी कन्या तुझे देता हूं उसीने आपके बुलाने के लिये अपने पुरोहित सुदर्शन को भेजा इतना कह कक्षीवान् चुप रहा सुदर्शन भी राजा के पास गया और कहा कि दीर्घतपामुनि आय पहुँचे हैं राजा भी मुनि का आगमन सुनतेही अपने तम्बू के बाहर निकल आया और अगस्त्यतीर्थ पर जाकर दीर्घतपामुनि के चरणों पर प्रणाम किया दीर्घतपामुनि ने भी उठकर राजा को आशीर्वाद दिया इसी अवसर में एक लाख शिष्य साथ लिये उत्तङ्कमुनि भी अगस्त्यतीर्थ में स्नान करने के लिये आये उत्तङ्क को देख कक्षीवान् उठा और उनके चरणों पर प्रणाम किया उत्तङ्क ने अपने शिष्य कक्षीवान् को आशीर्वाद दिया दीर्घतपा और उत्तङ्क भी परस्पर मिले और आसनपर बैठ प्रीति से भांति २ की

कथा कहनेलगे राजा ने भी उत्तङ्कमुनि को प्रणाम किया और दीर्घतपा मुनि से राजा स्वनय ने प्रार्थना की कि हे महाराज! विवाह का निश्चय कीजिये तब मुनि ने कहा कि कलही बहुत उत्तम मुहूर्त है इस लिये इस उत्तमक्षेत्र में कल ही विवाह होना चाहिये तुम कन्या को और अपनी रानियों को यहांही बुला लो यह मुनि का वचन सुन उसी समय राजा ने नादिरों को सब अन्तःपुर लाने की आज्ञा दी वे भी आज्ञा पातेही उत्तम घोड़ों पर चढ़ मधुरापुरी में पहुँचे और सब अन्तःपुरको लेकर शीघ्रही गन्धमादनपर्वत में आय पहुँचे दूसरे दिन दीर्घतपामुनि ने पुत्र के गोदान आदि संस्कार विधिपूर्वक किये फिर अपने पिता और गुरुसमेत चतुर्दन्त हाथीपर कक्षीवान् चढ़ा और विवाह के लिये तोरण वन्दन माला आदि से भूषित राजा के द्वारपर गया और हजारों ब्राह्मण स्वस्तिवाचन पढ़तेहुये इसके साथ गये कक्षीवान् को राजकन्या ने देखा और बहुत प्रसन्न हुई कि मेरी प्रतिज्ञा सत्य हुई कक्षीवान् जब राजद्वार पर पहुँचा तब राजा अपने मन्त्री और पुरोहित को साथ ले सम्मुख आया भूषण वस्त्रों से अलंकृत उत्तम ५ कन्याओं ने सोने चांदी के पात्रों से कक्षीवान् का नीराजन अर्थात् आरती की फिर सबके सब राजमन्दिर के भीतर गये राजा स्वनय ने उत्तङ्क और दीर्घतपा का पाद्य अर्घ्य आदि से पूजन किया सब एक बहुत उत्तम मण्डप में बैठे राजकन्या को सब भूषण वस्त्रों से अलंकृत कर वहां लाये राजकन्या ने आकर सब सभा के बीच अपने हाथ से चम्पे के पुष्पों की माला कक्षीवान् के गले में पहिनाई फिर उत्तङ्कमुनि ने वेदी पर अग्नि स्थापन कर उसके सब संस्कार किये और वधूवर से लाजा होम कराया और दोनों का पाणिग्रहण कराया सब वैदिककर्म उत्तङ्कमुनि ने कराये सब ब्राह्मणों ने वधू और वर को आशीर्वाद दिये राजा स्वनय ने दीर्घतपा उत्तङ्क वर के पक्ष के और अपने पक्ष के सब मनुष्यों को भोजन कराया और तीन लाख ब्राह्मणों को षट्रस भोजन कराय दक्षिणा ताम्बूल आदि दे प्रसन्न किया इस कारण विवाह होजाने के अनन्तर उत्तङ्कमुनि अपने आश्रम को गये और सब ब्राह्मण अपने २ देशों को गये

वह चतुर्दन्त हाथी अगस्त्यकुण्ड में प्रवेश करगया दीर्घतपामुनि ने अपने पुत्र और स्नुषासमेत अगस्त्यतीर्थ में स्नान किया और तीर्थ की बहुत प्रशंसा की फिर दीर्घतपामुनि ने अपने आश्रम में जाने के लिये राजा से पूछा राजा ने अपनी कन्या को पांच सौ ग्राम, एक लाख मुहरें, एक हज़ार दासी, दश हज़ार उत्तम २ पोशाकें, सौ पेटी भूषणोंकी, एक हज़ार रत्नों के हार और बहुत से हाथी, घोड़े, रथआदि दे बिदा किया दीर्घतपा मुनि राजा से बिदा हो सब सामग्री समेत अपने पुत्र और स्नुषा को साथ ले वेदारण्य को चले कुछ दिन में वहां पहुँचे और सुखपूर्वक सब निवास करनेलगे राजा भी अगस्त्यतीर्थ में स्नानकर अपनी सेना साथ ले अपनी राजधानी को गया इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! अगस्त्यतीर्थ के प्रभाव से कक्षीवान् का ऐसा उत्तम विवाह हुआ जो और का होना दुर्लभ है हे मुनीश्वरो ! यह इतिहास वेदसिद्ध है और धन, यश, आयुष्, सौभाग्य आदि देनेहारा है इसलिये सब को पढ़ना चाहिये इस इतिहास को जो पुरुष भक्ति से पढ़ें अथवा श्रवण करें उनको कभी दारिद्र्य नहीं होता और बहुत काल संसार के सुख भोगकर उत्तम गति पाते हैं ॥

इति श्रीस्कान्देसेतुमाहात्म्यभाषाव्याख्यायांकक्षीवद्विवाहनिष्पत्तिर्नामसप्तदशोऽध्यायः॥ १७॥

अठारहवां अध्याय ॥

रामतीर्थ का माहात्म्य सुतीक्ष्णमुनि की कथा और राजायुधिष्ठिर का इतिहास ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अगस्त्यकुण्ड में स्नानकर सब पापों के निवृत्त होने के लिये रामकुण्ड को जाय रघुनाथसरोवर के तीरपर अल्पदक्षिणा का यज्ञ भी करे तो वह भी सम्पूर्ण फल देता है जप, होम, वेदपाठ आदि वहां करे तो बहुत फल होता है एक मुट्ठी अन्न भी वहां ब्राह्मण को दे तो अनन्तफल होता है हे मुनीश्वरो ! रामकुण्ड का एक इतिहास हम वर्णन करते हैं जिसके श्रवण से महापातक भी निवृत्त होजायँ अगस्त्यमुनि के शिष्य रामचन्द्रजी के परमभक्त सुतीक्ष्णमुनि ने उस सरोवर के तीर बहुत काल तप किया नित्य उस सरोवर में स्नानकर रामषडक्षर

महामन्त्र का पांच सहस्र जप करते और भिक्षा के अन्न का भोजन करते इस भांति तप करते २ सुतीक्ष्णमुनि को बहुतकाल बीता एक दिन सीताराम का हृदय में ध्यानकर भक्ति से सुतीक्ष्णमुनि स्तुति करनेलगे॥

सुतीक्ष्ण उवाच॥ नमस्ते जानकीनाथ नमस्ते हनुमत्प्रिय॥ नमस्ते कौशिकमुनेर्यागरक्षणदीक्षित॥ १॥ नमस्ते कौशलेयाय विश्वामित्रप्रियाय च॥ नमस्ते हरकोदण्डभञ्जकामरसेवित॥ २॥ मारीचान्तक राजेन्द्र ताडकाप्राणनाशन॥ कबन्धारे हरे तुभ्यं नमो दशरथात्मज॥ ३॥ जामदग्न्यजिते तुभ्यं खरविध्वंसिने नमः॥ नमः सुग्रीवनाथाय नमो बालिहराय ते॥ ४॥ विभीषणभयक्लेशहारिणे मलहारिणे॥ अहल्यादुःखसंहर्त्रे नमस्ते भरताग्रज॥ ५॥ अम्भोधिगर्वसंहर्त्रे तस्मै सेतुकृते नमः॥ तारकब्रह्मणे तुभ्यं लक्ष्मणाग्रज ते नमः॥ ६॥ रक्षःसंहारिणे तुभ्यं नमो रावणमर्दिने॥ कोदण्डधारिणे तुभ्यं सर्वरक्षाविधायिने॥ ७॥

यह स्तुति सुतीक्ष्णमुनि नित्य पढ़ते और रामसरोवर में स्नानकर षडक्षरमन्त्र का जप करते इसप्रकार तप करते २ रामचन्द्रजी में दृढ़भक्ति होगई और दिव्यज्ञान भी उत्पन्न हुआ विना पढ़े सब वेदशास्त्र आगये विना सुने पदार्थ को जानलेना दूसरे शरीर में प्रवेश करना आकाश में गमन करना सब कलाओं को जानना सब लोकोंमें चलेजाना देवताओंके साथ सम्भाषण करना अतीन्द्रिय पदार्थों को भी जानना पिपीलिका आदि सब जीवोंकी भाषा समझना कैलास वैकुण्ठ ब्रह्मलोक आदिमें जाना और चौदह भुवनों में अपनी इच्छा से विचरना इत्यादि अनेक सिद्धि सुतीक्ष्ण मुनि को प्राप्त हुईं जो योगियों को भी दुर्लभ हैं हे मुनीश्वरो! यह सब रामतीर्थ का प्रभाव है उस तीर्थ में स्नान करने से सब पापों का नाश होता है और सब सिद्धि और भोग मोक्ष मिलते हैं अपमृत्यु और नरकका

भय निवृत्त होता है रामचन्द्र में दृढ़भक्ति होती है इस तीर्थ के तटपर एक शिवलिङ्ग है रामतीर्थ में स्नानकर उस लिङ्ग का दर्शन करे तो मोक्ष भी दुर्लभ नहीं और पदार्थों की क्या कथा है? राजा युधिष्ठिर इस तीर्थ में स्नान कर शिवलिङ्ग के दर्शनकर असत्यभाषण के महादोष से तत्क्षण छूटगया शौनक आदि ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी! युधिष्ठिर ने धर्मपुत्र होकर क्यों असत्य कहा और फिर उस दोष से क्योंकर छूटा यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! जिस कारण युधिष्ठिर ने असत्य कहा और रामतीर्थ के प्रभाव से जिस भांति वह पाप निवृत्त हुआ हम वर्णन करते हैं युधिष्ठिर आदि पांचपुत्र पाण्डु के और दुर्योधन आदि सौ पुत्र धृतराष्ट्र के थे इनका राज्य के लिये परस्पर बड़ा बैर बढ़ा तब अठारह अक्षौहिणी सेना ले कुरुक्षेत्र में आय युद्ध करनेलगे दशदिन भीष्मपितामह ने युद्ध किया और पांच दिन धृष्टद्युम्न का और द्रोणाचार्य का घोर संग्राम हुआ द्रोणाचार्य ने अनेकप्रकार के अस्त्र और शस्त्रों से पाण्डवों की सेना को पीड़ा दी धृष्टद्युम्न ने भी अपने बाणों से द्रोण की सेना को भेदन किया तब द्रोणाचार्य ने ऐसी बाणों की वर्षा की कि पाण्डवों की सेना भयभीत हो चारो ओर भगी तब क्रोधकर द्रोणाचार्य से अर्जुन युद्ध करनेलगा उन दोनों गुरुशिष्यों का युद्ध देखने के लिये देवता विमानों में बैठ २ आये जिनसे आकाश भरगया ऐसा युद्ध हुआ कि जिसकी कोई उपमा नहीं देसक्के द्रोणाचार्य ने अर्जुन के पराक्रम की बहुत प्रशंसा की और अपने प्रियशिष्य अर्जुन को छोड़ पांचालों से द्रोणाचार्य युद्ध करने लगे द्रोणाचार्य ने क्षणमात्र में अस्सीहज़ार चतुरङ्गिणी सेना पांचालों की मार दी तब क्रोधकर धृष्टद्युम्न युद्ध करनेलगा परन्तु द्रोणाचार्य के बाणों के सम्मुख न ठहरसका और युद्ध छोड़ भगा उसको भीमसेन ने आश्वासनकर अपने रथ में बैठाया और द्रोणाचार्य से कहा जो तुम सरीखे दुष्ट ब्राह्मण ब्रह्मकर्म छोड़ अस्त्रविद्या सीख युद्ध न करते तो इतने क्षत्रियों का क्यों नाश होता ब्राह्मणों का परमधर्म अहिंसा है हिंसा करके अपने कुटुम्ब का पालन व्याध करते हैं तू एक पुत्र के लिये इतने राजाओं को

युद्ध में मारता है परन्तु वह तेरा पुत्र युद्ध में मारागया तोभी तुझे लज्जा और शोक नहीं होता यह भीमसेन का वचन सुन द्रोणाचार्य ने युधिष्ठिर से पूछा तब युधिष्ठिर ने भी यही कहा कि आपका पुत्र मारागया युधिष्ठिर का वचन सत्य मान द्रोणाचार्य ने शस्त्र त्यागदिये और योग की रीति से प्राण त्याग करने के लिये समाधि करनेलगे यह अवसर पाय धृष्टद्युम्न खड्ग लेकर द्रोणाचार्य का शिर काटने दौड़ा उसको सब पाण्डव इस कर्म से रोकते थे इतने में द्रोणाचार्य के मस्तक से एक ज्योति निकलकर ऊपर को गई यह चमत्कार कृपाचार्य, श्रीकृष्ण, युधिष्ठिर, अर्जुनआदि सबों ने देखा इसप्रकार जब द्रोणाचार्य ने प्राण त्यागदिये पीछे मृतशरीर का शिर धृष्टद्युम्न ने काटलिया इसप्रकार द्रोणाचार्य के मरने पर उनकी सब सेना भय से भागी और धृष्टद्युम्न पाण्डवआदि बहुत प्रसन्न हुये तब द्रोणाचार्यके पुत्र अश्वत्थामा ने दुर्योधन से पूछा कि हमारी सेना क्यों भगीजाती है द्रोणाचार्यका मरण दुर्योधन तो अपने मुखसे नहीं कहसका परन्तु कृपाचार्य को संकेत किया तब कृपाचार्य बोले कि हे अश्वत्थामा! तुम्हारा पिता युद्ध में ब्रह्मास्त्र करके पाण्डवों की सेना को दग्ध करनेलगा तब श्रीकृष्णचन्द्रने पाण्डवों से कहा कि द्रोणाचार्य के जीतनेका एकही उपाय है जो कोई प्रामाणिक मनुष्य यह कहदेवे कि तुम्हारा पुत्र अश्वत्थामा युद्ध में मारागया तो द्रोणाचार्य शस्त्र त्यागकर युद्धसे निवृत्त होय नहीं तो यह सब सेना का संहार करदेगा इसलिये यह वचन धर्मपुत्र युधिष्ठिर कहें यह उपाय द्रोणाचार्य के जीतने का है धर्म से किसीभांति द्रोण को नहीं जीतसके और शत्रु को अधर्मसे भी जीतना चाहिये यह श्रीकृष्णचन्द्रका वचन सुन पहिले भीमसेन ने कहा कि हे द्रोण! तेरा पुत्र मारागया भीम के वचन पर द्रोणाचार्य को निश्चय न हुआ तब युधिष्ठिर से पूछा कि हे धर्मपुत्र! तू सत्य कह कि अश्वत्थामा मारागया कि जीता है यह गुरु का वचन सुन युधिष्ठिर का चित्त डोलायमान हुआ कि मैं क्या कहूं इसी अवसर में भीमसेन ने अश्वत्थामा नाम एक हाथी को युधिष्ठिर के सम्मुख मारा था उसीके उद्देश से युधिष्ठिर ने कहा कि हां अश्वत्थामा को भीमने मारदिया यह युधिष्ठिर का

वचन सुन शस्त्र छोड़ तेरा पिता युद्ध से निवृत्त हुआ पीछे युधिष्ठिर ने यह भी कहदिया कि अश्वत्थामा एक हाथी था परन्तु तुम्हारे पिता की यह प्रतिज्ञा थी कि शस्त्र को त्यागकर फिर ग्रहण न करेंगे इसलिये फिर शस्त्र न धारा धृष्टद्युम्न को अपनी मृत्यु जान प्राण त्यागने के लिये रथमेंही तुम्हारे पिता समाधि करनेलगे तब मस्तक को भेदनकर ज्योतिरूप उनके प्राण निकलकर ऊपर को चलेगये पीछे से जाकर धृष्टद्युम्न ने तुम्हारे पिताके केश पकड़ खड्ग से शिर काटलिया पाण्डव आदि तो उसको इस दुष्कर्म से रोकते थे परन्तु उसने एक की न मानी सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! कृपाचार्य से अपने पिता की मृत्यु का समाचार सुन अश्वत्थामा रोदन करनेलगा बहुत देर विलाप कर क्रोध से जलताहुआ यह वाक्य बोला कि जिसने झूठ बोल मेरे पिता से शस्त्र त्याग कराया उसको और जिसने मेरे पिता का शिर काटा उसको और सब पाण्डवों को शीघ्रही मारूंगा श्रीकृष्ण आदि सब मेरा पराक्रम देखें हे मुनीश्वरो ! यह अतिघोर प्रतिज्ञा उससमय अश्वत्थामा ने की इतने में सायंकाल हुआ तब दोनों ओर के राजा युद्ध बन्दकर अपने २ डेरे को गये इसप्रकार अठारह दिन महाभारत का युद्ध हुआ उसमें भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, दुर्योधन आदि बड़े २ वीर मारेगये अन्त में राजा युधिष्ठिर ने सबका क्रियाकर्म किया फिर धौम्य आदि मुनियोंसहित पाण्डव हस्तिनापुर में आये और राजा धृतराष्ट्र को प्रणाम किया और धृतराष्ट्र की आज्ञा पाय अपने मन्दिरों में प्रवेश किया कुछ दिन के अनन्तर नगर के लोग और धौम्य आदि मुनीश्वरों ने युधिष्ठिर का राज्याभिषेक करना चाहा तब आकाशवाणी हुई कि हे धर्मपुत्र, युधिष्ठिर ! तू राज्याभिषेक मत कराव तू राज्य के योग्य नहीं है तैंने छलसे अपने गुरु द्रोणाचार्य को मारा इसलिये तुझे बड़ा पाप लगा है जबतक प्रायश्चित्त न करेगा राज्यके योग्य न होगा अब तू प्रायश्चित्त कर यह आकाशवाणी सुन युधिष्ठिर बहुत व्याकुल हुआ और कहनेलगा कि देखो मैंने राज्यलोभ से कैसा घोर पाप किया मैं बड़ा दुष्ट क्रूर और साहसी हूं अब मैं कौन दान, यज्ञ, प्रायश्चित्त आदि कर्म करूं जिससे यह पातक निवृत्त

होय इसप्रकार राजा युधिष्ठिर चिन्ता कररहा था इतने में श्रीवेदव्यासजी वहां आये राजा युधिष्ठिर ने उठकर उनको प्रणाम किया और आसन पर बैठाय पाद्य अर्घ्य आदि से उनका पूजन कर अपने दुःख का सब वृत्तान्त उनको सुनाया जो आकाशवाणी ने कहा था व्यासजी धर्मराज का वाक्य सुन बहुत काल तक ध्यान कर कहनेलगे कि हे युधिष्ठिर! शोक मत कर इस पाप की शान्ति के लिये हम एक उपाय कहते हैं वह करो दक्षिण समुद्र में गन्धमादनपर्वत के बीच रामसरोवर नाम एक अतिउत्तम तीर्थ है जिसके दर्शनमात्र से सब पातक निवृत्त होजाते हैं जिसभांति सूर्य के आगे अन्धकार रामतीर्थ का दर्शन करतेही ब्रह्महत्या निवृत्त होजाती है इसलिये हे धर्मपुत्र! जाकर उस तीर्थ में स्नान करो तब पाप निवृत्त होगा और राज्य की योग्यता होगी उस तीर्थ के तटपर गौ, भूमि, तिल, सुवर्ण, चांदी, वस्त्र भोजनआदि का दान करो तब अवश्य सब पापों से छूटोगे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! व्यासजी का यह वचन सुन अपने पुरोहित धौम्यमुनि को और भीमसेन आदि अपने भाइयों को साथ ले राज्यव्यवहार सहदेव को सौंप राजा युधिष्ठिर पैदलही रामतीर्थ को चले कुछ दिन में वहां जाय पहुँचे वहां तीर्थ में विधिपूर्वक स्नान किया और तीर्थश्राद्ध कर व्यासजी ने जो दान बताये थे सब किये इसीप्रकार एक महीने तक निराहार रहकर नित्य तीर्थ में स्नान किया और धनका लोभ छोड़ राजा युधिष्ठिर ने बड़े २ दान रामतीर्थ के तटपर किये एक मास के अनन्तर आकाशवाणी हुई कि हे राजा, युधिष्ठिर! तुम्हारे सब पाप नष्ट हुये छल से असत्य बोलकर आचार्य के मारने से जो पाप हुआ था वह भी निवृत्त हुआ अब अपने नगर को जाकर राज्याभिषेक कराय और धर्म से प्रजा का पालन कर इतना कह आकाशवाणी बन्द हुई राजा युधिष्ठिर भी प्रसन्न हो आकाशवाणी को प्रणामकर अपने भाइयोंसमेत हस्तिनापुर को चले कुछ दिनों में हस्तिनापुर पहुँचे वहां सब नगर के लोग और मुनीश्वरों ने राजा युधिष्ठिर का अभिषेक किया और राजा युधिष्ठिर धर्मसे राज्य करने लगे हे मुनीश्वरो! इसभांति रामतीर्थ के प्रभाव से राजा युधिष्ठिर निष्पाप

और राज्य के योग्य हुये हे मुनीश्वरो ! सब पाप का हरनेहारा रामतीर्थ का यह थोड़ा सा प्रभाव हमने वर्णन किया जो पुरुष इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह निष्पापहो कैलास को जाय और जन्म मरण के भय से छूटे ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सुतीक्ष्णमुनिकथा-
नकंनामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥

उन्नीसवां अध्याय ॥

लक्ष्मणतीर्थ का माहात्म्य और बलदेवजी की कथा ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! तारकब्रह्म श्रीरामचन्द्रजी के तीर्थ में स्नान कर लक्ष्मणतीर्थ को जाय लक्ष्मणतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य निष्पाप हो मुक्ति पाता है लक्ष्मणतीर्थ में स्नान करने से दारिद्र्य निवृत्त होता है और आयुष्मान् गुणवान् विद्वान् और धार्मिक पुत्र उत्पन्न होता है जो पुरुष उस तीर्थ के तटपर बैठ मन्त्र जपे वह विना पढ़े सब वेद और शास्त्र का जाननेहारा होजाय उस तीर्थ के तटपर लक्ष्मण ने शिवलिङ्ग स्थापन किया है तीर्थ में स्नानकर लिङ्ग का दर्शन करे तो रोग दारिद्र्य और संसार के क्लेशों से मनुष्य छूटे श्रीकृष्णचन्द्र के बड़े भ्राता बलदेवजी लक्ष्मणतीर्थ में स्नानकर और लक्ष्मणेश्वर का सेवनकर ब्रह्महत्या से छूटे यह सुन मुनीश्वरों ने पूछा कि हे सूतजी ! बलदेवजी ने ब्रह्महत्या क्योंकर की और फिर उससे किसप्रकार छूटे यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! पूर्वकाल में कौरव पाण्डवों का युद्ध होनेलगा उससमय शेष के अवतार बलदेवजी ने विचार किया जो हम कौरवों के पक्ष में रहें तो पाण्डव कोप करेंगे और जो पाण्डवों की ओर रहें तो दुर्योधन बुरा मानेगा इसलिये यहां रहना उचित नहीं यह मनमें निश्चयकर तीर्थयात्रा के उद्देश से बलदेवजी चले पहिले प्रभासतीर्थ में जाय विधि से स्नानकर देवता ऋषि पितरों का तर्पणकर और ब्राह्मणों को दान दे पश्चिम की ओर सरस्वती नदी के तीर २ चले मार्ग में पृथूदक, बिन्दुसर, मुक्तिदतीर्थ, ब्रह्मतीर्थ आदि तीर्थों में स्नान करते गङ्गा, यमुना, सिन्धु, शतद्रू आदि नदियों में भी

स्नान दान आदि कर्म करते बलदेवजी कुछ काल में नैमिषारण्यतीर्थ पर पहुँचे उनको आये देख नैमिषारण्य के सब तपस्वी आसनों से उठे और बड़े आदर से बलदेवजी को आसन पर बैठाय कन्दमूल आदि से उनका सब ऋषियों ने पूजन किया परन्तु व्यासजी के शिष्य सूतजी ऊंचे आसन पर बैठे थे उनने बलदेवजी को उत्थान न दिया और उनको प्रणाम भी न किया यह देख बलदेवजी को बड़ा क्रोध उत्पन्न हुआ कि देखो सब मुनियों ने हमारा सत्कार किया और यह सूत आसन से भी न उठा यह मन में विचार बलदेवजी बोले कि यह निन्द्यजाति सूत मुनियों के बीच ऊंचे सिंहासन पर बैठा यह बहुत अनुचित बात है और हमारा इसने अनादर किया न तो आसन से उठा न प्रणाम किया इसने व्यासजी से पुराण, इतिहास, धर्मशास्त्र आदि पढ़े हैं उसीसे इतना अहंकार इसको है कि हम को देख प्रणाम न किया और आसन भी नहीं छोड़ा व्यासजी के शिष्य पैल वैशम्पायनआदि ब्राह्मण ऐसा अनुचितकर्म कभी नहीं करते इसलिये इस दुष्टको हम मारेंगे हमारा जन्म दुष्टों को दण्ड देने के लिये है और हमारे हाथ से मृत्यु पाय यह दुष्ट भी शुद्ध होजायगा इतना कह बलदेवजी ने कुश के अग्र करके सूत का शिर काटलिया यह देख मुनियों ने हाहाकार किया और बलदेवजी से कहा कि आपने बड़ा अधर्म किया हम सबने मिलकर यह ऊंचा आसन इसको दिया है और अक्षय आयुर्दाय भी इसको दिया था यह जानकर भी आपने ब्रह्महत्या की आप जगत् के प्रभु हैं इसलिये आपका कोई नियामक नहीं परन्तु आपही विचार कर इस ब्रह्महत्या का प्रायश्चित्त कीजिये यह मुनियों का वचन सुन बलदेवजी बोले कि हे मुनीश्वरो! लोकमर्यादा के लिये हम प्रायश्चित्त करेंगे वास्तव में तो हमको पाप हैही नहीं अब आप सब हमको प्रायश्चित्त बतावें और आपने इसको अक्षय आयुर्दाय दिया है इसलिये हम इसको अपनी योगमाया करके फिर जीता करदेते हैं तब मुनियों ने कहा कि हे बलदेवजी! आपका शस्त्र और हमारा वर दोनोंही सफल रहें ऐसा काम कीजिये तब बलदेवजी ने कहा कि हे मुनीश्वरो! वेद में पुत्रको आत्मा

के तुल्य लिखा है इसलिये इस सूतसे दीर्घायु और बुद्धिमान् पुत्र होगा वही आपको पुराण सुनावेगा इतना कह फिर बलदेवजी ने कहा कि हे मुनीश्वरो! और जो कुछ आप चाहते हैं कहें हम अभी आपका अभीष्ट सिद्ध करेंगे और हमने यह पाप अज्ञान से किया इसका आप प्रायश्चित्त बतावें तब मुनि कहनेलगे कि हे बलदेवजी! इल्वलदैत्य का पुत्र बल्वल है वह सदा हमारे यज्ञको दूषित करता है उस हमारे कण्टक दुष्ट दैत्य को आप मारदेवें यही हमारा बड़ा सत्कार है वह दैत्य हमारे यज्ञ में अस्थि, विष्ठा, मूत्र, रुधिर, मांस, मद्यआदि वर्षाता है और इस भारतवर्ष में जितने तीर्थ हैं उनमें आप एक वर्ष स्नानकरें तब आप शुद्ध होजायँगे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! मुनीश्वर इतना कहते थे कि बड़ा प्रचण्ड पवन चला और यज्ञशाला में विष्ठा मूत्र आदि की वृष्टि होनेलगी और बल्वलदैत्य त्रि-शूल हाथ में लिये यज्ञशाला के समीप बलदेवजी को देख पड़ा बलदेवजी ने देखा कि दग्ध हुये पर्वतके तुल्य वह दैत्य जिसके ताम्र के रङ्ग की बड़ी दाढ़ी और बड़ी २ दाढ़ें हैं और पर्वत की कन्दरा का सा जिसका अति भयंकर मुख है तब बलदेवजी ने अपने हल और मूसल का स्मरण किया स्मरण करतेही दोनों आयुध आगये तब बलदेवजीने हलसे उस दैत्यको खींचा और मूसलसे उसके मस्तक को चूर्ण किया तब बल्वल भूमिपर गिरा और सब मुनि बलदेवजी की स्तुति करनेलगे और बलदेवजी का सब मु-नियों ने तीर्थजलसे अभिषेक किया और कमलों की वैजयन्तीमाला सुन्दर श्वेतवस्त्र और भूषण बलदेवजी को दिये बलदेवजी ने वे सब धारण किये और मुनियोंसे विदा हो तीर्थयात्राको चले एक वर्ष सब तीर्थों में बलदेवजी ने स्नान किया और अपने नगर को चले तब पीछे एक कृष्णवर्ण की छाया देखी जो घोरशब्द करती चली आती थी और यह आकाशवाणी भी सुनी कि हे बलदेवजी! एक वर्ष आपने तीर्थयात्रा की परन्तु ब्रह्म-हत्या नष्ट न हुई यह वाणी सुन और उस भयंकर छाया को देख बलदेवजी बड़े खिन्न हुये कि देखो एक वर्ष हमने प्रायश्चित्त किया तोभी ब्रह्महत्या नष्ट न हुई अब क्या करें तब नैमिषारण्य में जाय बलदेवजीने सब वृत्तान्त

मुनियों से कहा तब मुनि बोले कि हे बलदेवजी! जो आपकी ब्रह्महत्या नष्ट नहीं हुई तो आप दक्षिणसमुद्र के बीच गन्धमादन पर्वत में जाय लक्ष्मणतीर्थ में स्नानकर लक्ष्मणेश्वर शिव का पूजन करें तब यह हत्या सम्पूर्ण नाशको प्राप्त होजायगी सूतजी कहतेहैं कि हे मुनीश्वरो! मुनियों का वचन सुन बलदेवजी लक्ष्मणतीर्थ पर पहुँचे वहां तीर्थमें स्नानकर गौ, भूमि, अन्न, सुवर्णआदि सब वस्तु दानकर ब्राह्मणों को दीं और लक्ष्मणेश्वरका पूजन किया तब आकाशवाणी हुई कि हे बलदेवजी! अब तुम्हारी ब्रह्महत्या सम्पूर्ण नष्ट हुई सुख से अपनी पुरी को जावो यह वाणी सुन बलदेवजी ने उस तीर्थ की बहुत प्रशंसा की और धनुष्कोटि आदि सब तीर्थों में स्नानकर रामनाथ का दर्शन कर प्रसन्नता से द्वारका को आये हे मुनीश्वरो! ब्रह्महत्या आदि पातक हरनेहारे लक्ष्मणसरोवर का हमने यह माहात्म्य वर्णन किया जो पुरुष भक्तिसे इस अध्याय को पढ़ें अथवा श्रवण करें वे अवश्य मुक्ति पाते हैं॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां लक्ष्मणतीर्थमाहात्म्यबलदेवकथानकंनामैकोनविंशोऽध्यायः॥ १९॥

बीसवां अध्याय॥

जटातीर्थ का माहात्म्य और शुकदेवजी की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! ब्रह्महत्या आदि पापों के निवृत्त करनेहारे लक्ष्मणतीर्थ में स्नानकर चित्त की शुद्धि के लिये जटातीर्थ में जाय जन्म, मरण, रोग आदि करके पीड़ित जीवों के अज्ञान नाश करनेके लिये जटातीर्थ से उत्तम कोई तीर्थ नहीं कोई पुरुष ज्ञान की प्राप्ति के लिये वेदान्त पढ़ते हैं परन्तु उसका अनुभव होना कठिन है वेदान्तरूप समुद्र है जिसमें पूर्वपक्ष ग्राह और उत्तरपक्ष बड़े २ मत्स्य हैं उसमें पड़कर मूढ़ पुरुष मोहको प्राप्त होते हैं चित्त की शुद्धि के लिये वेदान्त पढ़ते हैं परन्तु चित्त की शुद्धि नहीं होती और लोगों से कलह करते फिरते हैं हे मुनीश्वरो! वेदान्त पढ़ने से भ्रमही बढ़ता है चित्त की शुद्धि नहीं होती इसलिये हम वेदान्तशास्त्र को उत्तम नहीं समझते जो विना

परिश्रम चित्तकी शुद्धि चाहो तो जटातीर्थ का सेवन करो यह हम सबको कहते हैं पूर्वकाल में सबके उपकार के अर्थ यह तीर्थ अज्ञान हरनेहारा साक्षात् सदाशिव ने गन्धमादनपर्वत में बनाया है और रावण को मार रामचन्द्रजी ने इस तीर्थ में जटा धोई थी इससे उस तीर्थ का नाम जटातीर्थ पड़ा साठिहज़ार वर्ष गङ्गास्नान करे सिंह की बृहस्पति में गोदावरी में स्नान करे और हज़ारबार सिंह की बृहस्पति में गोमतीस्नान करे तब जितना पुण्य होताहै उतना पुण्य जटातीर्थ के दर्शनमात्रसे होजाता है जटातीर्थ में स्नान करनेहारे मनुष्योंका अन्तःकरण शुद्ध होजाता है और अज्ञान निवृत्त होता है अज्ञान नाश होने से ज्ञान प्राप्त होकर मुक्ति मिलती है और अखण्ड सच्चिदानन्दरूप प्राप्त होताहै इसमें एक प्राचीन इतिहास भी है पूर्वकाल में सब शास्त्र वेद के जाननेहारे और महाज्ञानी श्रीवेदव्यासजी से शुकदेवजी ने पूछा कि हे पितः! आप ऐसा उपाय बतावें जिससे अज्ञान निवृत्त होकर ज्ञान प्राप्त होय और मोक्ष मिले मैंने आप से वेदान्त, इतिहास, पुराण आदि सब पढ़े परन्तु अन्तःकरण की शुद्धि न हुई अब ऐसा उपाय बतावें जिससे चित्त शुद्ध होय यह अपने पुत्र शुकदेव का वचन सुन वेदव्यासजी कहनेलगे कि हे पुत्र! हम अतिगुप्त बात कहते हैं जिससे अविद्याग्रन्थि का भेदन होकर ज्ञान की प्राप्ति होय दक्षिणसमुद्र के बीच रामसेतु के मध्य में गन्धमादनपर्वत है उसके बीच पाप हरनेहारा जटातीर्थ है जहां श्री रामचन्द्रजी ने जटा धोइ थी और रामचन्द्रजी ने उसी तीर्थ को वर दिया कि जो इस तीर्थमें स्नान करेगा उसका अन्तःकरण शुद्ध होजायगा दान, यज्ञ जप, तप, उपवास आदि विना किये जटातीर्थ में स्नानमात्र से अन्तःकरण शुद्ध होजाता है उस तीर्थ में स्नान करने से सब विपत्ति दूर होती हैं और पुण्यलोक की प्राप्ति होती है इस तीर्थ से उत्तम जप, तप, नियम आदि कोई नहीं धन, यश, आयुष्, मङ्गल, पुण्य, पवित्रता, ज्ञान आदि सब पदार्थ जटातीर्थ में स्नान करने से मिलते हैं भृगु ने अपने पिता वरुण से अन्तःकरण के शुद्ध का उपाय पूछा तब वरुणने भृगु से यही कहा कि के बीच जटातीर्थ में स्नान करने से अन्तःकरण शुद्ध

होता है तब भृगु ने जाकर जटातीर्थ में स्नान किया जिससे भृगु की बुद्धि शुद्ध होगई और दिव्य अद्वैत ज्ञान उत्पन्न हुआ और सच्चिदानन्द अखण्ड चैतन्यस्वरूप भृगु होगया शिवजी के अंश दुर्वासामुनि ने जटातीर्थ में स्नान कर उत्तम ज्ञान पाया विष्णु के अवतार दत्तात्रेयमुनि ने भी जटातीर्थ में स्नान कर ब्रह्मज्ञान पाया जो अज्ञान का नाश किया चाहे तो जटातीर्थमें स्नान करे हे पुत्र, शुकदेव! तू भी अन्तःकरण की शुद्धि के लिये जटातीर्थ में जाकर स्नान कर यह पिता का वचन सुन शुकदेवजी रामसेतु को चले वहां जाय जटातीर्थ में संकल्पपूर्वक शुकदेवजी ने स्नान किया तब उनको अन्तःकरण शुद्ध होकर आत्मज्ञान प्राप्तहुआ जो मनशुद्धि की इच्छा रखता होय वह जटातीर्थ में स्नान करे कल्पवृक्ष के तुल्य जटातीर्थ के होते भी अज्ञानी पुरुष और तीर्थों को ढूंढ़ते फिरते हैं जटातीर्थ में स्नान करने से भुक्ति और मुक्ति दोनों मिलती हैं वेदपाठ, यज्ञ, तप, व्रत, दान, उपवास आदि करके कष्टसे मन शुद्ध होता है और जटातीर्थ में स्नानमात्रसे होजाता है जटातीर्थ का माहात्म्य हम नहीं वर्णन कर सक्के ब्रह्मा, विष्णु, शिवजी जटातीर्थ के माहात्म्य को भलीभांति जानते हैं जटातीर्थ के तुल्य कोई तीर्थ न हुआ न होगा जटातीर्थ के तीरपर श्राद्ध करने से गयाश्राद्ध के तुल्य फल होता है जटातीर्थ में स्नान करने से पाप, नरक और दारिद्र्य का भय नहीं होता सूत जी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह जटातीर्थ का माहात्म्य हमने थोड़ा सा कहा जिस तीर्थ के प्रभाव से शुकदेवजी ने ज्ञान पाया जो इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह सब पापों से छूट विष्णुलोक को जाता है॥

इति श्रीस्कान्दे जटातीर्थमाहात्म्यशुकदेवकथानंनामविंशोऽध्यायः॥ २०॥

इक्कीसवां अध्याय॥

लक्ष्मीतीर्थ का माहात्म्य और पाण्डवों को सम्पत्ति प्राप्त होने का वर्णन॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जटातीर्थ में स्नान कर शुद्धचित्त हो लक्ष्मीतीर्थ को जाय जिस मनोरथ से लक्ष्मीतीर्थ में स्नान करे वही मनोरथ सिद्ध होता है दुःख दारिद्र्य हरनेहारा और धन धान्य सुख सम्पत्ति देनेहारा लक्ष्मीतीर्थ है श्रीकृष्ण भगवान् की प्रेरणा से धर्मपुत्र युधिष्ठिर ने

इन्द्रप्रस्थ से आकर लक्ष्मीतीर्थ में स्नान किया तब बड़ा ऐश्वर्य पाया शौनक आदि ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी ! राजा युधिष्ठिर ने जिसभांति ऐश्वर्य पाया वह आप वर्णन करें तब सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! धृतराष्ट्र की आज्ञा से पाण्डव इन्द्रप्रस्थ में रहते थे एक समय उनके मिलने के लिये द्वारका से श्रीकृष्णचन्द्र आये पाण्डव भी श्रीकृष्णचन्द्र को देख परमहर्षित हुये और उनको बड़े आदर से अपने महल में रक्खा एक दिन राजा युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णचन्द्र का पूजनकर पूछा कि हे श्रीकृष्णचन्द्र ! जिस कर्म से बड़ा ऐश्वर्य प्राप्त होय वह आप हमको बतावें तब श्रीकृष्णचन्द्र कहनेलगे कि हे महाराज ! गन्धमादनपर्वत में एक लक्ष्मीतीर्थ है उसमें स्नान करने से ऐश्वर्य प्राप्त होता है धन धान्य बढ़ता है शत्रुवों का नाश होता है आप भी उस तीर्थ में स्नान करें उस तीर्थ में स्नान करके देवताओं ने परम ऐश्वर्य पाया और दैत्यों को मारा उस तीर्थ में स्नान करने से राज्य धन और धर्म शीघ्रही प्राप्त होते हैं तप, दान, यज्ञ और ब्राह्मणों के आशीर्वाद से जिस भांति ऐश्वर्य की वृद्धि होती है ऐसेही लक्ष्मीतीर्थ के स्नान से भी होती है सब विघ्न पाप और रोग लक्ष्मीतीर्थ में स्नान करने से दूर होते हैं और परमकल्याण प्राप्त होता है इस तीर्थ में स्नान करने से नलकूबर ने सब अप्सराओं में मुख्य रम्भा अप्सरा पाई कुबेर लक्ष्मीतीर्थ में स्नान कर महापद्म आदि नवनिधियों के स्वामी हुये इसलिये हे महाराज ! आप भी अपने भाइयों सहित लक्ष्मीतीर्थ में स्नान करें तो सब शत्रुवों को जीत बड़ी लक्ष्मी पावेंगे इसमें कुछ सन्देह न कीजिये यह श्रीकृष्णचन्द्र का वचन सुन अपने भाइयों को ले राजा युधिष्ठिर गन्धमादनपर्वत को चले वहां लक्ष्मीतीर्थ पर पहुँच सबने स्नान किया इसी भांति नित्य एक मास तक स्नान करते रहे और गौ, भूमि, तिल, सुवर्ण आदि दान नित्य ब्राह्मणों को देते रहे फिर इन्द्रप्रस्थ को आये इन्द्रप्रस्थ में पहुँच राजा युधिष्ठिर ने राजसूययज्ञ करने की इच्छा की तब श्रीकृष्णचन्द्र को बुलाने दूत भेजा श्रीकृष्णचन्द्र भी दूत के पहुँचतेही सत्यभामा समेत रथ में बैठ इन्द्रप्रस्थ को चले इन्द्रप्रस्थ में पहुँचे तब पाण्डवों ने बड़ा उत्सव किया और युधिष्ठिर

ने राजसूययज्ञ करने का मनोरथ उनसे कहा श्रीकृष्णजी ने भी स्वीकार किया और यह कहा कि हे महाराज! आपसे हम यथार्थ बात कहते हैं जो बहुत से हाथी घोड़े और सेना का अधिपति होय वही राजा इस यज्ञ को करसक्ता है साधारण राजा इस यज्ञ के अधिकारी नहीं पहिले आप सब दिशाओं के राजाओं को जीतें और उनसे कर लेवें उसी धन से आप यह यज्ञ करें इसलिये यज्ञ से पहिले आप दिग्विजय कीजिये यह श्रीकृष्णचन्द्र का वचन सुन राजा युधिष्ठिर बहुत प्रसन्न हुये और अपने भाइयों को बुलाकर कहा कि हे भ्राताओ! मैं राजसूययज्ञ किया चाहताहूं इसलिये तुम चारो बहुतसी सेना साथ लेकर चारो दिशाओं को जीतो जीतकर जो धन तुम लावोगे उसीसे यज्ञ होगा यह राजा युधिष्ठिर की आज्ञा पाय भीमसेन, अर्जुन, नकुल और सहदेव बहुतसी सेना साथ ले दिग्विजय को चले थोड़े ही काल में सब राजाओं को जीत अपने वश में स्थापनकर बहुत सा धन ले अपने नगर में पहुँचे सौभार सुवर्ण भीमसेन एक हजार भार सुवर्ण अर्जुन सौभार सुवर्ण नकुल और विभीषण के दिये सुवर्ण के चौदह ताल और दक्षिण देश के राजाओं को जीत बहुतसा धन सहदेव भी लाया और कई करोड़ का धन श्रीकृष्ण भगवान् ने युधिष्ठिर को दिया सब भ्राताओं का लाया धन और श्रीकृष्णचन्द्र का दिया असंख्य धन करके युधिष्ठिर ने श्रीकृष्णचन्द्र के आश्रय से राजसूययज्ञ किया उस यज्ञ में युधिष्ठिर ने ब्राह्मणों को यथेष्ट धन, अन्न, गौ, भूमि, भूषण, वस्त्र आदि दिये जितना याचकों ने मांगा उससे दूना पाया जितना धन युधिष्ठिर ने यज्ञ में बांटा उसकी इयत्ता कोटिवर्ष में भी नहीं करसक्के एक २ अर्थी को दिया धन देख लोग यही जानते थे कि राजा ने अपना सर्वस्व इसी को देदिया और जब राजा का खजाना देखते कि जिसमें सुवर्ण और रत्नों के ढेर लगे थे तब यह जानते कि अर्थी को बहुत थोड़ा दिया इस भांति राजसूय यज्ञ कर राजा युधिष्ठिर अपने भाइयों समेत धर्मराज्य करनेलगे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! लक्ष्मीतीर्थ के प्रभाव से राजा युधिष्ठिर ने यह सम्पत्ति पाई यह तीर्थ स्नान करनेहारों के सब पातक दूर कर धन धान्य

और ऐश्वर्य देता है इस तीर्थ में स्नान करने से ऋण और दारिद्र्य नहीं रहता नरक और दुःख भी समीप नहीं आते इसमें स्नान करने से स्वर्ग और मोक्ष भी मिलता है और स्त्री पुत्र भी उत्तम प्राप्त होते हैं इस तीर्थ के तुल्य कोई तीर्थ हुआ नहीं और होगा भी नहीं यह लक्ष्मीतीर्थ का माहात्म्य हमने कहा इसके पढ़ने से अथवा सुनने से धन धान्य मिलता है दुःस्वप्न का फल नष्ट होता है और सब मनोरथ सिद्ध होते हैं॥

इति श्रीस्कान्दे लक्ष्मीतीर्थमाहात्म्यपाण्डवसम्पत्प्राप्तिर्नामैकविंशोऽध्यायः॥२१॥

बाईसवां अध्याय॥

अग्नितीर्थ का माहात्म्य और दुष्पण्य नाम एक वैश्यपुत्र का अद्भुत कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सब ऐश्वर्य देनेहारे लक्ष्मीतीर्थ में स्नान कर अग्नितीर्थ को जाना चाहिये अग्नितीर्थ सब तीर्थोंमें उत्तम अभीष्ट सिद्धि देनेहारा और सब पातकों का हरनेहारा है मनुष्य को अपने पाप निवृत्त करने के लिये उसमें स्नान करना चाहिये शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! उस तीर्थ का नाम अग्नितीर्थ क्यों हुआ और वह तीर्थ कहां है यह आप वर्णन करें हमारी श्रवण करने की बहुत इच्छा है यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! आपने बहुत उत्तम बात पूछी हम वर्णन करते हैं पूर्वकाल में सकुटुम्ब रावण को मार और लङ्का का राज्य विभीषण को दे सीता और लक्ष्मणसहित सिद्ध, चारण, गन्धर्व आदि करके सेवित मुनियों करके स्तुत श्रीरामचन्द्रजी तीर्थ दर्शन की इच्छा से और जानकी की शुद्धि के लिये सेतुमार्ग करके गन्धमादनपर्वत पर पहुँचे वहां लक्ष्मीतीर्थ के तटपर स्थिर होकर सब देवता ऋषि और पितरों के समीप अग्नि का आवाहन किया आवाहन करतेही पीतवर्ण रक्तनेत्र पीतवस्त्र पहिने धनुष हाथ में लिये अपनी सात जिह्वाओं से दशो दिशाओं को चाटता अग्नि समुद्र से निकला और रामचन्द्रजी के समीप आय यह वचन कहनेलगा कि हे रामचन्द्रजी! जानकीके पतिव्रता धर्म के प्रभाव से आपने रावण को मारा इसमें कुछ सन्देह नहीं यह जानकी साक्षात् जगत् की माता लक्ष्मी है जब २ आप अवतार लेते हैं

तब २ यह भी आपके पीछे अवतार धारती है आप परशुराम हुये तब यह धरणी हुई अब जानकी है आगे रुक्मिणी होगी और भी सब अवतारों में आपके साथ रहेगी आप साक्षात् विष्णु हैं अब मेरे वचन से आप इसको ग्रहण करें यह अग्नि का वचन सुन देवता, ऋषि, विद्याधर, गन्धर्व, मनुष्य, नाग आदि सब जानकी और रामचन्द्रजी की प्रशंसा करनेलगे रामचन्द्रजीने भी अग्नि के वचन से सीता को ग्रहण किया रामचन्द्रजी के आवाहन करने से जहां अग्नि प्रकट हुआ वहांहीं अग्नितीर्थ हुआ अग्नितीर्थ में स्नान करे और उपवास करके ब्राह्मणों को भोजन करावे और वस्त्र, भूषण, भूमि आदि उनको दान करके देवे और उत्तम कन्या को वस्त्र भूषण आदि से अलंकृत कर दान करे तो अवश्यही विष्णुलोक पावे अग्नितीर्थ के तटपर अन्नदान का बहुत फल है अग्नितीर्थ के तुल्य न हुआ न होगा एक बड़ा पातकी अग्नितीर्थ में स्नान कर घोर पिशाचपने से छूटा पूर्वकाल में पशुमान् नाम एक वैश्य पाटलिपुत्र नगर में हुआ वह सदा धर्म में तत्पर रहता और ब्राह्मणों की सेवा करता खेती करता गो रखता और बाज़ार में सुवर्ण चांदी बेचता उस वैश्य के तीन स्त्रियां थीं उनमें बड़ी के सुपण्य, पण्यवान् और चारुपण्य ये तीन पुत्र थे बिचली के सुकोश और बहुकोश ये दो पुत्र थे और तीसरी स्त्री के महापण्य, महाकोश और दुष्पण्य ये तीन पुत्र हुये इस भांति पशुमान् वैश्य के तीन पत्नियों में आठ पुत्र थे वे सब बालअवस्था में अपनी २ क्रीड़ा से माता पिताको आनन्द देते थे पांच २ वर्ष के जब हुये तो पशुमान् ने सब को खेती व्यापार गोरक्षा आदि कर्मों में लगाया उनमें सात पुत्र तो अपने पिता की आज्ञापर चलते इससे सुवर्ण आदि के व्यापार में बहुत प्रवीण होगये परन्तु सब से छोटा दुष्पण्य जो था सो पिता की आज्ञापर न चला और कुमार्ग में प्रवृत्त हुआ जिन बालकों के साथ खेलता उनको भी पीड़ा देता पिता उसका दुष्ट व्यवहार देखकर भी उसको कुछ नहीं कहता यह सोचता कि बालक है और मूर्ख है आपही समझजायगा क्रमसे वे आठो वैश्यपुत्र तरुणअवस्था में प्राप्त हुये तब दुष्पण्य यह काम करनेलगा कि

नगर में जिसका बालक मिलता उसीको उठाकर गुपचुप कुवें में अथवा तालाब में फेंकआता और उसके कुकर्म को कोई नहीं जानता उन बालकों के माता पिता बहुत ढूंढ़ते परन्तु बालकों का कहीं पता नहीं लगता जब कोई बालक तालाब आदि में मराहुआ मिलता तो उसके मां बाप रो पीट-कर रहजाते इस भांति दुष्पराय नित्यही बालकों को मारता कुछ दिनों में नगर शून्य होनेलगा यह बात राजा ने सुनी तब कोतवाल को बुलाकर आज्ञादी कि निश्चय करो बालकों को कौन मारता है कोतवाल ने राजा की आज्ञा पाय बहुत यत्न किया परन्तु कुछ पता न लगा और बालक भी नित्य मारेही जाते थे कोतवाल ने राजा से प्रार्थना की कि हे महाराज! मैंने बहुत यत्न किया परन्तु उस दुष्ट का ठिकाना नहीं मिलता यह सुन राजा अतिव्याकुल हुआ और नगर के लोग नित्य राजा के द्वारपर आय पुकारते एक दिन कमल तोड़ने के बहाने से पांच बालकों को साथ लेकर दुष्पराय एक तालाब पर गया वहां इधर उधर देखा कि कोई मनुष्य नहीं है उन चिल्लातेहुये बालकों को उठा २ दुष्पराय ने तालाब में फेंकदिया और उनको मरे जान अपने घर को चलाआया दैवयोग से वे बालक डूबे नहीं दो चार गोते खाकर किनारे आलगे घरका मार्ग नहीं जानते थे इसलिये तालाब के किनारे रोतेहुये फिरनेलगे इतने में उनके मां बाप भी ढूंढ़ते २ और बालकों के नामोंसे पुकारते वहां आये बालकों ने अपने नाम सुन और माता पिता की बोली पहिंचान शब्द किया तब उनके माता पिता उनके समीप पहुँचे और उनको जीतेहुये देख परमहर्ष को प्राप्त हुये और बालकों से वृत्तान्त पूछा कि तुम यहां क्योंकर आये तब उन्हों ने दुष्पराय का सब कुकर्म कहा वे सब बालकों समेत राजा के पास गये और सब वृत्तान्त कहा तब राजा ने पशुमान् को बुलायकर कहा कि हे पशुमान्! दुष्पराय नाम तेरे पुत्र ने हमारा नगर शून्य करदिया देख ये पांच बालक भी उसने तालाब में डुबोदिये थे परन्तु ईश्वर की इच्छा से बच गये तू धर्मात्मा है इस लिये हम तुझसेही पूछते हैं कि अब क्या करना चाहिये यह राजा का वचन सुन पशुमान् बोला कि हे महाराज! जिस दुष्ट ने नगर के सब बालक

मारडाले उसका अवश्यही वध करना चाहिये इसमें कुछ विचार की बात नहीं वह मेरा पुत्र नहीं शत्रु है शीघ्रही आप उस दुरात्मा का वध करें यह पशुमान् का वचन सुन नगर के सब मनुष्यों ने पशुमान् की बहुत प्रशंसा की और सबों ने मिलकर राजा से यह प्रार्थना की कि हे महाराज! आप उस दुष्ट का वध न करें नगर से उसको निकाल देवें यह नगरवासियों का वचन सुन दुष्पण्य को बुलाय राजा ने कहा कि हे दुष्ट! शीघ्र तू हमारे नगर से निकल जा जो अब तू यहां रहेगा तो तेरा वध किया जायगा यह कहकर राजा ने उसको नगर से निकालदिया वह भी वहां से निकल वन में गया जहां बहुत से मुनि आश्रमों में रहते थे वहां भी दुष्पण्य ने एक मुनि बालक को जल में डुबोदिया तब और बालकों ने जो वहां खेलते थे उस बालक के पिता से जा कहा वह उग्रश्रवा नाम मुनि सुनतेही दौड़ा आया और देखा कि बालक जल के ऊपर मराहुआ तैरता है यह देख और योगबल से सब दुष्पण्य का कर्म जान उसको शाप दिया कि रे दुष्ट! तैंने मेरे पुत्र को जल में डुबोकर मारा इसलिये तू भी जल में डूबकर मरेगा और मरकर पिशाच होगा यह शाप सुन उदास हो दुष्पण्य दूसरे वन को गया जहां बहुत से सिंह व्याघ्र आदि दुष्टजीव रहते थे उसके वन में प्रवेश करतेही प्रचण्ड पवन चला वृक्ष टूट २ कर गिरनेलगे और अतिघोर वृष्टि होनेलगी तब दुष्पण्य अतिदुःखी हुआ और इधर उधर देखनेलगा तब उसने देखा कि एक हाथी मरा और सूखा हुआ पड़ा है वह प्राण बचाने के लिये हाथी के मुख में घुसकर उसके पेट में जा बैठा और वृष्टि बहुत हुई और एक जल का प्रवाह उधर बहकर आया उसमें वह मरा हाथी भी बहचला और जल से भरगया क्षणमात्र में दुष्पण्य समेत समुद्र में जापहुँचा परन्तु दुष्पण्य के प्राण इतने में जातरहे और वह पिशाच होगया और क्षुधा तृषा करके पीड़ित हुआ एक वन में रहनेलगा इसप्रकार दुःख भोगते करोड़ों वर्ष उसको बीतगये देश २ और वन २ में भटकता फिरता परन्तु कहीं सुख नहीं मिलता एकदिन दण्डकारण्य में अगस्त्य मुनिके आश्रम के समीप पहुँचा और पुकारनेलगा कि हे तपस्वियो! आप

दयालु हैं मेरे ऊपर भी दया करें मैं अतिदुःखी हू पाटलपुत्रनिवासी पशुमान् नाम वैश्यका पुत्र दुष्पण्य नाम मैं पूर्वजन्म में था मैंने बहुत से बालक मारडाले तब राजा ने मुझे अपने देश से निकालदिया मैं भी एक वन में आया वहां आय मैंने उग्रश्रवामुनि का पुत्र जलमें डूबोदिया मुनि ने मुझे शाप दिया कि तेरी भी जल में मृत्यु होगी और बहुतकाल तक तू पिशाच बनकर दुःख भोगेगा मुनि के शाप से पिशाच हुये मुझे कई करोड़वर्ष होगये शून्य वनों में दुःख भोगता फिरता हूं क्षुधा और तृषा से मेरे प्राण जाते हैं आप मेरी रक्षा करें और ऐसा यत्न बतावें जिससे पिशाचपना छूटजाय यह उसका वचन सब मुनियों ने जाकर अगस्त्यजी से कहा और प्रार्थना की कि हे महाराज! इस दीन पिशाच का आप उद्धार कीजिये आप समर्थ हैं यह मुनियों की प्रार्थना सुन परमदयालु अगस्त्यमुनि ने अपने प्रिय शिष्य सुतीक्ष्ण को बुलाकर कहा कि हे सुतीक्ष्ण! गन्धमादनपर्वत में अग्नितीर्थ है वहां जाकर संकल्पपूर्वक इसका पिशाचत्व छूटने के लिये तू स्नानकर तब यह इस योनि से छूट दिव्यदेह होजायगा उस तीर्थ विना इसका उद्धार किसी प्रकार नहीं होसक्ता इसलिये हे सुतीक्ष्ण! तू इस दीन पिशाच की रक्षा कर यह गुरु की आज्ञा पाय सुतीक्ष्णमुनि अग्नितीर्थपर पहुँचे और पिशाच के निमित्त संकल्प कर स्नान किया इस भांति तीर्थ में तीन दिन स्नान कर रामनाथ के दर्शन कर अग्नितीर्थ का जल लेकर सुतीक्ष्णमुनि अपने आश्रम में आये और उस पिशाचपर तीर्थ का जल छिड़का तीर्थ के जल का स्पर्श होतेही वह दिव्यदेह होगया और अगस्त्य और सुतीक्ष्ण उस आश्रम में रहनेहारे सब मुनियों को बारम्बार प्रणामकर दिव्य विमान में बैठ उत्तम नारियों करके सेवित स्वर्ग को चला गया हे मुनीश्वरो! अग्नितीर्थ के प्रभाव से दुष्पण्य सा पापी पिशाचयोनि से छूट स्वर्ग को गया यह अग्नितीर्थ का प्रभाव हमने वर्णन किया जो इस अध्याय को भक्ति से पढ़े अथवा सुने वह बहुत दिन संसारसुख भोग सब पापों से छूट सद्गति पावे॥

इति श्रीस्कान्दे अग्नितीर्थमाहात्म्यदुष्पण्यनामकवैश्यपुत्रकथानकंनामद्वाविंशोऽध्यायः॥ २२॥

तेईसवां अध्याय॥

चक्रतीर्थ की प्रशंसा देवताओं के यज्ञ करने का वर्णन और सूर्य भगवान् को सुवर्ण के हस्त प्राप्त होने का इतिहास॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! सब पाप हरनेहारे अग्नितीर्थ में स्नान करके शुद्धचित्त हो चक्रतीर्थ को जाय जिस मनोरथ से चक्रतीर्थ में स्नान करे वही मनोरथ सिद्ध होजाता है पूर्वकाल में अहिर्बुध्न्य नाम ऋषि गन्धमादनपर्वत में सुदर्शन की उपासना करते थे उनको आकर राक्षस पीड़ा देनेलगे तब सुदर्शनचक्र ने आय सब राक्षसों को संहार किया और अहिर्बुध्न्यमुनि की प्रार्थना से तीर्थ में निवास किया जिसके तटपर अहिर्बुध्न्यमुनि तप करते थे उस दिन से उस तीर्थ का नाम चक्रतीर्थ पड़ा उस तीर्थ में स्नान करने से भूत प्रेतआदि की पीड़ा निवृत्त होजाती है पूर्वकाल में सूर्य भगवान् ने इस तीर्थ में स्नान किया तब उनके कटेहुये हाथ पहिले की भांति होगये और सुवर्ण के होगये यह सुन ऋषियों ने पूछा कि सूर्यभगवान् के हाथ क्योंकर कटे और फिर किस भांति सुवर्ण के हाथ पाये यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में इन्द्रआदि देवताओं को दैत्यों ने बहुत पीड़ा दी तब सबों ने विचार किया और इन्द्र को आगेकर ब्रह्माजी के समीप गये वहां जाय ब्रह्माजी की भक्ति से स्तुतिकर प्रार्थना की कि हे महाराज! हमको दैत्य बहुत पीड़ा देते हैं इसका आप कुछ उपाय बतावें तब ब्रह्माजी बोले कि हे देवताओ! डरो मत हम आपको उपाय बताते हैं असुरों के नाश के लिये माहेश्वरयज्ञ का आरम्भ करो आप सब और सब ऋषि मिलकर गन्धमादनपर्वत में यह यज्ञ करें और स्थान में यज्ञ करने से असुर विघ्न करेंगे गन्धमादनपर्वत में अहिर्बुध्न्यमुनि के तीर्थ में सुदर्शन चक्रने निवास किया है इसलिये वहां राक्षसों का भय नहीं है तुम सब गन्धमादन में चक्रतीर्थ के समीप यज्ञ करो यह ब्रह्माजीकी आज्ञा पाय बृहस्पति को आगे कर सब देवता गन्धमादन में पहुँचे वहां जाय अहिर्बुध्न्यमुनि को प्रणामकर उनके आश्रम के समीप यज्ञवाट बनाया और यज्ञकर्म में निपुण मुनियों

सहित सब देवता असुरों के नाश के लिये यज्ञ करनेलगे उस यज्ञ में
बृहस्पति होता हुआ इन्द्र का पुत्र जयन्त मैत्रावरुण बना आठवां वसु
अच्छावाक हुआ पराशरमुनि ग्राव बने अष्टवक्र अध्वर्यु विश्वामित्र प्रति-
प्रस्थाता वरुण नेष्टा कुबेर उन्नेता ब्रह्माजी सविता वशिष्ठमुनि ब्रह्मणा-
च्छंसी शुनःशेफ आग्नीध्र अग्नि होता वायु उद्गाता यमराज स्तोता अग-
स्त्यमुनि प्रतिहर्ता विश्वामित्र का पुत्र सुब्रह्मण्य मधुच्छन्दा व्यासजी
के पुत्र शुकदेवजी उपद्रष्टा और साक्षात् इन्द्र यजमान बने सब ऋत्विजों
ने मिलकर इन्द्र को माहेश्वरयज्ञ की दीक्षा दी और गन्धमादनपर्वत में
यज्ञ होनेलगा सुदर्शन के प्रभाव से वहां असुरों का प्रवेश न होसका इस
से निर्विघ्न यज्ञ होनेलगा अग्नि हवि को भक्षणकर प्रज्वलित हुआ अध्वर्यु
ने विधिवत् सब कर्म करके मन्त्रपूत पुरोडाश का हवन किया उस पुरोडाश
का शेषभाग अध्वर्यु ने सब ऋत्विजों को बांटदिया और अतिउग्रतेज
वाला प्राशित्र नाम पुरोडाश का भाग अध्वर्यु ने सूर्य को दिया सूर्य ने
उसको अपने दोनों हाथों में लिया हाथ में लेतेही दोनों हाथ सूर्य के कट
कर गिर गये तब सूर्य बहुतव्यग्र हो सब ऋत्विजों से बोले कि हे ऋ-
त्विजो! आप सब के देखते हमारे हाथ इसी पुरोडाशभाग ने काटदिये इस
लिये आप सब हमारे हाथ ठीक करदेवें नहीं तो हम तुम्हारे यज्ञ को नष्ट
करदेंगे यह सूर्य का वचन सुन सब ऋत्विज् व्याकुल हो चिन्तना करने
लगे तब महातेजस्वी अष्टावक्रमुनि बोले कि हे ऋत्विजो! हमारी अ-
वस्था में सैकड़ों ब्रह्मा बीत गये सबका चरित्र हम जानते हैं लोकेश्वर
ब्रह्मा के समय में श्यामलापुर के बीच एक हरिहर नाम ब्राह्मण रहता था
एक दिन कोई व्याध बाण चला रहा था दैवयोग से वह ब्राह्मण बाण
के आगे आगया इससे बाण लगकर उसके दोनों पैर कटगये तब सब
मुनीश्वरों के कहने से वह ब्राह्मण गन्धमादन में मुनितीर्थपर किसीप्रकार
पहुँचा मुनितीर्थ में स्नान करतेही उसके दोनों पैर यथार्थ होगये वह
...र्थ यही है अब इसका नाम चक्रतीर्थ पड़गया जो आप सबकी
...ति होय तो सूर्य भी इस तीर्थ में स्नान करें यह अष्टावक्रमुनि का

वचन सुन सब ऋत्विज् बोले कि हे सूर्य! आप भी इस तीर्थ में स्नान करें जिससे आपके हाथ यथार्थ हो जायँ तब ऋत्विजों के कहने से सूर्य ने उस तीर्थ में स्नान किया तब उनके हाथ पहिले से भी उत्तम सुवर्ण के बनगये उनके हस्त सुवर्ण के देख सब ऋत्विज् प्रसन्न हुये इन्द्रादि देवता भी माहेश्वरयज्ञ समाप्त कर सब दैत्यों को मार प्रसन्न हो स्वर्ग को गये हे मुनीश्वरो! सब मनुष्यों को अपने मनोरथ सिद्ध होने के लिये इस तीर्थ का सेवन करना चाहिये विशेष करके अन्धे, काने, बहिरे, लँगड़े, लूले, कुबड़े, गूँगे, टूटेआदि अङ्गहीन मनुष्यों को इस तीर्थ का सेवन करना चाहिये इस तीर्थ के सेवन से हीन अङ्ग पूरा होजाता है हे मुनीश्वरो! यह चक्रतीर्थ का माहात्म्य हमने कहा जहां सूर्यभगवान् ने सुवर्ण के हाथ पाये जो इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने उसके हीन अङ्ग भी सम्पूर्ण होजायँ मोक्ष की इच्छा से इस तीर्थ का सेवन करे तो मुक्ति पावे॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सूर्यस्य स्वर्णमयहस्तप्राप्तिर्नामत्रयोविंशोऽध्यायः॥ २३॥

चौबीसवां अध्याय॥

शिवतीर्थ का माहात्म्य और ब्रह्मा विष्णु के परस्पर कलह होने की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! चक्रतीर्थ में स्नानकर शिवतीर्थ को जाय शिवतीर्थ में स्नान करने से करोड़ों महापातक और संसर्ग दोष नष्ट होजाते हैं यहां स्नानकर कालभैरव ब्रह्महत्या से छूटे ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी! कालभैरवरुद्र ने ब्रह्महत्या क्यों की यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! हम यह प्राचीन वृत्तान्त वर्णन करते हैं जिसके सुनने से सब पातक दूर होजायँ पूर्वकाल में सब देवताओं के सम्मुख ब्रह्माजी और विष्णुजी का परस्पर विवाद हुआ ब्रह्माजी ने कहा कि सब जगत् के कर्ता और निग्रह अनुग्रह करने में समर्थ हम हैं हमारे तुल्य कोई देवता नहीं हमसे अधिक तो कहां से होसक्ता है यह ब्रह्माजी का वचन सुन हँसकर विष्णुजी बोले कि हे ब्रह्माजी! यह अहंकार का वचन आपको न कहना चाहिये जगत् के कर्ता हम हैं हमारी

इच्छा विना इस जगत् का जीवन नहीं होसक्ता हमारी अनुग्रह से तुमने जगत् रचा है इस प्रकार ब्रह्मा और विष्णु विवाद कररहे थे उस अवसर में चारो वेद देह धार वहां आये और यह कहनेलगे कि हे ब्रह्माजी ! हे विष्णुजी ! आप दोनोंही जगत् के कर्ता नहीं हैं जगत्कर्ता तो ईश्वर है उसकी माया से यह स्थावर जङ्गमरूप जगत् उत्पन्न हुआ है वह शिव ही जगत् की सृष्टि स्थिति और संहारकर्ता हैं यह वेदों का वचन सुन ब्रह्मा और विष्णु बोले कि हे वेदो ! शिवजी तो मूर्तिमान् हैं और पार्वती करके युक्त हैं वे किसप्रकार सर्वसंगविवर्जित निर्गुण परमेश्वर होसक्ते हैं यह ब्रह्मा और विष्णु का वचन सुन सब वेदों का मुख प्रणवरूप धार बोला कि हे देवताओ ! शिवजी स्वप्रकाश निरञ्जन विश्वाधिक विश्वकर्ता सर्वात्मा स्वतन्त्र और निर्गुण हैं और पार्वती भी उनसे भिन्न नहीं हैं हे ब्रह्माजी ! शिवजीही तुमको सृष्टि करने के लिये रजोगुण करके युक्त करते हैं और हे विष्णुजी ! रक्षा करने के लिये आपको सत्त्वगुण करके युक्त करते हैं और जगत् के संहार के लिये तमोगुण करके कालरुद्र को युक्त करते हैं इसलिये तुम स्वतन्त्र नहीं हो स्वतन्त्र शिवही हैं इस लिये जगत् के कर्ता हर्ता शिवही हैं और पार्वती शिव की शक्ति हैं और आनन्दरूप हैं इसलिये शिव से पृथक् नहीं सब देवताओं करके वन्दनीय सबके कर्ता शिव हैं शिव का कर्ता कोई नहीं लोक में कोई शिव से अधिक नहीं और शिव के तुल्य भी नहीं इसलिये तुम दोनों वृथा अहंकार मत करो यह प्रणव का वचन सुनकर भी ब्रह्मा और विष्णु का अहंकार निवृत्त न हुआ इसी अवसर में एक बड़ा तेज आकाश में उत्पन्न हुआ जो कई करोड़ सूर्यों के समान था उस तेज के देखने के लिये ब्रह्माजी ने एक मुख ऊपर की ओर बनाया और उस पांचवें मुख से तेज को देखने लगे उस तेज को देखतेही ब्रह्माजी का पांचवां मुख क्रोध से जलउठा जैसा प्रलय का अग्नि होय और वह तेज भी नीललोहित पुरुष बनगया तब ब्रह्माजी ने उस पुरुष से कहा कि हे महादेव ! मैं तुझको जानताहूं पहिले तू मेरे ललाट से उत्पन्न हुआ इसलिये मेरा पुत्र है यह ब्रह्माजी का अहं-

कारयुक्त वचन सुन महादेवजी ने कालभैरव नाम पुरुष को भेजा वह शिवजी के अंश से उत्पन्न हुये कालभैरव शूल टंक गदाआदि धारे जाकर ब्रह्माजी से युद्ध करनेलगे बहुत दिन युद्ध हुआ कालभैरव ने ब्रह्माजी के शुक्लवर्ण पांचवें मुख को देखा कि बहुत गर्व करके युक्त है और कालभैरव को देख पांचवें मुख ने बड़ा क्रोध किया तब कालभैरव ने ब्रह्माजी का पांचवां शिर काटलिया शिर कटते ही ब्रह्माजी गिरपड़े और मृत होगये तब शिवजी ने उनको फिर जीवदान दिया तब ब्रह्माजी ने उठकर शिवजी को देखा मस्तकपर चन्द्रमा धारे वासुकिआदि नागों के भूषण पहिने पार्वती सहित वृषभ पर चढ़े सम्मुख खड़े हैं उनको देखते ही ब्रह्माजी को ज्ञान प्राप्त हुआ और हाथजोड़ शिवजीकी प्रार्थना करनेलगे कि हे भगवन्! आप मेरा अपराध क्षमा करें इतना कह शिवजी के चरणों को प्रणाम किया तब प्रसन्न हो शिवजी ने ब्रह्माजी से कहा भय मत करो हमने तुम्हारा अपराध क्षमा किया और कालभैरव से शिवजीने कहा कि तुमने ब्रह्माजी का शिर काटलिया इसलिये ब्रह्महत्या दूर होने के अर्थ ब्रह्माजी का कपाल हाथ में लिये भिक्षा मांगते फिरो वास्तव में तुमको कुछ हत्या नहीं परन्तु लोकमर्यादा के लिये प्रायश्चित्त करना चाहिये इतना कह वह ब्रह्माजी का कपाल शिवजी ने कालरुद्र को धारण करादिया और ब्रह्महत्या नाम अतिभयंकर एक कन्या उत्पन्न कर शिवजी ने कालरुद्र के पीछे लगा दी और यह कहा कि हे कालरुद्र! तुम इस ब्रह्महत्या निवृत्त होनेके लिये सब तीर्थों में स्नान करो फिर काशी में जावो तब तीन भाग ब्रह्महत्या नष्ट होजायगी एक भाग रहजायगी उसके निवृत्त करने का यह उपाय है कि दक्षिण समुद्र में गन्धमादनपर्वत के बीच सब जीवों के कल्याण के लिये हमने तीर्थ बनाया है उस तीर्थ में जाकर तुम स्नान करो तब तुमको ब्रह्महत्या छोड़देगी इतना कह शिवजी कैलास को गये और शिवजी की आज्ञानुसार कपाल हाथ में लेकर कालरुद्र सब लोकों में विचरनेलगे और ब्रह्महत्या उनके पीछे २ लगी फिरती सब पुण्यतीर्थों में स्नानकर कालरुद्र काशी में पहुँचे तब वह अतिदुष्ट ब्रह्महत्या तीन भाग नष्ट होगई और चौ-

थाई रहगई तब कालरुद्र गन्धमादनपर्वत को चले और वह चतुर्थांश हत्या भी पीछेलगी गन्धमादन में पहुँच शिवतीर्थ में कालरुद्र ने स्नान किया स्नान करते ही सम्पूर्ण हत्या दूर हुई इसी अवसर में शिवजी वहां प्रकट हुये और कालरुद्र से कहा कि अब सम्पूर्ण ब्रह्महत्या तुम से निवृत्त हुई अब इस कपाल को काशी में किसी स्थान में रख दो इतना कह शिवजी तो अन्तर्धान हुये और कालरुद्र काशी में आये वहां एक स्थान में वह कपाल स्थापन किया वह स्थान कपालतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! मुक्ति के देनेहारे और महापातक नरक क्लेश और महादुःख के हरनेहारे शिवतीर्थ का माहात्म्य हमने वर्णन किया जो इस को पढ़े अथवा सुने वह सब दुःखों से छूटे॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां शिवतीर्थमाहात्म्यविधिविष्णुकलहहानिरूपणंनामचतुर्विंशोऽध्यायः॥ २४॥

पच्चीसवां अध्याय॥

शंखतीर्थ का माहात्म्य और वत्सनाभमुनि की अद्भुत कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! शिवतीर्थ में स्नानकर शंखतीर्थ में जाना चाहिये शंखतीर्थ में स्नान करने से कृतघ्न और माता पिता का अनादर करनेहारे दुष्ट पुरुष भी शुद्ध होजाते हैं पूर्वकाल में शंखमुनि ने विष्णुभगवान् की प्रसन्नता के लिये गन्धमादनपर्वत में तप किया और अपने नाम से तीर्थ भी बनाया उसीका नाम शंखतीर्थ हुआ वहां स्नान करने से कृतघ्न पुरुष भी शुद्ध होते हैं इसमें एक प्राचीन इतिहास हम कहते हैं जिसके सुनने से मनुष्य मुक्ति पावे पूर्वकाल में बड़े तपस्वी दयालु शीलवान् और ब्रह्मनिष्ठ वत्सनाभ नाम एक मुनि हुये हैं उनने ऐसा उग्रतप किया कि एक आसन बैठे सैकड़ों वर्ष बीतगये और शरीरके ऊपर बल्मीक अर्थात् सर्प की बांबी बनगई परन्तु मुनि आसन से न हिले उनके तप भङ्ग करने के लिये इन्द्र ने सात दिन तक अतिघोर वृष्टि की परन्तु वत्सनाभमुनि उस मूसलधार वर्षा को सहगये और आसन से न उठे तब ने एक बिजली डाली जिससे मुनि के ऊपर का बल्मीक बिखरगया

परन्तु तप के प्रभाव से मुनि बच गये फिर दिन राति मुनि के शरीर पर वृष्टि होनेलगी तब धर्म के मन में दया आई कि देखो यह मुनि बड़ा महात्मा है जो इस दारुण वर्षा में भी तप नहीं छोड़ता इसलिये इसकी रक्षा करनी चाहिये यह मन में विचार बड़े भारी महिष का रूप धार धर्मराज मुनि के ऊपर जाय खड़े हुये और अपनी पीठपर वर्षा की धार सहनेलगे सात दिन प्रचण्डवृष्टि करके इन्द्र चले गये तब महिषरूप धर्म भी मुनि के ऊपर से हटकर एक ओर जाय खड़े हुये मुनि की समाधि खुली तब चारो ओर देखा कि वर्षा से पर्वतों के शिखर और हजारों वृक्ष टूटे पड़े हैं मुनियों के आश्रम जल में डूब रहे हैं चारो ओर जलही जल दिखाई देता है यह देख वत्सनाभमुनि बहुत प्रसन्न हुये कि ऐसी वृष्टि में भी हमने तप न छोड़ा फिर सोचा कि अवश्य किसी महात्मा ने इस विपत्ति में हमारी रक्षा की है नहीं तो जीव क्योंकर बचता यह विचार मुनि ने चारो ओर दृष्टि की तो देखा कि सम्मुख एक नीलवर्ण अति ऊँचा महिष खड़ा है उसको देख मुनि ने कहा कि देखो कोई २ पशु भी कैसे धर्मात्मा होते हैं इस महिषनेही मुझे इस महावृष्टि से बचाया परमेश्वर इसकी दीर्घ आयुर्दाय करे और यह महात्मा महिष सदा सुखी रहे यह कहकर वत्सनाभमुनि फिर तप करनेलगे यह मुनि की तप में निष्ठा देख धर्मरूप महिष के सब शरीर में आश्चर्य से रोमांच होगया वत्सनाभमुनि तप में प्रवृत्त हुये परन्तु पहिली भांति परमेश्वर में चित्त न लगा तब मुनि विचारनेलगे कि पाप से मन चञ्चल होता है परन्तु हमने कोई पाप नहीं किया फिर हमारा मन क्यों चञ्चल होरहा है सोचते २ मन की अस्थिरता का कारण मुनि जानगये और कहनेलगे कि मुझ सरीखे कृतघ्न को धिक्कार है ऐसे दुरात्मा कृतघ्न का क्योंकर तप में मन लगे देखो इस महात्मा महिष ने मेरे प्राण बचाये इसका पूजन विना किये मैं तप में प्रवृत्त हुआ यह कृतघ्नता दोष मुझ पर लगा इसी पाप से मेरा चित्त मलिन हुआ कृतघ्न पुरुष नरक को जाते हैं किसी प्रकार कृतघ्न का उद्धार नहीं होसक्ता माता पिता की सेवा न करे गुरु को दक्षिणा न देवे और कृतघ्नता करे उनके लिये प्राण

त्याग के विना और कोई प्रायश्चित्त नहीं इसलिये मैं भी इस पाप के प्रायश्चित्त के अर्थ प्राण त्यागता हूं यह मन में निश्चय कर वत्सनाभ मुनि एक पर्वत के ऊंचे शिखर पर चढ़े और प्राण त्यागने के लिये वहां से गिरना चाहा तब धर्म महिष का रूप छोड़ मुनि के समीप गये और कहा कि हे वत्सनाभ! प्राण मत त्याग बहुत वर्ष जीता रह तेरे समान कोई धर्मनिष्ठ नहीं मैं धर्म हूं और तेरी निष्ठा देख बहुत प्रसन्न हुआ हूं यद्यपि प्राण त्यागने विना कृतघ्न की निष्कृति नहीं होती परन्तु तू धर्मनिष्ठ है इसलिये तुझे एक सुगम उपाय बताता हूं गन्धमादनपर्वत में शंखतीर्थ है वहां जाय तू स्नान कर तब शुद्ध होजायगा और चित्त भी निर्मल होजायगा तब तू दिव्यज्ञान पाय मुक्त होगा हे योगीन्द्र! मैं धर्म हूं और तुझ से सत्य कहता हूं यह धर्म का वचन सुन वत्सनाभमुनि गन्धमादनपर्वत को चले वहां पहुँच शंखतीर्थ में स्नान किया स्नान करतेही मन निर्मल होगया फिर बहुत काल तक वत्सनाभमुनि जीते रहे अन्त में दिव्यज्ञान पाय मुक्त हुये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह शंखतीर्थ का वैभव हमने वर्णन किया जिस तीर्थ में स्नान करने से कृतघ्न भी शुद्ध होजाय माता पिता का पोषण न करे गुरुदक्षिणा न देवे और कृतघ्नता करे उनकी निष्कृति मरण के विना नहीं होसक्ती परन्तु इस तीर्थमें स्नान करने से ये सब निष्पाप होजाते हैं शंखतीर्थ में स्नान करने से कृतघ्नता दूर होजाती है और पापों की तो कथाही क्या है जो पुरुष इस अध्याय को पढ़े वह सब पापों से छूट शुद्धचित्त हो सत्यलोक को जाता है वहां बहुत काल ब्रह्माजी के समीप सुखपूर्वक निवास कर मुक्ति पाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां शङ्खतीर्थमाहात्म्यवत्सनाभमुनिकथानकंनामपञ्चविंशोऽध्यायः॥ २५॥

छब्बीसवां अध्याय॥

गङ्गातीर्थ, यमुनातीर्थ और गयातीर्थ का माहात्म्य रैक्वमुनि का विचित्र इतिहास और जातश्रुत राजा की अद्भुत कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! शंखतीर्थ में स्नानकर गङ्गातीर्थ

यमुनातीर्थ और गयातीर्थ को क्रम से जाय ये तीन तीर्थ तीनों लोकों में प्रसिद्ध हैं और स्नान करनेहारे मनुष्य को सब प्रकार के पाप रोग अज्ञान आदि हरकर मोक्ष देते हैं इन तीर्थों में स्नान कर जातश्रुति नाम राजा ने रैकमुनि से दिव्यज्ञान पाया यह सूतजी का वचन सुन शौनकआदि मुनियों ने पूछा कि हे सूतजी! गङ्गा यमुना और गया गन्धमादनपर्वत में क्योंकर आईं और इन तीनों में स्नानकर महाराज जातश्रुति ने रैक मुनि से दिव्यज्ञान किसविधि पाया यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहने लगे कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में रैकमुनि गन्धमादनपर्वत में तप करते थे वे मुनि जन्म से पंगु थे इसलिये दूर के तीर्थों में नहीं जासक्ते थे केवल गन्धमादन के तीर्थों में शकट अर्थात् गाड़ीपर चढ़कर जाया करते और तपोबल से उनने आयुर्दाय भी बहुत पाया शकट का नाम युग्य भी है रैकमुनि शकट पर चढ़े फिरते इसलिये उनको लोग सयुग्य भी कहते ग्रीष्मऋतु में पञ्चाग्नि में वर्षाऋतु में कण्ठप्रमाण जल में तप करते २ शरीर शुष्क होगया और सम्पूर्ण देह में पामा अर्थात् खुजली होगई परन्तु मुनि ने तप न छोड़ा खुजली भी खुजलाते और तप भी करते एक समय रैकमुनि की इच्छा हुई कि गङ्गा यमुना और गया के दर्शन और इनमें स्नान करना चाहिये परन्तु हम जन्म के पंगु क्योंकर जाय सकें और हमारा शकट भी इतनी दूर जाने के योग्य नहीं फिर विचारा कि हमको बड़ाभारी तपोबल है इसलिये इन तीर्थों को यहांहीं आवाहन करते हैं यह मन में निश्चयकर पूर्वाभिमुख बैठ तीन आचमन कर मन्त्रबल से तीनों तीर्थों का आवाहन किया क्षणमात्र में भूमि को भेदनकर गया गङ्गा और यमुना की तीन धारा पाताल से निकलीं और तीनों मनुष्य का रूप धार रैकमुनि से बोलीं कि हे रैकमुने! तुम्हारे मन्त्र से खिंचीहुईं हम तीनों आगईं अब जो तुम कहो सो करें यह उनका वचन सुन मुनिने ध्यान छोड़ नेत्र खोले और तीनों तीर्थों को सम्मुख खड़े देख प्रसन्न हुये और भक्ति से उनका पूजन कर यह प्रार्थना की कि तुम तीनों इस गन्धमादनपर्वत में निवास करो भूमि को भेदनकर तुम तीनों जहां निकली हो वे तुम्हारे नाम

से बड़े तीर्थ होयँ यह मुनि का वचन सुन (तथास्तु) कहकर तीनों अन्तर्धान हुईं उस दिन से तीनों तीर्थ गन्धमादनपर्वत में आये और जहां २ वे निकलीं उनका नाम क्रम से गङ्गातीर्थ यमुनातीर्थ और गयातीर्थ हुआ ये तीनों तीर्थ रैकमुनि के प्रभाव से गन्धमादन में प्रकट हुये जो पुरुष इन तीर्थों में स्नान करे वह अवश्यही दिव्यज्ञान पावे रैकमुनि भी अपने आवाहन किये तीर्थों में नित्यस्नान करते और तप करते इसी अवसर में बड़ा धर्मात्मा जातश्रुति नाम राजा था वह सदा ब्राह्मणों को धन और अन्न बड़ी श्रद्धा से देता इसलिये उस राजा को लोक श्रद्धादेयभी कहते और अन्नआदि देने के समय राजा बहुत मधुरवाक्य याचकों से कहता इसलिये उसको बहुवाक्य भी कहते वह राजा जातश्रुति का पुत्र और पुत्र नाम राजा का पौत्र था नगर, ग्राम, वन, चतुष्पथ आदि सब स्थानों में उस राजा ने अन्न के सदाव्रत लगादिये सब देशों में यह घोषणा करादी कि जिसको अन्नपान चाहिये वह हमारे सदाव्रतों में आवे इसप्रकार अतिदानी राजा के गुण सर्वत्र प्रसिद्ध होगये तब राजा के ऊपर अनुग्रह करने के लिये देवर्षि हंसों का रूप धार पंक्तिबांध ग्रीष्मऋतु में रात्रि के समय राजा के ऊपर से उड़ २ जानेलगे उनमें से पिछला हंस राजा को सुनाकर अगले हंस से हँसकर बोला कि हे भल्लाक्ष! आगे नहीं देखता और उड़ाही चला जाता है राजा जातश्रुति आगे महल पर है उसका पूजन विना किये अन्धे की भांति चलाही जाता है ब्रह्मलोक पर्यन्त जिसका दुराधर्ष तेज व्याप्त होरहा है जो तू इस राजर्षि को उल्लंघन करके जायगा तो इसका अतिजाज्वल्यमान तेज तुझे दग्ध करदेगा यह सुन अगला हंस कहनेलगा कि रे मूढ़! इस धूर्त की तू क्यों प्रशंसा करता है यह तो पशु के तुल्य है लोहार की धौंकनी की भांति वृथा श्वास लेता है यह राजा धर्म का रहस्य कुछ भी नहीं जानता जिसप्रकार रैकमुनि जानता है ऐसा धर्मतत्त्व और कोई नहीं जानता रैकमुनि के पुण्य की इयत्ता कौन करसक्ता है आकाश के तारे और भूमि के पांशु भी गिनसके हैं

 रैकमुनि के पुण्य की गणना नहीं होसक्ती यज्ञ दान आदि धर्म

सब नश्वर अर्थात् नाश होनेवाले हैं केवल ब्रह्मज्ञानही स्थिर रहता है वह ब्रह्मज्ञान रैकमुनि ने पाया इसलिये वह प्रशंसा के योग्य है और इस राजा का धर्म भी कुछ प्रशंसा के योग्य नहीं ज्ञान की तो बातही दूर है ज्ञान योगियों को भी दुर्लभ है इसलिये इस तुच्छ राजा की क्या प्रशंसा करता है रैकमुनि की प्रशंसा कर रैकमुनि जन्म से पंगु है इसलिये उसने अपने आश्रम के समीप गया, गङ्गा और यमुना का आवाहन मन्त्र से किया रैकमुनि के धर्म में त्रैलोक्य के धर्म समाजाते हैं और ब्रह्मवेत्ता रैकमुनि का धर्मसमूह तीन लोक के भी धर्मों में नहीं समासक्ता इसप्रकार कहते हुये वे हंसरूप ऋषि ब्रह्मलोक को चलेगये राजा ने भी सब प्रशंसा रैक-मुनि की सुनी और उदास होकर विचार किया कि देखो हंसने मुझे नि-कृष्ट कहा और रैकमुनि की इतनी प्रशंसा की धन्य है रैकमुनि जिसको पक्षी भी सराहते हैं अब मुझे भी यही उचित है कि राज्य छोड़ रैकमुनि की शरण में जाऊं वह दयालु मुनि शरण में प्राप्तहुये मुझको अवश्य ही ज्ञानोपदेश करेगा इसप्रकार सोच विचार करते किसीप्रकार वह रात्रि राजा ने व्यतीत की और प्रभात हुआ वन्दीलोग राजस्तुति पढ़नेलगे अनेक प्रकार के बाजे बाजनेलगे राजा भी शय्या से उठा और सारथि को बुलाकर आज्ञा दी कि क्षेत्र वन नदियों के तट और तीर्थ आदि सब स्थानों में जहां २ मुनियों के आश्रम होयँ वहां २ सब धर्मों के आश्रम ब्रह्मवेत्ता रैकमुनि को ढूंढ़ो रैकमुनि जन्म से पंगु हैं इसलिये गाड़ी में चढ़े तीर्थों में घूमते हैं उनका पता लगाय शीघ्र हमारे पास आवो यह राजा की आज्ञा पाय सारथि रैकमुनि को ढूंढ़ने निकला पर्वतों की गुफाओं में नदियों के तटों पर मुनियों के आश्रमों में रैकमुनि को ढूंढ़ता २ गन्ध-मादनपर्वत में पहुँचा वहां देखा कि रैकमुनि शकटपर बैठे हुये पामा को खुजलाय रहे हैं और निरन्तर ब्रह्मानन्द में मग्न हैं सारथि ने भी लक्षणों से पहिंचाना कि येही रैकमुनि होंगे और उनके समीप जाय प्रणामकर पूछा कि रैकमुनि आपही हैं मुनि ने कहा कि हां भाई ! मैं ही रैकमुनि हूं सारथि ने मुनि की बातचीतों से यह भी जाना कि कुटुम्ब के पोषण के

लिये इनको धन की इच्छा है इसप्रकार सारथि ने रैकमुनि का ठिकाना लगाय सब वृत्तान्त आकर राजा से कहा राजा भी सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ और छहसौ उत्तम गौ एक भार सुवर्ण और एक बहुत उत्तम रथ जिस में अश्वतरी अर्थात् खच्चरी जोत रक्खी थीं मुनि के लिये अपने संग लेकर चला कुछ दिनों में गन्धमादन में पहुँच रैकमुनि के समीप जाय प्रणाम कर प्रार्थना की कि महाराज ये छहसौ बहुत उत्तम गौ एक भार सुवर्ण और दो अश्वतरियों करके युक्त रथ आप ग्रहण करें और मुझे अद्वैत ब्रह्मज्ञान उपदेश करें यह राजा का वचन सुन रैकमुनि बोले कि हे राजन्! इस धन को तूही रख इस थोड़े धन से हमारा निर्वाह नहीं होसक्ता कई कल्प हम को जीना है इतने धन से हमारे कुटुम्ब का निर्वाह क्योंकर होय यदि इस से सौगुणा धन भी होय तो भी हमारे लिये थोड़ा है यह सुन राजा बोला कि हे महाराज! मैं यह धन आपको ब्रह्मज्ञान का मौल्य नहीं देता आप धन लेवें चाहे मत लेवें परन्तु कृपाकर मुझे निष्कल अद्वैतज्ञान का उपदेश करें यह राजा का वचन सुन मुनि कहनेलगे कि हे राजन्! जो पुरुष संसार से विरक्त होय और जिसके पाप पुण्यआदि प्रारब्ध नाश को प्राप्त होजायँ वह ज्ञानोपदेश का अधिकारी होता है पुण्य पाप आदि से पुन-र्जन्म होता है यद्यपि तू संसार से विरक्त हुआ है परन्तु पुण्य पाप का क्षय नहीं हुआ भोग किये विना उसका क्षय नहीं होता हे राजन्! तू हमारी शरण में प्राप्त हुआ है इसलिये हम तुझे पुण्य और पाप के क्षय का उपाय बताते हैं हमारे आवाहन किये ये तीन तीर्थ हैं इनमें स्नान करने से प्रारब्ध कर्म का नाश होता है इसलिये तू भी गङ्गातीर्थ यमुनातीर्थ और गयातीर्थ में स्नान कर जिससे तू शुद्धचित्त होजाय तब हम ज्ञान उपदेश करेंगे यह मुनि की आज्ञा पाय प्रसन्न हो राजा ने तीनों तीर्थों में स्नान किया स्नान करतेही राजा का चित्त निर्मल होगया और स्नान कर रैकमुनि के समीप आया तब मुनि ने राजा को दिव्यज्ञान का उपदेश किया राजा भी दिव्य ज्ञान के पातेही ब्रह्मरूप होगया और माया का आवरण दूर हो सर्वत्र घट कुसूलआदि पदार्थों में भी ब्रह्मदृष्टि होगई इसप्रकार तीनों तीर्थों में

स्नान कर राजा ने वह दिव्यज्ञान पाया जो मुनियों को भी दुर्लभ है हे मुनीश्वरो ! यह तीन तीर्थों का प्रभाव हमने वर्णन किया जो इस अध्याय को पढ़े वह माया को जीत ब्रह्मरूप होता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां गङ्गादितीर्थमाहात्म्ये क[illegible]निजाति-श्रुतिभूपकथानकंनामषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

सत्ताईसवां अध्याय ॥

कोटितीर्थ का माहात्म्य और श्रीकृष्णभगवान् करके कंसवध का वर्णन ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! गङ्गा आदि तीनों तीर्थों में स्नान कर कोटितीर्थ को जाना चाहिये कोटितीर्थ सब पापों के विघ्न और दुःस्वप्न का नाश करनेहारा है सब प्रकार की सम्पत्ति पुण्य और शान्ति को देता है कोटितीर्थ के स्मरणमात्र से सब पाप कटजाते हैं वह तीर्थ रामचन्द्रजी ने अपने धनुष् की कोटि अर्थात् अग्रभाग करके बनाया है रामचन्द्र रावण को मार कर आये तब ब्रह्महत्या निवृत्त होनेके लिये गन्धमादनपर्वत में एक शिवलिङ्ग उनने स्थापन किया उस शिवलिङ्ग के स्नान के लिये वहां जल न मिला तब रामचन्द्रजीने गङ्गा का स्मरण कर धनुष् की कोटि करके भूमि को भेदन किया वह धनुष् का अग्र पाताल तक पहुँचा उस को रामचन्द्रजी ने भूमि से खींचा उसके साथही गङ्गा की धारा निकली तब उस दिव्यजल से रामचन्द्रजीने अपने स्थापन किये लिङ्ग को स्नान कराया रामचन्द्रजी ने धनुष् की कोटि से यह तीर्थ बनाया इसलिये कोटितीर्थ कहाया गन्धमादन के सब तीर्थोंमें स्नानकर शेष पाप की निवृत्तिके लिये कोटितीर्थ में स्नान करना चाहिये अनेक जन्म के संचित बड़े २ पाप जो और तीर्थों में नहीं नष्ट होते वे कोटितीर्थ में स्नान करतेही निवृत्त होजाते हैं जो पुरुष प्रथम कोटितीर्थ में ही स्नान करे उसको और तीर्थोंमें स्नान करना वृथा है यह सुन शौनकआदि मुनि बोले कि हे सूतजी ! हम को एक बड़ा संशय उत्पन्न हुआ उसको आप निवृत्त कीजिये कोटितीर्थ में स्नान करे पीछे और तीर्थ वृथा हैं तो धर्मतीर्थ आदि में मनुष्य क्यों भटकते फिरें सब तीर्थों को छोड़ पहिले कोटितीर्थ में ही सब स्नान कियाकरें

और तीर्थों में न जायँ फिर मनुष्य और तीर्थों में क्यों जाते हैं यह सन्देह आप निवृत्त करें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! आपने बड़े रहस्य की बात पूछी जो शिवजी ने नारद से कहा वह हम वर्णन करते हैं आप श्रद्धा से श्रवण करो किसी तीर्थ को जाता हुआ मनुष्य मार्ग में जो तीर्थ देवालय आदि मिलें उनका सेवन न करे तो वह नरक को जाय यह शास्त्र का निश्चय है इसी भांति कोटितीर्थ को जाने के समय जो गन्धमादन के और तीर्थों में न स्नान करे वह चाण्डाल के तुल्य होय इसलिये हे मुनीश्वरो! चक्रतीर्थ आदि सब तीर्थों में स्नान करना चाहिये निष्पाप होकर कोटितीर्थ में स्नान करे कोटितीर्थ में स्नान कर गन्धमादनपर्वत में क्षणमात्र भी न रहे निष्पाप होकर अपने स्थान को जाय रामचन्द्रजी भी कोटितीर्थ के जल से स्नानकर और रामनाथ को स्नान कराय ब्रह्महत्या से मुक्त हो सुग्रीवआदि वानरों सहित पुष्पकविमान में बैठ तत्काल अयोध्या को चलेगये थे इस कारण कोटितीर्थ में स्नान कर निष्पाप हो उसी क्षण अपने स्थान को जाना चाहिये यह कोटितीर्थ सब तीर्थों में उत्तम है जो रामचन्द्रजी ने रामनाथलिङ्ग के स्नान के लिये बनाया जिसमें साक्षात् गङ्गा निवास करती हैं और जिस तीर्थ में साक्षात् तारकब्रह्म श्रीरामचन्द्रजी ने स्नान किया जिस तीर्थ में स्नान कर श्रीकृष्ण भी अपने मातुल कंस की हत्या से छूटे उस कोटितीर्थ की महिमा कौन वर्णन करसक्ता है इतनी कथा सुन ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी! श्रीकृष्णभगवान् ने अपने मातुल कंस को किस कारण मारा और उसकी हत्या से क्योंकर छूटे यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! यदु के वंश में शूर का पुत्र वसुदेव हुआ है वसुदेव ने देवक की पुत्री और कंस की बहिन देवकी से विवाह किया विवाह के अनन्तर वसुदेव देवकी रथ में बैठे और कंस रथ को हांकनेलगा उस अवसर में आकाशवाणी हुई कि हे कंस! जिस बहिन को तू रथ में बैठाये लियेजाता है इसकी आठवीं सन्तान तुझे मारेगी यह आकाशवाणी सुन कंस ने

और देवकी को मारने की इच्छा की तब वसुदेव बोले कि

हे कंस ! इस तेरी बहिन में जो सन्तान होगी हम सब तुम को देदेंगे उसी को वध करना इसको मत मारो इससे तुमको कुछ भय नहीं यह वसुदेव का वचन मान कंस ने देवकी को न मारा परन्तु वसुदेव और देवकी को बेड़ी पहिनाय बंदीखाने में रखदिया देवकी में क्रम से छह पुत्र उत्पन्न हुये वे सब वसुदेव ने कंस के अर्पण किये और कंस ने भी उन सबको वध किया सातवां गर्भ देवकी के फिर रहा उस में शेषजीका अंश था तब महामाया विष्णुभगवान् की प्रेरणा से उस गर्भ को देवकी के उदर से निकाल नन्दगोप की पत्नी रोहिणी के उदर में रख आई और लोक में यह प्रसिद्ध हुआ कि देवकी का गर्भ गिरगया फिर देवकी के आठवां गर्भ रहा उसमें साक्षात् विष्णुभगवान् थे दश मास पूरे होनेपर देवकी के गर्भ से विष्णु भगवान् का अवतार हुआ वह बालक चारो भुजाओं में शंख, चक्र, गदा, खड्ग धारे मुकुट और वनमाला से भूषित था उस विष्णुरूप बालक को देख अतिहर्षित हो वसुदेवजी स्तुति करनेलगे ॥

वसुदेव उवाच ॥ विश्वं भवान् विश्वपतिस्त्वमेव विश्वस्य योनिस्त्वयि विश्वमास्ते ॥ महान्प्रधानश्च विराट् स्वराट् च सम्राडसि त्वं भगवन्समस्तम् ॥ १ ॥ एवं जगत्कारणभूतधाम्ने नारायणायामितविक्रमाय ॥ श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोनमः कृत्रिममानुषाय ॥ २ ॥

इसप्रकार स्तुति सुन प्रसन्न हो श्रीभगवान् बोले कि हे पितः ! हम कंस को मारेंगे आप कुछ भय मत करो नन्दगोप की पत्नी यशोदा में कन्यारूप हमारी माया उत्पन्न हुई है अब आप हमको यशोदा की शय्या में रख आवो और उस कन्या को यहां लाय देवकी के समीप सुला दो वसुदेवजी ने भी इसी भांति सब बात की कन्या को लाकर देवकी की शय्या में रख दिया थोड़ी देर में कन्या रोदन करनेलगी उसका रोना सुन घबड़ाकर कंस वहां आया और उस कन्या को उठाय एक शिला पर पटका परन्तु वह कन्या उसके हाथ से छूटकर आकाश में गई और कंस से कहा कि रे मूढ़,

पातकी! तेरा शत्रु उत्पन्न होगया है उसको ढूंढ़कर मार इतना कह वह महामाया अपने स्थान को गई जो पूजन करने से मनुष्यों के मनोरथ सिद्ध करती है कंस भी महामाया का वचन सुन बहुत व्याकुल हुआ और पूतना आदि बालग्रहों को आज्ञा दी कि बालकों को मारो वे भी गोकुल में गये परन्तु कृष्ण भगवान् ने सबको यमलोक पहुँचाया बलदेव और कृष्ण दोनों भाई दिन २ वृद्धि को प्राप्त होनेलगे अनेकप्रकार की बाल-क्रीड़ा करते वंशी बजाते मोरमुकुट धारते गोपों के साथ गौ चराते कंसभी उनके सब व्यवहार सुनकर भयभीत था एक समय कंस ने अक्रूर को भेजा बलदेव और श्रीकृष्णचन्द्र को बुलाया वे भी अक्रूर के साथ मथुरा में पहुँचे वहां मार्ग में देखा कि एक बड़ाभारी धनुष् है उसकी ज्या को सब चढ़ाते हैं परन्तु किसी से नहीं चढ़ती तब बलदेवजी ने उस धनुष् को उठाकर ऐसा खींचा कि दो टुकड़े होगये तब वे धनुष् के रक्षक बलदेव और श्रीकृष्णजी को मारने दौड़े परन्तु इन दोनों भाइयों ने उन सब का संहार किया और धनुष् के दोनों खण्ड हाथ में ले आगे चले कंस के द्वारपर कुवल-यापीड़ नाम मस्त हाथी खड़ा था वह इनको मारने आया परन्तु इनने उस हाथी को भी मार गिराया और उसके दांत उखाड़ कर दोनों भाइयों ने हाथ में लिये आगे कंस के भेजेहुये बड़े बली कई मल्ल मिले उन सब को भी मारा और कंस के समीप पहुँचे कंस भी एक बड़े ऊँचे सिंहासनपर सभा में बैठा था श्रीकृष्णचन्द्र ने जातेही कंस के पैर पकड़ सिंहासन से नीचे गिराया और यमलोक को पहुँचाया कंस के आठ भाई थे उनके बलदेवजीने एक २ मूका मार प्राण लिये इसप्रकार कंस का संहार कर अपने माता पिता देवकी और वसुदेव को बन्दीखाने से छुटाया और सबका आश्वासन किया और उग्रसेन को मथुरा का राज्य दिया इसप्रकार देवता और ब्राह्मणों के शत्रु अपने मातुल कंस को मारा एक समय नारद आदि देवऋषि श्रीकृष्णभगवान् के दर्शनों को आये उनको सत्कार से पूजन कर श्रीकृष्णचन्द्र ने आसनपर बैठाया और यह पूछा कि हे मुनीश्वरो! अपने मातुल कंस का वध किया इसलिये आप कोई प्रायश्चित्त हम

को बतावो जिससे यह हत्या दूर होय यह श्रीकृष्णभगवान् का वचन सुन नारदजी कहनेलगे कि आप नित्य शुद्ध बुद्ध सच्चिदानन्दस्वरूप साक्षात् परमात्मा हैं आपको पुण्य और पाप नहीं लगसक्ता तोभी लोकमर्यादा के लिये आपको प्रायश्चित्त करना चाहिये दक्षिणसमुद्र में रामसेतु के बीच गन्धमादनपर्वत में रामचन्द्रजी ने रामनाथ नाम शिवलिङ्ग स्थापन किया और उसके अभिषेक के लिये अपने धनुष् की कोटि करके तीर्थ रचा उस कोटितीर्थ में स्नान कर रावण के वध का पातक रामचन्द्रजी ने निवृत्त किया उस तीर्थ में आप भी स्नान करें तो यह मातुलहत्या निवृत्त होगी कोटितीर्थ में स्नान करने से ब्रह्महत्या आदि पातक निवृत्त होते हैं और आयुर्दाय, आरोग्य और ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है यह नारद का वचन सुन उन मुनियों को सत्कारपूर्वक विसर्जन कर श्रीकृष्णचन्द्र कोटितीर्थ को चले वहां पहुँच संकल्प कर तीर्थ में स्नान किया और अनेक दान दिये तब मातुलहत्या निवृत्त हुई श्रीकृष्णचन्द्र भी निष्पाप हो रामनाथ का दर्शनकर मथुरा को आये हे मुनीश्वरो ! कोटितीर्थ का ऐसा प्रभाव है कोटितीर्थ के समान तीर्थ भूमण्डल में दूसरा नहीं है इस तीर्थ में स्नान करने से ब्रह्मा विष्णु शिवआदि सब देवता प्रसन्न होते हैं हे मुनीश्वरो ! इस अध्याय को जो पढ़े अथवा श्रवण करे वह ब्रह्महत्या आदि पापों से छूट मुक्ति पाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां कोटितीर्थमाहात्म्यकंसवधदोषशान्तिनिरूपणंनामसप्तविंशोऽध्यायः॥ २७॥

अट्ठाईसवां अध्याय॥

साध्यामृततीर्थ का माहात्म्य और उर्वशी पुरूरवा की विचित्रकथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! कोटितीर्थ में स्नानकर साध्यामृत नाम तीर्थ को जाय सब पाप दुःख और दारिद्र्य का हरनेहारा और सब मनोरथ सिद्ध करनेहारा वह तीर्थ गन्धमादन में है तप, व्रत, ब्रह्मचर्य, यज्ञ, दान आदि से वह गति नहीं प्राप्त होती जो साध्यामृततीर्थ में स्नान करने से मिलती है उस तीर्थ का जल स्पर्श होतेही सब पाप नष्ट होजाते हैं जो पुरुष साध्यामृत के जल में अघमर्षण करे वह निष्पाप होकर विष्णु-

लोक को जाता है पापी मनुष्य भी साध्यामृततीर्थ में स्नानकर नरक को नहीं जाते साध्यामृततीर्थ में जब तक अस्थि पड़ी रहे तब तक वह जीव शिवलोक में निवास करे जिसप्रकार सूर्य अन्धकार को दूर करते हैं इसी भांति साध्यामृततीर्थ पापहरण में समर्थ है जिस तीर्थ में स्नानकर राजा पुरूरवा तुम्बुरु के शाप से छूटा और फिर भी उसका उर्वशी से समागम हुआ यह सुन ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी ! मनुष्य होकर राजा पुरूरवा ने उर्वशी क्योंकर पाई और तुम्बुरु ने किस हेतु राजा को शाप दिया यह आप विस्तार से वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! पूर्वकाल में बड़ा प्रतापी और धर्मात्मा पुरूरवा नाम राजा हुआ वह राजा बड़े २ यज्ञ करता और दान देता था उसके राज्य करते २ उर्वशी नाम अप्सरा मित्रावरुण के शाप से मर्त्यलोक में आई और राजा पुरूरवा के नगर के समीप विचरनेलगी और एक उपवन में बैठ वीणा बजाती हुई मीठेस्वर से गानेलगी इस अवसर में राजा भी घोड़े पर चढ़ उसी उपवन में विहार करने गया उसने उर्वशी को देखा देखतेही राजा काम-वश हुआ और उर्वशी से कहा कि हे सुन्दरि ! मेरी भार्या होजा उर्वशी भी राजा का रूप देख मोहित होरही थी वह बोली कि जो आप मेरा एक नियम अङ्गीकार करें तो मैं आपके समीप रहूं वह नियम यह है कि आपको कभी नग्न न देखूंगी कभी मुझे उच्छिष्ट मत देना और केवल घृतही मैं भोजन करूंगी और ये दो मेष अर्थात् मेढ़े मेरे पुत्र के तुल्य हैं इनकी रक्षा करना राजा ने ये सब नियम स्वीकार किये और उर्वशी को साथ लेकर राजधानी में आया और उर्वशी के साथ आनन्द भोगने लगा उर्वशी का भी राजा में इतना अनुराग बढ़ा कि स्वर्ग को भूलगई और इकसठि वर्ष पुरूरवा के समीप बीत गये उर्वशी के बिना स्वर्ग भी शून्य दीखता था इसलिये विश्वावसुगन्धर्व ने विचार किया कि मैं उर्वशी को ले आऊं यह विचार कई गन्धर्व साथ ले विश्वावसु मर्त्यलोक में आया और दोनों मेषों में एक मेष चुराकर आकाश को उड़ा तब उर्वशी पुकारी मेरे पुत्र को कौन हरे लिये जाता है अब मैं क्या करूं राजा पुरूरवा

उर्वशी का पुकारना सुनकर भी न उठा कि मुझे नग्न को न देखे इतने में दूसरे मेष को भी एक गन्धर्व ले उड़ा उसका शब्द सुन उर्वशी बहुत व्याकुल हुई और कहनेलगी कि मैं अनाथ हूं मेरे पुत्र को कोई लिये जाता है अब मैं क्या करूं और किसकी शरण में जाऊं यह उर्वशी का दीन वचन सुन राजा ने सोचा कि चारो ओर अन्धकार है मुझे नग्न को तो नहीं देखसकी इसलिये मेषों की रक्षा करनी चाहिये यह विचार खड्ग लेकर खड़ाहुआ और ललकारा कि रे दुष्ट ! खड़ा रह भागने न पावेगा इसी अवसर में गन्धर्वों ने बिजली चमकाकर प्रकाश करदिया तब उर्वशी ने राजा को नग्न देख देखतेही अपने नियम के अनुसार उर्वशी स्वर्ग को चलीगई गन्धर्व भी दोनों मेष छोड़कर उर्वशी के साथ गये राजा मेषों को लेकर प्रसन्न होताहुआ अपनी शय्या के समीप आया परन्तु उर्वशी को न पाया तब राजा विरह से व्याकुल हो उन्मत्त की भांति पृथ्वी पर भ्रमण करनेलगा कुछ काल में कुरुक्षेत्र पर पहुँचा वहां देखा कि एक कमलों करके शोभित सरोवर में चार अप्सराओं समेत उर्वशी जलक्रीड़ा कररही है राजा देखतेही प्रसन्न होगया और कहनेलगा कि हे प्राणप्रिये ! मुझे छोड़ कहां चली आई तब उर्वशी बोली कि हे महाराज ! आपसे मुझ में गर्भ रहा है इसलिये आप एक वर्ष के अनन्तर इसी स्थान में आना तब मैं आप के साथ एक रात्रि रहूंगी और आपका पुत्र आपके अर्पण करूंगी यह सुन प्रसन्न हो राजा अपनी राजधानी को आया उर्वशी ने अपनी सखियों से कहा कि हे सखियो ! यह वही उत्तम पुरुष है जिसके समीप मैंने सुखपूर्वक कालक्षेप किया और अब भी जिसके विरह से व्याकुल रहती हूं यह उर्वशी का वचन सुन सखियों ने भी कहा कि जो ऐसे पुरुष का समागम हमको होजाय तो कभी स्वर्ग को न जायँ उसीके समीप रहें एक वर्ष बीतने पर राजा भी वहां आया और गन्धर्वों सहित उर्वशी भी वहां आई उर्वशी ने एक बालक राजा को दिया और एक रात्रि राजा के साथ रही और फिर गर्भवती हुई जिससे पांच पुत्र उत्पन्न होयँ ऐसा गर्भ धारण किया और राजा से यह भी कहा कि इन गन्धर्वों से वर मांगो ये आपको

अवश्य वर देंगे तब राजा ने गन्धर्वों से कहा कि सम्पूर्ण शत्रु मैंने जीतलिये खज़ाना पूर्ण है अब यही वर चाहता हूं कि उर्वशी के साथ रहूं तब गन्धर्वों ने प्रसन्न हो एक अग्निस्थाली राजा को दी और कहा कि हे राजन्! वेद की रीति से इस अग्नि के तीन भाग कर यज्ञ करो तब उर्वशी के साथ तुम्हारा निवास होगा यह उनका वचन सुन अग्निस्थाली लेकर राजा अपने नगर को चला मार्ग में राजा ने विचार किया कि मैं बड़ा मूढ़ हूं कि उर्वशी तो न मिली और इस अग्निस्थाली को लिये जाता हूं इसका मैं क्या करूंगा यह मनमें विचार उस अग्निस्थाली को उसी वन में रख अपनी राजधानी में आया वहां आय रात्रि के समय शय्यापर सोये फिर विचार किया कि उर्वशी की प्राप्ति का उपाय मुझे गन्धर्वों ने बताया और अग्निस्थाली दी उसको मैं वन में रखआया यह अच्छा नहीं किया फिर वन में जाकर उसको लेआऊं यह मन में निश्चयकर प्रभात होते ही राजा वन में गया परन्तु वहां वह स्थाली न पाई किन्तु जहां स्थाली रक्खी थी उस स्थान में एक पीपल का पेड़ और उसके बीच में शमी का वृक्ष लगा देखा तब राजा ने विचार किया कि अग्निस्थाली से यह वृक्ष उत्पन्न हुआ इससे इस अग्निरूप वृक्ष के काष्ठ से अरणी बनाय अग्नि उत्पन्न कर यज्ञ करना चाहिये यह निश्चय कर उस वृक्ष का काष्ठ ले अपने नगर में आया और अरणी बनवाई अरणी बनाने के समय राजा गायत्री मन्त्र पढ़ता रहा और गायत्री मन्त्र के जितने अक्षर हैं उतने अंगुल की अरणी बनवाई उससे अग्नि उत्पन्नकर वेदोक्त विधि से राजा ने हवन किया और बहुत से यज्ञ किये उनके प्रभाव से राजा गन्धर्वलोक में प्राप्त हो उर्वशी के साथ विहार करनेलगा एक दिन स्वर्ग में कुछ उत्सव था सब देवताओं की सभा लगी थी उसमें राजा पुरूरवा भी बैठा था और क्रम २ से सब अप्सरा इन्द्र के आगे नृत्य करती थीं इतने में उर्वशी भी नाचने उठी और बड़े गर्व से नाचनेलगी नाचते २ राजा पुरूरवा की ओर ... उर्वशी ने मन्दहास किया और राजा भी उर्वशी से नेत्र मिलाय कुछ ... यह दोनों की चेष्टा देख नाट्य के आचार्य तुम्बुरु ने कोप किया और

कहा कि इस देवसभा में तुम दोनों विना कारण हँसे इसलिये तुम्हारा परस्पर वियोग होगा यह वज्र के तुल्य तुम्बुरु का शाप सुन राजा बहुत दुःखी हुआ और इन्द्र की शरण में जाय प्रार्थना करनेलगा कि हे महाराज ! उर्वशी की प्राप्ति के लिये मैंने अनेक यज्ञ किये तब मुझे प्राप्त हुई अब आप ऐसी अनुग्रह करें जिससे मुझे वियोग दुःख न भोगनापड़े यह राजा का दीनवचन सुन इन्द्र ने कहा कि हे राजन् ! भय मत कर शाप की निवृत्ति का तुझे एक उपाय बताता हूं दक्षिण समुद्र में गन्धमादनपर्वत के बीच साध्यामृत नाम एक तीर्थ है जिसको देवता, सिद्ध, चारण, गन्धर्व, ऋषि आदि सब सेवन करते हैं वह तीर्थ भुक्ति मुक्ति और शाप मोक्ष के देनेहारा है उस तीर्थ में स्नान करनेहारों को अमृत अर्थात् मोक्ष साध्य है असाध्य नहीं इसलिये उस तीर्थ का नाम साध्यामृत हुआ वहां जाकर स्नान करने से उर्वशी का समागम और निरन्तर हमारे लोक में वास होगा यह इन्द्रका वचन सुन राजा गन्धमादनपर्वतको चला वहां जाय साध्यामृत तीर्थ में स्नान किया स्नान करतेही शापमुक्त हुआ और विमान में बैठ स्वर्ग को गया वहां जाय आनन्द से उर्वशी के साथ विहार करनेलगा हे मनीश्वरो ! साध्यामृततीर्थ का ऐसा प्रभाव है कि जिसमें स्नान करने से राजा पुरूरवा को फिर उर्वशी का समागम हुआ इस तीर्थ में स्नान करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं और स्वर्ग की प्राप्ति होती है और निष्काम हो स्नान करे तो मोक्ष पावे जो इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह भी विष्णुलोक को जाय हे मुनीश्वरो ! यह साध्यामृततीर्थ का प्रभाव हमने श्रद्धा से विस्तारपूर्वक आपको श्रवण कराया जो पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने सनत्कुमार आदिकोंको उपदेश किया था ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां साध्यामृततीर्थमाहात्म्योर्वशीपुरूरवोविचित्रकथानकंनामाष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥

उन्तीसवां अध्याय ॥

सर्वतीर्थ का माहात्म्य और सुचरितमुनि की कथा जो नेत्रहीन थे ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! साध्यामृततीर्थ में स्नानकर सब

पाप हरनेहारे सर्वतीर्थ में जाय सर्वतीर्थ में स्नान करतेही पातक महापातक सब दूर होजाते हैं पापी पुरुष के देह में पाप तबतक ही रहते हैं जबतक सर्व-तीर्थ में स्नान न करे उस तीर्थ को जाने के समय सब पाप कांप उठते हैं कि अब हमारा नाश होगा गर्भवासादि दुःख भी तबतकही हैं जबतक सर्वतीर्थ में स्नान न करे यज्ञ दान नियम से गायत्री मन्त्र का जप चारो वेद की सौ आवृत्ति शिव विष्णु आदि देवताओं की पूजा और एकादशी को निरा-हारव्रत करने से जो फल प्राप्त होय वह सर्वतीर्थ में स्नान करने से मिलता है यह सुन मुनियों ने पूछा कि हे सूतजी ! उस तीर्थ का नाम सर्वतीर्थ क्यों हुआ यह आप विस्तार से वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनी-श्वरो ! पूर्वकाल में भृगुवंश में उत्पन्न सुचरित नाम मुनि हुआ है वह जन्म से ही अन्धा था जन्म भर तप किया वृद्धावस्था में मुनि की इच्छा हुई कि सर्वतीर्थों में स्नान करना चाहिये परन्तु तीर्थों में जाने की सामर्थ्य नहीं इसलिये शिवजी का आराधन करना चाहिये यह मन में निश्चयकर गन्धमादनपर्वत में शिवजी की अनुग्रह के अर्थ सुचरित नाम मुनि तप करनेलगा तीन काल स्नान करके शिवपूजन करता अतिथियों का सत्कार करता जाबाल्युपनिषद् की रीति से भस्मोद्धूलन और रुद्राक्ष धारण करता ग्रीष्म में पञ्चाग्नि तापता वर्षा में शरीर पर वृष्टि सहता शीतकाल में जल-शय्या करता इसप्रकार उग्र तप करते २ दश वर्ष बीते तब शिवजी प्रसन्न हो प्रकट हुये मुनिने देखा कि वृषभपर चढ़े वाम अङ्ग में पार्वतीजी को धारण किये त्रिशूल हाथ में लिये कोटिसूर्य के समाम जटाओं करके शोभित सर्वांग में भस्म धारण किये भूतगणों करके सेवित शेषनाग आदि नागों के भूषण पहिने ये साक्षात् शिवजी हैं शिवजी के प्रकट होतेही मुनि को दिव्यदृष्टि प्राप्त होगई तब शिवजी का दर्शन पाय सुचरितमुनि भक्ति से नम्र हो स्तुति करनेलगा ॥

सुचरितउवाच ॥ जय देव महेशान जय शंकर धूर्जटे ॥ ब्रह्मादिपूज्य त्वं त्रिपुरघ्न यमान्तक ॥ १ ॥ जयोमेश म-

हादेव कामान्तक जयामल ॥ जय संसारपूज्य त्वं भूतपाल शिवाऽव्यय ॥ २ ॥ त्रियम्बक नमस्तुभ्यं भक्तरक्षणदीक्षित ॥ व्योमकेश नमस्तुभ्यं जय कारुण्यविग्रह ॥ ३ ॥ नीलकण्ठ नमस्तुभ्यं जय संसारमोचक ॥ महेश्वर नमस्तुभ्यं परमानन्दविग्रह ॥ ४ ॥ गङ्गाधर नमस्तुभ्यं विश्वेश्वर मृडाऽव्यय ॥ नमस्तुभ्यं भगवते वासुदेवाय शम्भवे ॥ ५ ॥ शर्वायोग्राय भर्गाय कैलासपतये नमः ॥ रक्ष मां करुणासिन्धो कृपादृष्ट्यवलोकनात ॥ मम वृत्तमनालोच्य त्राहि मां कृपया हर ॥ ६ ॥

यह स्तुति सुन दया के समुद्र श्रीमहादेवजी ने सुचरितमुनि से कहा कि हे मुने ! जो वर चाहता है वह मांग हम तुझपर प्रसन्न हैं तब सुचरित मुनि ने प्रार्थना की कि हे नाथ ! मेरी इच्छा सब तीर्थों में स्नान करने की है परन्तु मैं वृद्ध हूं इसलिये तीर्थों में जा नहीं सक्ता अब आप ऐसी अनुग्रह करें कि सब तीर्थों में स्नान करने का फल मुझे प्राप्त होजाय यह मुनि की प्रार्थना सुन भक्तवत्सल श्रीमहादेवजी ने सब तीर्थों का आवाहन एक स्थान में किया और मुनि से कहा कि हे मुने ! हमने सब तीर्थों का आवाहन किया इसलिये यह तीर्थ गन्धमादनपर्वत में सर्वतीर्थ नाम से प्रसिद्ध होगा और हमने मन से तीर्थों का यहां आकर्षण किया इसलिये मानस तीर्थ भी इसका नाम होगा हे सुचरित ! महापातकों के दग्ध करनेहारे काम, क्रोध, लोभ, रोग आदि दोषों के नाशक विना ब्रह्मज्ञान केही मोक्ष देनेहारे कुम्भीपाक आदि नरकों का भय निवृत्तकर संसारसमुद्र के पार उतारनेहारे हमारे बनाये इस सर्वतीर्थ में तू स्नान कर यह शिवजी की आज्ञा पाय सुचरितमुनि ने सर्वतीर्थ में स्नान किया स्नान करतेही अति सुन्दर तरुण और दिव्यदेह होगया और उस तीर्थ की प्रशंसा करनेलगा महादेवजी ने कहा कि हे सुचरित ! इस तीर्थ में नित्य स्नानकर और हमारा नाम स्मरणकर देशान्तर के तीर्थों में जाने की इच्छा दूर कर इस तीर्थ के माहात्म्य से अन्त में हमारे लोक में निवास करेगा और भी जे पुरुष इस

तीर्थ में स्नान करेंगे वे हमारे लोक में प्राप्त होंगे इतना कह शिवजी अन्तर्धान हुये और सुचरितमुनि भी बहुत काल उस तीर्थ में स्नानकर अन्त में शिवलोक को गया हे मुनीश्वरो ! यह सर्वतीर्थ का प्रभाव हमने वर्णन किया जो इसको पढ़े अथवा सुने वह भी सब पापों से मुक्त होय ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सर्वतीर्थमाहात्म्यसुचरितमुनिकथानकंनामैकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ २९ ॥

तीसवां अध्याय ॥

धनुष्कोटि का माहात्म्य, नरकों का और जिस २ पापों के करने से उनमें गिरते हैं उनका वर्णन ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! सर्वतीर्थ में स्नान कर ब्रह्महत्या आदि पापों के हरण करनेहारा धनुष्कोटि को जाय धनुष्कोटि के स्मरणमात्र से सब पाप निवृत्त होते हैं जे पुरुष धनुष्कोटि के दर्शन करते हैं और उसमें स्नान करते हैं वे अट्ठाईस प्रकारके महानरकों को नहीं देखते तामिस्र, अन्धतामिस्र, रौरव, महारौरव, कुम्भीपाक, कालसूत्र, असिपत्रवन, कृमिभक्ष, अन्धकूप, शाल्मली, सन्दंश, सूर्मी, वैतरणी, प्राणरोध, विशसन, लालाभक्ष, अवीचि, सारमेयादन, वज्रकणक, क्षारकर्दमपातन, रक्षोगणाशन, शूलशंतवितोदन, दन्तशूकाशन, पर्यावर्तन, तिरोधान, सूचीमुख, पूयशोणितभक्ष, विषाग्निपरिपीड़न ये अट्ठाईस महानरक हैं धनुष्कोटि में स्नान करनेहारा पुरुष इन नरकों में नहीं गिरता जो किसी के धन और स्त्री पुत्रों को हरैं उनको भयंकर यमदूत कालपाशों से बांध बहुत कालतक तामिस्रनरक में डालते हैं, जो स्वामी को मार उसका धन लेकर भोग करे वह अन्धतामिस्र में गिरताहै, जो और जीवों से द्रोहकर अपने कुटुम्ब का पोषण करे वह रौरव नरक में डाला जाता है जहां बड़े विषधर सर्प काटते हैं, जो केवल अपना पेट भरे कुटुम्ब का पालन न करे वह महारौरव में गिरताहै और नित्य अपना मांस खाता है, जो निर्दयीपुरुष पशु पक्षी आदि को रोककर रक्खे उस पुरुष को कुम्भीपाक नरक में औटतेहुये तेलके बीच यमदूत डालते हैं, जो पुरुष माता पिता और ब्राह्मणोंसे द्वेष करे वह कालसूत्रनरक में डालाजाता है कालसूत्रनरक में नीचे अग्नि जलता है और ऊपर प्रचण्ड सूर्य तपताहै

जिसमें पापी पुरुष दग्ध होते रहते हैं, जे वेदमार्ग को छोड़ कुमार्ग में चलते हैं वे असिपत्रवन में गिरते हैं, जो राजा अथवा राज्याधिकारी अदण्ड्य पुरुष को दण्ड देवे और ब्राह्मण को शरीरदण्ड देवे वह सूकरमुख नाम नरक में गिरता है और यमदूत उसको ईख की भांति कोल्हू में पेरते हैं, जो ईश्वराधीन वृत्तिवाले जीवों को पीड़ा देवे वह अँधेरे कुयें में डाला जाता है और वेही जीव उनको वहां पीड़ा देते हैं जे पंक्ति में बैठ आप उत्तम भोजन करें और पंक्तिवालों को न देवें और जे पुरुष पञ्चमहायज्ञ किये विना भोजन करें वे कृमिभोजननाम नरक में डाले जाते हैं, वहां उनको कृमि खाते हैं और वे कृमियों को भक्षण करते हैं, जे राजा अथवा राजपुरुष ब्राह्मण का धन हरें और भी जे पुरुष ब्राह्मण का धन चोरी करके अथवा बलात्कार से लेवें वे संदंशनाम नरक में अग्निकुण्डों के बीच पड़ते हैं और यमदूत उनको लोहे के संसों से पीड़न करते हैं, जो पुरुष पराई स्त्री से संग करे और जो स्त्री परपुरुष से संग करे वे सूर्मिनाम नरक में गिरते हैं वहां उनको लोहे की तपाई हुई सूर्ति का आलिङ्गन करना पड़ता है जिस सूर्ति के शरीर में बड़े २ तीखे कांटे हैं और जब तक सूर्य चन्द्र रहें तब तक उसी मूर्ति का आलिङ्गन किये खड़े रहते हैं, जो पुरुष अनेक प्रकारों करके जीवों को पीड़ा देते हैं वे बहुत कांटोंवाले शाल्मलिनाम नरक में डाले जाते हैं, जो पुरुष पाखण्ड धर्म में चले और धर्ममार्ग का खण्डन करे वह वैतरणीनाम नरक में गिरता है, जो पुरुष सदाचार और लज्जाछोड़ वृषली स्त्री का संग करे और शौच आचार से हीन होय वह अतिबीभत्सनरक में पूय, विष्ठा, रुधिर, मूत्र आदि के कुण्डों में गिरता है, जो पुरुष दम्भ से यज्ञ में पशुओं की हिंसा करे और विधि जाने नहीं वह वैशसनरक में जाता है वहां यमदूत उसको शस्त्रों से छेदन करते हैं, अपनी स्त्री को जो मोह से वीर्य पान करावे वह रेतःकुण्ड में गिरकर वीर्य पान करता है, जो पुरुष ग्राम में आग लगावे किसीको विष देवे और मार्ग चलनेवाले व्यापारियोंको लूटे वह वज्रदंष्ट्रनाम नरक में डाला जाता है, इस प्रकार और भी पापी पुरुष अनेक प्रकार के घोरनरकों में डाले जाते हैं परन्तु ये सब पाप करनेहारे यदि एक बार भी

धनुष्कोटितीर्थ में स्नान करें तो इन नरकों को कभी न देखें सद्गतिही पावें धनुष्कोटि में स्नान करने से अश्वमेधयज्ञ का फल प्राप्त होता और आत्मज्ञान होता है और चार प्रकार की मुक्ति मिलती है धनुष्कोटि में स्नान करने से बुद्धि निर्मल होजाती है कभी दुःख नहीं होता और पाप में चित्त नहीं प्रवृत्त होता पुरुष को तुलादान और हजार गोदान करने से जो फल प्राप्त होता है वह धनुष्कोटि में एक बार स्नान करने से होता है अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष आदि जो पदार्थ चाहे वही धनुष्कोटि में स्नान करतेही प्राप्त होता है अनेक पातक महापातकों करके युक्त पुरुष भी धनुष्कोटि में स्नान से शुद्ध होजाता है धनुष्कोटि स्नान से प्रज्ञा, लक्ष्मी, यश, संपत्ति, वैराग्य, धर्म, ज्ञान, मनःशुद्धि आदि सब पदार्थ प्राप्त होते हैं करोड़ों ब्रह्महत्या, सुरापान, गुरुदारागमन, सुवर्णस्तेय आदि पातक धनुष्कोटि में स्नान करने से निवृत्त होते हैं और भी जो पातक ब्रह्महत्या आदि महापातकों के तुल्य हैं वे सब नष्ट होते हैं इन बातों में कभी सन्देह नहीं करना इस माहात्म्य को जो अर्थवाद समझे वह नरक को जाता है मनुष्यों का बड़ा मूर्खपन है कि अद्वैतज्ञान देनेहारे सब पातक और दुःख हरनेहारे धनुष्कोटितीर्थ को छोड़ और तीर्थों में भटकते फिरते हैं धनुष्कोटि में स्नान किये पीछे यम का भय नहीं रहता जो पुरुष धनुष्कोटि को नमस्कार करें दर्शन करें स्तुति और प्रणाम करें वे माता के स्तन नहीं पीते अर्थात् जन्म मरण से रहित होजाते हैं इतनी कथा सुन मुनियों ने पूछा कि हे सूतजी! उस तीर्थ का नाम धनुष्कोटि क्योंकर हुआ यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो। रावण को मार विभीषण को लङ्का का राज्य देकर सीता लक्ष्मण सहित रामचन्द्र जी सुग्रीव आदि वानरों समेत गन्धमादनपर्वत में पहुँचे और विभीषण भी साथ आया वहां पहुँच विभीषण ने प्रार्थना की कि हे महाराज! इस आपके बांधेहुये सेतु के मार्ग से और भी प्रतापी राजा आकर मेरी पुरी लङ्का को पीड़ा देंगे इसलिये आप अपने धनुष् की कोटि अर्थात् अग्रकर के इस सेतु को भेदन करदीजिये यह विभीषण की प्रार्थना सुन अपने

धनुष् के अग्रभाग से सेतु को तोड़दिया वहांहीं धनुष्कोटितीर्थ बना धनुष् करके रेखा की हुई जो पुरुष देखे वह गर्भवास का दुःख नहीं भोगता धनुष्कोटि करके रामचन्द्रजी ने समुद्र में रेखा की उसके दर्शन सेही मुक्ति होजाती है स्नान का फल तो कौन वर्णन करसके नर्मदा के तटपर तप करे तो महापातक निवृत्त होयँ गङ्गातीर में मरण से मोक्ष होता है और कुरुक्षेत्र में दान देने से ब्रह्महत्या आदि पाप नष्ट होते हैं परन्तु धनुष्कोटि में तप मरण और दान तीनोंही मुक्ति के देनेहारे हैं पातक महापातक आदि का भय तबतक है जबतक धनुष्कोटि का दर्शन न करे धनुष्कोटि का दर्शन करतेही हृदय की ग्रन्थि भिन्न होजाती है और सब संशय निवृत्त होजाते हैं और पाप भी नष्ट होते हैं रामचन्द्रजी ने विभीषण के कल्याण के लिये जो दक्षिणसमुद्र में धनुष्कोटि करके रेखा की वही स्वर्ग, कैलास, वैकुण्ठ, ब्रह्मलोक आदि का मार्ग है धनुष्कोटि स्नान मन्त्रों के जप अनेक दान और यज्ञों से भी अधिक है धनुष्कोटि में स्नान करनेहारे पुरुष को प्रयाग में स्नान और काशी मरण से कुछ प्रयोजन नहीं धनुष्कोटि में स्नान कर तीन दिन उपवास न करे और ब्राह्मण को सुवर्ण गो आदि दान न देवे वह पुरुष जन्मान्तर में दरिद्री होता है धनुष्कोटि में स्नान करने से जो फल होता है वह अग्निष्टोम आदि यज्ञ करने से भी नहीं प्राप्त होता है सब तीर्थों से धनुष्कोटितीर्थ अधिक है भूमण्डल में दश हज़ार कोटितीर्थ हैं वे सब धनुष्कोटि में निवास करते हैं आठवसु, आदित्य, रुद्र, मरुत्, साध्य, गन्धर्व, सिद्ध, विद्याधर आदि सब देवता और विष्णु, लक्ष्मी, शिव, पार्वती, ब्रह्मा और सरस्वती भी धनुष्कोटितीर्थ में निवास करते हैं धनुष्कोटि के तटपर तपकर अनेक देवता और ऋषि उत्तम सिद्धि को प्राप्त हुये जो धनुष्कोटि में स्नानकर देवता और पितरों का तर्पण करे वह ब्रह्मलोक को जाता है जो धनुष्कोटि पर एक ब्राह्मण को भी भोजन करावे वह दोनों लोकों में सुख पाता है जो तप अथवा अश्वमेध आदि यज्ञ न करसके वह धनुष्कोटि में स्नान करे धनुष्कोटि में स्नान करनेहारे पुरुष निन्द्ययोनि में जन्म नहीं लेते माघमास मकर के सूर्य में जो

पुरुष धनुष्कोटि में स्नान करें उनका पुण्यफल हम नहीं वर्णन करसक्के माघमास में जो स्नान करे वह गङ्गाआदि सर्वतीर्थों के स्नान का फल पाय मोक्ष पाता है जन्म भर के किये पाप स्नान करतेही नष्ट होजाते हैं सब देवताओं में रामचन्द्र और सब तीर्थों में धनुष्कोटि उत्तम है माघ महीने में तीन दिन धनुष्कोटि में स्नान करे और जितेन्द्रिय रहकर एकबार भोजन करे वह ब्रह्महत्या आदि पापों से छूट मुक्ति पाता है माघ महीने में स्नान करे और शिवरात्रि को उपवासकर जागरण करे और रात्रि को रामनाथ महादेव का भक्ति से पूजनकर दूसरे दिन प्रभातही उठ धनुष्कोटि में स्नान कर फिर रामनाथ का विधिपूर्वक पूजनकर यथाशक्ति ब्राह्मणों को भोजन कराय सुवर्ण गौ भूमिआदि दानकर ब्राह्मणों की आज्ञा पाय आपभी भोजन करे इस विधि से जो माघ स्नान करे उसके सब पापों को निवृत्त कर श्रीमहादेवजी भुक्ति और मुक्ति देते हैं इसलिये हे मुनीश्वरो ! मोक्ष की इच्छा होय तो अवश्यही धनुष्कोटि में स्नान करना चाहिये अर्धोदय योग में जो पुरुष धनुष्कोटि में स्नान करें उनके सब पाप नष्ट होते हैं अर्धोदय और महोदययोग में जो स्नान करें उनको ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवता प्रसन्न होकर भुक्ति और मुक्ति देते हैं इन दोनों योगों में जो पुरुष धनुष्कोटि में स्नान करें वे सब यज्ञों के फल पाते हैं और उनके सब पापों का प्रायश्चित्त भी होजाता है चन्द्र और सूर्य के ग्रहण में जो पुरुष धनुष्कोटि में स्नान करे उसके पुण्यफल को शेषजी भी नहीं गिनसक्के ग्रहण में स्नान करतेही ब्रह्महत्याआदि पाप निवृत्त होते हैं और मुक्ति भी प्राप्त होती है इस कारण ग्रहण अर्धोदय और महोदय में विशेष करके स्नान करना चाहिये हे मुनीश्वरो ! सब व्यवहार छोड़ धनुष्कोटि तीर्थ को जावो और पितरों को पिण्डदान करो वहां पिण्डदान करने से कल्प भर पितर तृप्त रहते हैं पितरों की तृप्ति के लिये रामचन्द्रजीने तीन स्थान बनाये हैं सेतुमूल धनुष्कोटि और गन्धमादनपर्वत इनतीनों स्थानों का नाम ऋणमोक्ष है यहां पिण्डदेने से मनुष्य पितरों के ऋण से मुक्त होते हैं सब उपाय से धनुष्कोटि का सेवन करना चाहिये धनुष्कोटि में

स्नानकर अश्वत्थामा महाघोर सुप्तमारण दोष से छूटा हे मुनीश्वरो! यह हमने भुक्ति मुक्ति का देनेहारा धनुष्कोटि का माहात्म्य वर्णन किया॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सर्वनरकस्वरूपनिरूपणं नामत्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३०॥

इकतीसवां अध्याय॥

धनुष्कोटितीर्थ का माहात्म्य और अश्वत्थामा ने जो सोतेहुये वीरों को मारा था उसका वर्णन॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! अश्वत्थामा ने क्योंकर सुप्तमारण किया और धनुष्कोटि में स्नानकर किस प्रकार उस पाप से छूटा यह आप वर्णन करें आपका वचनामृत पान करते २ हमको तृप्ति नहीं होती यह नैमिषारण्यवासी मुनियों का वचनसुन अपनेगुरु श्रीवेदव्यासजी को प्रणामकर सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! कौरव और पाण्डवों का राज्य के निमित्त बड़ा युद्ध हुआ उस युद्ध में दश दिन घोर संग्राम कर भीष्म शरशय्या पर सोये पांचदिन द्रोणाचार्य ने युद्ध किया दो दिन युद्ध करके कर्ण और एकदिन युद्ध करके शल्य मारेगये अठारहवें दिन भीमसेन ने गदायुद्ध से दुर्योधन के ऊरु तोड़डाले तब धृष्टद्युम्न शिखण्डी आदि सब पाण्डवों के पक्ष के राजा विजय पाय प्रसन्न हो शंख बजाते अपने २ डेरे को गये और श्रीकृष्णचन्द्र तथा सात्यकी सहित पाण्डव दुर्योधन के शून्य डेरों में प्रविष्ट हुये वहां दुर्योधन के वृद्ध मन्त्री कञ्चुकी अन्तःपुर के रक्षकआदि सब उनको प्रणाम करनेलगे पाण्डव भी दुर्योधन का सब धन ग्रहणकर उस रात्रि को वहांहीं रहे परन्तु श्रीकृष्णभगवान् ने कहा कि मङ्गल के लिये आजकी रात डेरों में नहीं रहना चाहिये इस लिये वे सब ओघवती नाम नदी के तटपर जायरहे कृतवर्मा कृपाचार्य और अश्वत्थामा ये तीनों जो कौरवों के पक्ष में बचे थे सूर्यास्त से पहिलेही दुर्योधन के पास गये देखा कि दोनों ऊरु दुर्योधन के टूटगये रुधिर से सब अङ्ग भीग रहे हैं और भूमि पर धूलि में लोटता है यह अवस्था राजा दुर्योधनकी देख इन तीनों ने बड़ा शोच किया राजा इनको देख अश्रुपात

करनेलगा यह दशा राजा दुर्योधन की देख अश्वत्थामा क्रोध से जलउठा और दोनों हाथ पीस क्रोध से अश्रुपात करता हुआ दुर्योधन से बोला कि हे राजन् ! मेरे पिता को युद्ध में दुष्टों ने छल से मारडाला उसका मुझे इतना दुःख न हुआ जितना आज तुम्हारी यह दशा देखकर हुआ है इस लिये मैं शपथ खाकर कहता हूं कि आज रात्रि को पाण्डव और सृंजयों को श्रीकृष्णके देखते २ मारूंगा आप मुझे आज्ञा दीजिये यह गुरुपुत्र का वचन सुन दुर्योधन ने कहा कि बहुत अच्छा जैसी आपकी इच्छा होय वैसा कीजिये और कृपाचार्य से कहा कि आप अश्वत्थामा का अभिषेक कीजिये कि ये सेनापति बनें कृपाचार्य ने भी जल लाकर उसी क्षण अश्वत्थामा का अभिषेक किया अश्वत्थामा भी दुर्योधन को आलिङ्गनकर कृपाचार्य और कृतवर्मा को साथ ले दक्षिणदिशा को चला और सूर्यास्त होते २ पाण्डवों के डेरे के पास तीनों वीर आय पहुँचे वहां पाण्डवों का बड़ा कोलाहल सुनकर पूर्वकी ओर तीनों भय से चले जाते २ वन में उनमें से एक ने अति मनोहर सरोवर देखा कि जिसमें कमलआदि अनेक पुष्प फूले थे और हंस कारण्डवआदि पक्षी क्रीड़ा कररहे थे उस सरोवर में तीनों ने जल पिया और अपने घोड़ों को जल पिलाया और श्रम निवृत्त करने के लिये घोड़ों से उतरकर एक वटवृक्ष के नीचे बैठे और सायंसन्ध्या भी की इतने में सूर्य अस्त हुआ अतिघोर अन्धकार चारोओर छागया दिनचारी जीव निद्रावश हुये और रात्रि में विचरनेवाले जीव इधर उधर घूमनेलगे वे तीनों भी वटवृक्ष के नीचे बैठे थे उनमें कृपाचार्य और कृतवर्मा तो निद्रावश हो भूमिही में सोगये और अश्वत्थामा को मारे क्रोध और शोक के निद्रा न आई तब अश्वत्थामा ने देखा कि अतिभयंकर एक उलूक अति घोर शब्द करता हुआ बहुत उलूकों को साथ लिये वहां आया और उस वटवृक्ष की शाखाओं में हजारों काक सोते थे उनको मार २ गिरानेलगा किसी काक के नेत्र फोड़दिये किसीकी टांग तोड़ दी किसी के पर उखाड़ लिये किसी का शिरही नोच लिया इस प्रकार उस उलूक ने काकों का संहार किया और अपने शत्रु काकों की यह गति देख बहुत प्रसन्न हुआ उलूक का यह व्यव-

हार देख अश्वत्थामा ने विचार किया कि मैं भी इसीप्रकार शत्रुसंहार करूं क्योंकि युद्ध करके तो पाण्डवों का जीतना कठिन है और हमने दुर्योधन के आगे पाण्डवों के वध की प्रतिज्ञा की है इसलिये रात्रि के समय कपट से ही पाण्डवों का संहार करना चाहिये क्योंकि निन्द्यकर्म करके भी शत्रुवों को मारना चाहिये पाण्डवों ने भी छल सेही जय पाई है और नीतिशास्त्र जाननेवाले विद्वानों ने यह कहा है कि शत्रु की सेना परिश्रान्त होय सोती होय भोजन करती होय शस्त्र छोड़े किसी व्यापार में लगी होय उस समय मारनी चाहिये यह मन में सोच विचार अश्वत्थामा ने कृपाचार्य और कृतवर्मा को जगाया और उससे यह कहा कि राजा दुर्योधन धर्म से युद्ध करतारहा और पाण्डवों ने क्षुद्रकर्मों से उसको मारा भीमसेन ने दुर्योधन के शिरपर पैर रक्खा यह सब बात आप भी जानते हैं अब मेरा यह निश्चय है कि इसी रात्रि में सोये हुये पाण्डवों को छल से मार देवें यह सुन कृपाचार्य बोले कि हे अश्वत्थामन्! सोये हुये शत्रुवों को मारना कुछ धर्म नहीं शस्त्रहीन और रथहीन शत्रुवों को मारना भी उचित नहीं इसलिये तुम ऐसा साहस मत विचारो हम तीनों धृतराष्ट्र गान्धारी और परम धर्मात्मा विदुर से सम्मति पूछें वह जैसा कहेंगे वैसाही किया जायगा यह अपने मामा कृपाचार्य का वचन सुन अश्वत्थामा ने कहा कि मेरे पिता को युद्ध में छल से मारा है वह दुःख मेरे हृदय को जलाता है और धृष्टद्युम्न कहता है कि मैं द्रोणहन्ता हूं यह वचन मैं क्योंकर सुनूं पाण्डवों ने ही पहिले धर्म की मर्यादा भङ्ग की आप सबके देखते २ त्यक्तशस्त्र मेरे पिता को धृष्टद्युम्न ने मारा और शिखण्डी को आगेकर छल से वृद्धभीष्म को अर्जुन ने मारा इस भांति और भी बहुत से राजा पाण्डवों ने छल से मारे इसी भांति हम भी छल से सोते हुये पाण्डवों का संहार करें तो कुछ अनुचित नहीं यह निश्चय कर अश्वत्थामा अपने रथ में चढ़ क्रोध से जलता हुआ पाण्डवों के डेरे को चला कृपाचार्य और कृतवर्मा भी उसके पीछे २ चले और क्षण में वहां आय पहुँचे सब मनुष्य युद्ध से थके हुये अपने २ डेरों में सोते थे डेरे के द्वारपर पहुँच अश्वत्थामा ने शिवजी का

आराधन किया शिवजी ने प्रसन्न हो अश्वत्थामा को अति उत्तम एक खड्ग दिया तब अश्वत्थामा प्रसन्न हो कृपाचार्य और कृतवर्मा को पाण्डवों के शिविर अर्थात् लश्कर के द्वारपर खड़ाकर आप भीतर घुसा और शिविर में विचरनेलगा पहिले धृष्टद्युम्न के तम्बू के समीप पहुँचा और तम्बू के भीतर घुस देखा कि श्वेतवर्ण की शय्या के ऊपर युद्ध से थकाहुआ धृष्टद्युम्न सोता है और उसकी सेना तम्बू के चारो ओर डेरा डाले पड़ी है अश्वत्थामा ने एक लात मारकर धृष्टद्युम्न को जगाया धृष्टद्युम्न ने जागकर देखा कि अश्वत्थामा सम्मुख खड़ा है और शय्या से उठना चाहा परन्तु अश्वत्थामा ने उसके केश पकड़कर वहांहीं गिरादिया और आप उसकी छाती पर चढ़ बैठा धनुष् की ज्यासे उसका कण्ठ बांधकर जिसप्रकार पशुको मारे उसीभांति धृष्टद्युम्न को अश्वत्थामा ने मारदिया धृष्टद्युम्न निद्रा से व्याकुल था और अठारह दिन के युद्ध से थका हुआ था इसलिये कुछ पराक्रम न करसका फिर युधामन्यु उत्तमौजा द्रौपदी के पांचोपुत्र सोमक जो युद्ध से बचे थे और शिखण्डी आदि और भी राजाओं को अश्वत्थामा ने खड्ग से मारा अश्वत्थामा के भय से जो भगकर बाहर गये उनको कृपाचार्य और कृतवर्मा ने मारा इस प्रकार क्षणमात्र में उन तीनों ने पाण्डवों की सेना का संहार किया और तीनों उस शिविर से निकल भय से इधर उधर भगे अश्वत्थामा नर्म्मदा तीर पर पहुँचा वहां हजारों वेदवेत्ता ऋषि तप करते थे उनके समीप अश्वत्थामा गया परन्तु उन्होंने योगबल से इसका सब कर्म जान लिया और अश्वत्थामा से मुनियों ने यह कहा कि हे द्रोणपुत्र ! तू ब्राह्मणों में अधम है तैंने ऐसा घोर पाप किया सोते हुये मनुष्यों को मारा तेरे दर्शन से हम पतित होते हैं और तेरे साथ संभाषण करने से ब्रह्महत्या के तुल्य पाप लगता है इसलिये हे पापिन् ! शीघ्र तू हमारे आश्रम से निकलजा यह मुनियों का वचन सुन लज्जित हो अश्वत्थामा वहां से चला और काशीआदि तीर्थों में जहां २ गया वहांहीं ब्राह्मणों ने तिरस्कार किया तब प्रायश्चित्त की इच्छा से बदरिकाश्रम में व्यासजी के पासगया और व्यासजी को प्रणाम किया तब व्यासजी ने कहा

कि हे अश्वत्थामन्! शीघ्रही हमारे आश्रम से निकल तू बड़ा पातकी है तेरे साथ वार्तालाप करने से हमको भी पातक लगता है यह व्यासजीका वचन सुन अतिदुःखी हो अश्वत्थामा ने कहा कि हे महाराज! सबने मेरा तिरस्कार किया तब आपकी शरण में आया अब आप भी मुझे त्याग देवें तो मैं किस की शरण जाऊं आप दयालु हैं मेरे ऊपर भी कृपा करें और इस पाप का मुझे प्रायश्चित्त बतावें आप सर्वज्ञ हैं यह अश्वत्थामा का दीन वचन सुन क्षणमात्र ध्यानकर व्यासजी ने कहा कि हे अश्वत्थामन्! इस पाप का प्रायश्चित्त किसी स्मृति में तो लिखा नहीं तो भी हम एक उपाय तुमको बताते हैं दक्षिण समुद्र में रामसेतु के समीप धनुष्कोटि नाम तीर्थ सब पातक हरने में समर्थ है उस तीर्थ में जाकर हे अश्वत्थामन्! तू स्नान कर एक महीने स्नान करने से शुद्ध हो जायगा यह व्यासजी की आज्ञा पाय अश्वत्थामा धनुष्कोटितीर्थपर पहुँचा और संकल्पपूर्वक एकमास नियम से स्नान किया नित्य तीनकाल रामनाथ का पूजन और पञ्चाक्षर मन्त्र का जप किया एक महीना पूरा होनेपर उस दिन उपवास रक्खा और रामनाथ के समीप रात्रि को जागरण किया प्रभात होते ही धनुष्कोटि में स्नानकर रामनाथ का पूजन किया और भक्ति से अश्रुपात करता हुआ शिवजी के आगे नृत्य करनेलगा तब भक्तवत्सल श्रीमहादेव जी प्रसन्नहो प्रकट हुये उनको देख अश्वत्थामा स्तुति करनेलगा॥

द्रौणिरुवाच॥ नमस्ते देवदेवेश करुणाकर शङ्कर॥ आपदम्बुधिमग्नानां पोतायितपदाम्बुज॥ १॥ महादेव कृपामूर्त्ते धूर्जटे नीललोहित॥ उमाकान्त विरूपाक्ष चन्द्रशेखर ते नमः॥ २॥ मृत्युंजय त्रिनेत्र त्वं पाहि मां कृपया दृशा॥ पार्वतीपतये तुभ्यं त्रिपुरघ्नाय शम्भवे॥ ३॥ पिनाकपाणये तुभ्यं त्र्यम्बकाय नमोनमः॥ अनन्तादिमहानागहारभूषणभूषित॥ ४॥ शूलपाणे नमस्तुभ्यं गङ्गाधर मृडाव्यय॥ रक्ष मां कृपया देव पापसंघातपञ्जरात्॥ ५॥

यह स्तुति सुन प्रसन्न हो श्रीमहादेवजी ने अश्वत्थामा से कहा कि हे द्रोणपुत्र! धनुष्कोटि में स्नान करने से सुप्तमारणदोष से तू मुक्त हुआ अब जो वर चाहे वह मांग यह शिवजी का वचन सुन अश्वत्थामा ने प्रार्थना की कि हे महाराज! आपके दर्शन सेही मैं कृतार्थ हुआ आप का दर्शन पापी पुरुषों को कोटिजन्म में भी दुर्लभ है अब यही वर चाहता हूं कि आपके चरणारविन्द में दृढ़ भक्ति रहे शिवजी ने उसको यही वर दिया और अन्तर्धान हुये और अश्वत्थामा निष्पाप होगया तब सब ऋषियों ने उसको अपने में मिलाया सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! धनुष्कोटि का यह वैभव हमने वर्णन किया जिसमें स्नान करतेही अश्वत्थामा शुद्ध हुआ जो पुरुष इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह सब पापों से मुक्त होकर शिवलोक को जाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायामश्वत्थामकथानकं नामैकत्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३१॥

बत्तीसवां अध्याय॥

राजा नन्द और धर्मगुप्त की अद्भुत कथा और धनुष्कोटितीर्थ का माहात्म्य॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! हम आपकी प्रीति के लिये फिर भी धनुष्कोटि का वैभव वर्णन करते हैं चन्द्रवंश में नन्द नाम एक बड़ा प्रतापी चक्रवर्त्ती राजा हुआ है उसका पुत्र धर्मगुप्त नाम था राजा नन्द सब राज्यभार पुत्र को सौंप तप करने को वन में गया और धर्मगुप्त राज्य करने लगा धर्मगुप्त ने बहुत यज्ञ किये ब्राह्मणों को सुवर्ण गौ भूमि आदि दान दिये उसके राज्य में सब प्रजा धर्म में तत्पर थी और चौर आदि की पीड़ा किसी को नहीं थी किसी समय धर्मगुप्त घोड़ेपर चढ़ आखेट के लिये वन को गया वह वन ताल, तमाल, हिंताल, कुरबकआदि वृक्षों से पूर्ण कमल, कुमुद, कह्लार, नीलोत्पल आदि से भरे तड़ागों करके शोभित था और अनेक ऋषि उस वन में तप करते थे वहां राजा धर्मगुप्त मृगया खेलने लगा एक मृग के पीछे लगा हुआ दूर चलागया और सब सेना पीछे

 इतने में रात्रि होगई तब राजा धर्मगुप्त एक सरोवर के तटपर उतरा

वहां सन्ध्याकर रात्रि व्यतीत करने के लिये सिंह आदि जीवों के भय से एक वृक्षपर चढ़गया इतने में एक रीछ भगाहुआ आया कि जिसके पीछे एक सिंह लगरहा था वह रीछ भी सिंह से भयभीत हुआ इसी वृक्षपर चढ़ा और राजा को उसने देखा और कहा कि हे महाभाग! मुझसे मत डर हम दोनों यहां रात्रि व्यतीत करदेंगे नीचे बड़ा भयंकर सिंह खड़ा है अब आधीरात्रि तक तू निद्राकर मैं तेरी रक्षा करूंगा पीछे मैं सोऊंगा तू मेरी रक्षा करना यह रीछ का वचन सुन धर्मगुप्त सोगया और रीछ उसकी रक्षा करनेलगा तब सिंह ने कहा कि हे रीछ! यह मनुष्य सोगया है इसको तू नीचे ढकेल दे तब रीछ ने कहा कि हे मृगराज! तू धर्म नहीं जानता विश्वासघाती पुरुष की कभी सद्गति नहीं होती ब्रह्महत्या आदि पाप तो किसी प्रकार निवृत्त हो भी सक्के हैं परन्तु मित्रद्रोह का पाप कोटिजन्मों में भी नहीं छूटता पृथ्वी को जितना भार विश्वासघातक पुरुष का लगता है उतना मेरु आदि महापर्वतों का नहीं यह रीछ का वचन सुन सिंह चुप हुआ इतने में आधीरात हुई तब रीछ सोया और राजा उसकी रक्षा में बैठा तब सिंह ने राजा से कहा कि इस रीछ को नीचे डाल दे यह सिंह का वचन सुन राजा ने उस रीछ को धीरे से ढकेल दिया परन्तु वह रीछ भूमिपर न गिरा उसने वृक्ष की एक शाखा पकड़ ली और फिर ऊपर चढ़ा और राजा से बोला कि हे राजन्! मैं भृगुकुल में उत्पन्न ध्यानकाष्ठाभिध मुनि हूं मैंने अपनी इच्छा से रीछ का रूप धरा है तैंने विना अपराध मुझे नीचे डालना चाहा इसलिये उन्मत्त होजा यह शाप राजा को दे सिंह से कहा कि हे सिंह! तू कुबेर का मन्त्री नृसिंह नाम यक्ष है एक समय अपनी भार्या को संग ले हिमालयपर्वत में गौतमऋषि के आश्रम के समीप जाय विहार करनेलगा इतने में गौतमऋषि समिधा लाने को अपनी पर्णकुटी से निकले गौतममुनि ने तुझको नग्न देख शाप दिया कि हे मूढ़! हमारे आश्रम के समीप तू विवस्त्र हुआ इसलिये सिंह होजा इस भांति तू गौतम मुनि के शाप से सिंह हुआ है कुबेर बड़े महात्मा हैं और उनके मन्त्री भी धर्मात्मा हैं फिर तुम हमको क्यों मारना चाहते हो यह ध्यानकाष्ठमुनि

का वचन सुनतेही सिंहरूप छोड़ वह दिव्य यक्ष का रूप धार मुनिको प्रणाम कर बोला कि हे मुने ! आज मुझे पूर्वजन्म का वृत्तान्त स्मरण आया गौतम ने मेरा शापान्त यह किया था कि जब ऋक्षरूप ध्यानकाष्ठमुनि से तेरा संवाद होगा तब तू सिंहरूप को छोड़ यक्ष होगा वह संवाद आज हुआ और आप के प्रभाव को मैंने जाना इतना कह मुनि को प्रणामकर विमानपर चढ़ यक्ष तो अलकापुरीको गया और मुनि भी अपनी इच्छानुसार चलदिये धर्मगुप्त भी उन्मत्त हो वन में विचरनेलगा इतने में उसकी सेना और सब मन्त्री आय मिले और राजा की यह अवस्था देख किसी प्रकार राजधानी को लाये और वहां से नर्मदा नदी के तटपर राजा धर्मगुप्त को लेगये जहां उसका पिता नन्द तप करता था नन्द से सब वृत्तान्त कहा तब राजा नन्द अपने पुत्र को जैमिनिमुनि के पास लाया और प्रार्थना की कि हे महाराज ! यह मेरा पुत्र उन्मत्त हो गया है आप इसके आरोग्य होने का कोई उपाय बतावें यह राजा नन्द का वचन सुन जैमिनिमुनि कुछ काल ध्यानधर बोले कि हे राजन् ! तेरे पुत्र को ध्यानकाष्ठमुनि ने शाप दिया है उस शाप की निवृत्ति का हम उपाय कहते हैं दक्षिणसमुद्र के तटपर रामसेतु में सब पाप और शाप हरनेवाला धनुष्कोटि नाम तीर्थ है वहां अपने पुत्र को ले जाकर स्नान कराइये तब यह आरोग्य होजायगा यह जैमिनिमुनि का वचन सुन राजा नन्द अपने पुत्र को धनुष्कोटितीर्थ पर लेआया और स्नान कराया स्नान करातेही उसका उन्माद निवृत्त हुआ राजा नन्द ने भी धनुष्कोटि में स्नान किया और एक दिन उपवासकर रामनाथ का पूजनकर राजा नन्द तो तप करने चलागया पीछे से धर्मगुप्त ने ब्राह्मणों को दान दिये और भक्ति से रामनाथ का पूजन किया कुछ दिन वहां रहकर अपने मन्त्रियों समेत राजधानी को आया और धर्म से राज्य करनेलगा सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! जो पुरुष भूत, राक्षस, ग्रह, अपस्मार, उन्माद आदि से पीड़ित होय उसको धनुष्कोटि में अवश्य स्नान करना चाहिये जो पुरुष धनुष्कोटितीर्थ को छोड़ और तीर्थ को ढूंढ़ता फिरे वह गोदुग्ध छोड़ थूहर के दुग्ध को ढूंढ़नेवाले मनुष्य के समान मूढ़

होता है जो मनुष्य तीन काल अथवा स्नान के ही समय नित्य धनुष्कोटि का स्मरण करें वे ब्रह्मलोक को जाते हैं हे मुनीश्वरो! इस धर्मगुप्त की कथा श्रवण करने से ब्रह्महत्या सुवर्णस्तेय आदि सब पाप नष्ट होते हैं॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां नृपनन्दधर्मगुप्तकथानकं नामद्वात्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३२॥

तेंतीसवां अध्याय॥

परावसु ब्राह्मण की कथा और धनुष्कोटितीर्थ का माहात्म्य॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! फिर भी हम धनुष्कोटि का प्रभाव [व]र्णन करते हैं जिसके श्रवण करतेही सब पातक दूर होजायँ पूर्वकाल में [प]रावसु नाम वेदवेत्ता ब्राह्मण अज्ञान से अपने पिता को मार धनुष्कोटि [त]ीर्थ में स्नानकर उस घोर हत्या से छूटा यह सुन ऋषियों ने पूछा कि हे सूतजी! परावसु ने अपने पिता को क्यों मारा और फिर उस हत्या से किसविधि छूटा यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! बड़ा धर्मात्मा बृहद्द्युम्न नाम चक्रवर्ती राजा पूर्वकाल में हुआ है जिसने अनेक यज्ञ किये और उसके यज्ञ करानेहारे रैभ्यमुनि थे उनके अर्वावसु और परावसु ये दो पुत्र थे दोनों पुत्र वेद, वेदाङ्ग, श्रौत, स्मार्त, न्याय, मीमांसा, सांख्य, योगशास्त्र आदि में निपुण थे रैभ्यमुनि ने एक समय इन दोनों को यज्ञ कराने के लिये राजा बृहद्द्युम्न के पास भेजा और रैभ्यमुनि अपनी बड़ी स्नुषा अर्थात् अर्वावसु की स्त्री सहित अपने आश्रम में रहे वे दोनों भाई भी पिता की आज्ञा से राजा को यज्ञ कराने लगे सब कर्म साङ्गोपाङ्ग उन्होंने कराये कहीं चूके नहीं उस यज्ञ में राजा के निमन्त्रण से वशिष्ठ, गौतम, अत्रि, जाबालि, कश्यप, क्रतु, दक्ष, पुलस्त्य, पुलह, नारद, मार्कण्डेय, शतानन्द, विश्वामित्र, पराशर, भृगु, कुत्स, वाल्मीकि, व्यास, धौम्य आदि अपने २ हज़ारों शिष्य प्रशिष्यों को साथ लिये आये और चारो दिशाओं से बड़े २ राजा भांति २ की भेंट लेकर उस यज्ञ में आये और चारो वर्ण चारो आश्रम के मनुष्य उस यज्ञ में एकत्र हुये राजा बृहद्द्युम्न ने सब का सत्कार किया और अनेक प्रकार के

उत्तम २ भोजन वस्त्र रत्न सुवर्ण गौ आदि देकर सब को सन्तुष्ट किया और रैभ्य के पुत्रों ने सब यज्ञकर्म ऐसी चतुरता से कराया कि वशिष्ठ आदि मुनीश्वरों ने भी उनकी बहुत प्रशंसा की तीसरे सवन के अन्त में परावसु अपने घर को सम्हालने आया और अर्वावसु यज्ञ में रहा परावसु रात्रि के समय अपने आश्रम में पहुँचा आगे से मृगचर्म ओढ़े रैभ्यमुनि आते थे परावसु ने जाना कि कोई दुष्ट मृग मुझे मारनेआता है इसलिये पहिले मैं ही इसको मारडालूं यह विचार परावसु ने अपने पिता को मारदिया अन्धकार था और परावसु निद्रा से पीड़ित था इसलिये उसको यह धोखा हुआ मारकर समीप आया जब देखा कि यह तो मेरा पिता है तब बहुत विलाप किया और अपने पिता की सब प्रेतकृत्य किया और फिर यज्ञ में आय सब वृत्तान्त अपने छोटे भाई अर्वावसु से कहा वह भी सुन शोक से रोदन करने लगा फिर उससे परावसु ने कहा कि राजा का यज्ञ होरहा है तू इसका भार नहीं उठासक्ता और मुझ से ब्रह्महत्या होगई उसका प्रायश्चित्त करना चाहिये मैं अकेला भी यज्ञ का भार उठासक्ता हूँ और तू बालक है तुझ अकेले से यहां का काम न चलेगा इसलिये मेरी हत्या निवृत्ति के लिये तू व्रत धारणकर और मैं यज्ञ कराऊंगा अर्वावसु ने भी अपने ज्येष्ठ भ्राता की आज्ञा अङ्गीकार की और अपने बड़े भाई परावसु को यज्ञ में छोड़ आप चलागया बारह वर्षतक ब्रह्महत्या निवृत्ति का व्रत और तीर्थाटन अर्वावसुने किया बारह वर्ष के अन्त में अर्वावसु फिर यज्ञ में आया उसको देखते ही परावसु ने कहा कि हे राजन्! यह ब्रह्महत्या किये तुम्हारे यज्ञ में आया है इसको शीघ्रही बाहर निकलवाइये नहीं तो यज्ञ भ्रष्ट होजायगा यह सुनतेही राजा बृहद्द्युम्न ने अपने सेवकों को आज्ञा दी कि बहुत शीघ्र अर्वावसु को यज्ञ से बाहर निकालो तब अर्वावसु ने कहा कि मैंने ब्रह्महत्या नहीं की ब्रह्महत्या तो मेरे ज्येष्ठ भ्राता परावसु ने की है और इसके बदले मैंने बारह वर्ष पर्यन्त प्रायश्चित्त किया है यह अर्वावसु का वचन किसी ने न माना और उसको निकालदिया और सब ब्राह्मणों ने उसको धिक्कार दिया वह भी इसभांति अनादर पाय तपोवन में जाय उग्र तप करनेलगा उसने सूर्य

भगवान् की प्रसन्नता के लिये ऐसा तप किया कि थोड़ेही काल में सूर्य नारायण प्रसन्न हो प्रकट हुये और इन्द्रआदि सब देवता भी वहां आये और अर्वावसु से कहा कि हे अर्वावसु ! तू तप ब्रह्मचर्य वेद आचार शास्त्रज्ञान आदि करके श्रेष्ठ है परावसु ने तेरा निराकरण किया तोभी तू उसपर क्रोध नहीं करता परावसु ने पिता को मारा और तैंने उसके बदले प्रायश्चित्त किया इसलिये हम तुझे स्वीकार करते हैं और परावसु को त्यागते हैं फिर सूर्य आदि देवताओं ने कहा कि हे अर्वावसु! और जो चाहे सो वर मांग तब अर्वावसु बोला कि हे महाराज ! यही वर चाहता हूं कि मेरा पिता फिर जी उठे और पिता के वध का वृत्तान्त सब भूल जावे देवताओं ने यही वर अर्वावसु को दिया और कहा कि और भी वर मांग तब अर्वावसु ने कहा कि यह वर मिले कि मेरा भ्राता परावसु पिता की हत्या से छूटे यह सुन देवताओं ने कहा कि हे अर्वावसु ! ब्राह्मण तिसमें भी पिता उसको मारने से बड़ी हत्या परावसु को लगी है और पञ्चमहापातकों में और की द्वारा प्रायश्चित्त करने से पातक निवृत्त नहीं होता तिसमें ब्राह्मण पिताको मारनेवाला तो आप भी प्रायश्चित्त करे तो भी शुद्ध नहीं होसक्ता इसलिये परावसु किसी प्रकार शुद्ध नहीं होसक्ता यह देवताओं का वचन सुन फिर अर्वावसु ने प्रार्थना की कि हे महाराज ! आप अनुग्रह करके कोई उपाय बतावें जिससे मेरे भ्राता का उद्धार होय यह आप मुझ पर कृपा करें तब देवताओं ने बहुत काल विचारकर कहा कि हे अर्वावसु ! एक उपाय हम बताते हैं दक्षिण समुद्र के तीर रामसेतु में धनुष्कोटि नाम एक बड़ा तीर्थ है उसमें स्नान करतेही सब पातक महापातक आदि निवृत्त होजाते हैं और दुःस्वप्न ऋण दारिद्र्य अमङ्गल आदि का नाश होकर धन सन्तान आदि की वृद्धि होती है जे पुरुष निष्काम होकर स्नान करें वे मोक्ष पाते हैं जो धनुष्कोटि नाम को भी स्मरण करता रहे वह भी स्वर्ग और मोक्ष का अधिकारी होताहै उस तीर्थ में जा कर तेरा भ्राता स्नान करे तो उसी क्षण ब्रह्महत्या से छूटजाय यह अति गुप्त बात हम ने तुझ को बतादी है इतना कह सब देवता अपने २ धाम को गये और

अर्वावसु भी अपने भ्राता को साथ ले धनुष्कोटि पर पहुँचा वहां दोनों भ्राताओं ने संकल्पपूर्वक धनुष्कोटि में स्नान किया स्नान के अनन्तर आकाशवाणी हुई कि हे परावसु! अब तू पिता की हत्या से छूटगया यह सुन परावसु बहुत प्रसन्न हुआ और अर्वावसु को साथ ले धनुष्कोटि को प्रणाम कर और भक्ति से रामनाथ महादेव का पूजन कर निष्पाप हो अपने आश्रम को आया आश्रम में आकर देखा कि रैभ्यमुनि बैठे हैं उनको दोनों भाइयों ने प्रणाम किया रैभ्यमुनि भी अपने पुत्रों को देख बहुत प्रसन्न हुआ और परावसु को निष्पाप जान सब मुनियों ने भी ग्रहण करलिया हे मुनीश्वरो! इसप्रकार धनुष्कोटि के प्रभाव से परावसु पितृहत्या से छूटा और भी महापातक धनुष्कोटि में स्नान करतेहीं निवृत्त होते हैं जो पुरुष इस अध्याय को पढ़े अथवा श्रवण करे वह भी सब पातकों से मुक्त होजाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां द्विजपरावसुकथानकंनाम त्रयस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३३॥

चौंतीसवां अध्याय॥

एक वानर और जम्बुक की कथा सुमतिनामक एक महापापी ब्राह्मण का इतिहास॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! फिर भी हम धनुष्कोटि का प्रभाव वर्णन करते हैं पूर्वकाल में एक वानर और एक जम्बुक दोनों मित्र थे पहिले जन्म में वे दोनों मनुष्य थे तब भी उनका बड़ा स्नेह था और वानर जम्बुक हुये तब भी दोनों परस्पर स्नेह रखते और दोनों जातिस्मर थे एक दिन वह जम्बुक श्मशान के बीच किसी मृतक के शरीर को खाता था तब वानर ने कहा कि हे मित्र! तैंने पूर्वजन्म में क्या पाप किया था कि श्मशान में दुर्गन्धयुक्त मनुष्यमांस तू भक्षण कररहा है तब जम्बुक कहने लगा कि हे मित्र! मैं पूर्वजन्म में वेद शास्त्र के जाननेवाला देवशर्मा नाम ब्राह्मण था मैंने ब्राह्मण को धन देना कहकर फिर न दिया उसी पाप से मैं जम्बुक हुआ और उसी पाप से यह मनुष्यमांस खाता हूं जे दुष्ट पुरुष स्वीकार करके फिर ब्राह्मण को नहीं देते वे अवश्य जम्बुकयोनि में प्राप्त होते हैं और उनके दशजन्म के किये पुण्य उसीक्षण नष्ट होजाते हैं और

वह पाप सौ अश्वमेध करने से भी निवृत्त नहीं होता अब मैं नहीं जानता कि इस पाप से कब छूटूंगा ब्राह्मण को देना स्वीकार करके अवश्य देना चाहिये नहीं तो जम्बुकयोनि में अवश्यही जन्म लेना पड़ता इतना कह जम्बुक ने पूछा कि हे मित्र! तैंने क्या पाप किया? जिससे वानर हुआ और विना अपराध वनचर पक्षियों को मारता फिरता है तब वानर कहने लगा कि पूर्वजन्म में मैं भी वेदनाथ नाम ब्राह्मण था और मेरे पिता का नाम विश्वनाथ और माता का नाम कमला था पूर्वजन्म में भी तेरे साथ मेरी मैत्री थी यह तू भी जानता है मैंने शिवजी का इतना आराधन किया कि मैं त्रिकालज्ञ हुआ परन्तु एक दिन किसी ब्राह्मण का शाक मैंने हर लिया उसी पाप से मुझे वानर होना पड़ा इसलिये कभी ब्राह्मण की कोई वस्तु न हरनी चाहिये विष तो खानेवाले कोही मारता है और ब्राह्मण का धन समेत कुल के नाश करता है ब्राह्मण के धन को हरनेवाला पुरुष बहुत दिन कुम्भीपाक नरक में रहकर वानर होता है ब्राह्मण चाहे बालक दारिद्र्य कृपण मूर्ख चाहे जैसा हो उसका अनादर न करना चाहिये और तो मुझे सब ज्ञान है परन्तु इस पाप के निवृत्त होने का उपाय नहीं जानता तू भी जातिस्मर है परन्तु किसी प्रतिबन्ध से भूत और भविष्य तू नहीं जानता अब हे मित्र! यह दोनों नहीं जानते कि इन पापयोनियों से कब छूटेंगे इस प्रकार दोनों वार्तालाप कररहे थे इतने में वहां सिन्धुद्वीप ऋषि आ निकले जो रुद्राक्ष और विभूति से भूषित और शिवजी का नाम लेते मानो साक्षात् शिवही थे उनको देख वानर और जम्बुक ने भक्ति से प्रणाम किया और प्रार्थना की कि हे महाराज! हमको कोई ऐसा उपाय कृपा करके बतावें जिससे हम दोनों दुष्टयोनियों से छूटें आप जैसे महात्मा अनाथ, कृपण, मूर्ख, बालक, रोगी, दुःखी आदि जीवोंकी रक्षा करते हैं यह उनका दीन वचन सुन बहुत काल ध्यानकर सिन्धुद्वीपमुनि बोले कि हे शृगाल! तैंने एक सेर धान ब्राह्मणको देनेको कहकर फिर न दिये इससे तू जम्बुक हुआ और हे वानर! तैंने ब्राह्मण के घरमें शाक चोराया इसलिये सब पक्षियों को भय देनेहारी वानरयोनि में प्राप्त हुआ अब तुम्हारे उद्धार के

लिये हम उपाय बताते हैं दक्षिणसमुद्र में धनुष्कोटितीर्थ है उस तीर्थ में जाकर स्नान करो तब इस पापयोनि से मुक्त होगे पूर्वकाल में सुमति नाम ब्राह्मण ने एक किराती स्त्री अर्थात् भीलनी के संग में सुरापान किया तब धनुष्कोटि में स्नानकर शुद्ध हुआ यह सुन जम्बुक और वानर ने पूछा कि हे महाराज ! सुमति कौन था और उसने किरातकी स्त्री के संग में क्योंकर सुरापान किया यह आप वर्णन करें तब सिन्धुद्वीपमुनि कहनेलगे कि महाराष्ट्र देश में वेद और शास्त्र का जाननेहारा यज्ञदेव नाम एक ब्राह्मण था वह सदा अतिथियों का पूजन और शिवार्चन किया करता उसके सुमति नाम एक पुत्र था वह अपने माता पिता और पतिव्रता भार्या को छोड़ विटों के साथ लग उत्कलदेश को चलागया उस देश में एक युवती किराती रहती थी जो तरुण पुरुषों को अपने रूप से वश करके उनका धन हरती थी सुमति ब्राह्मण भी उसके घर गया परन्तु इसके पास धन न था इस कारण उस स्त्री ने इसका कुछ आदर न किया तब यह उदास हो चला आया परन्तु वह मन में बसगई थी इसलिये नित्य चोरी करनेलगा कुछ काल में थोड़ा धन एकत्र करके उसके पास गया और वह धन उसको दिया तब वह प्रसन्न हुई उस दिन से सुमति उसी के घर में रहनेलगा और नित्य उसके साथ भोजन करता और दोनों एकही चषक अर्थात् प्याले में मद्य पीते और रात्रि को एकत्र सोते इस प्रकार सुमति वहांहीं आसक्त होगया माता पिता और अपनी पतिव्रता पत्नी को भूलगया एक दिन वह किरातों के साथ लगकर चोरी करने निकला वे सब लाटदेश में पहुँचे रात्रि को चोरी करने के लिये एक ब्राह्मण के घर में घुसे वह ब्राह्मण जगउठा तब सुमति ने खड्ग से उसके दो टुकड़े करडाले और बहुत सा धन वहां से ले किराती के घर को चला परन्तु अतिभयंकर नीलेवस्त्र पहिने लाल जिसके केश गर्जती और भूमि को कँपाती ब्रह्महत्या उसके पीछेलगी उसके भय से सुमति सब देशों में दौड़ता फिरा परन्तु वह हत्या पीछे लगी रही तब वह अपने ग्राम में पहुँचा और पिता के पास जाकर पुकारा कि हे पितः ! मेरी रक्षा कर यह पुत्र का दीन वचन सुन पिता ने कहा कि मत डर मैं तेरी रक्षा

करता हूं तब ब्रह्महत्या बोली कि हे ब्राह्मण ! इसकी रक्षा का यत्न मत कर यह बड़ा पातकी है इसने माता पिता और पतिव्रता पत्नी का त्याग किया फिर किराती का संगकर सुरापान किया चोरी की और ब्राह्मण का वध किया इसलिये इसको मैं नहीं छोड़ती और तेरे सम्पूर्ण कुटुम्ब को भक्षण करूंगी इस पुत्र को जो तू छोड़ देगा तो तेरा कुटुम्ब बच जायगा और तुझे भी एक पुत्र के लिये सब कुटुम्ब का नाश करना उचित नहीं इसलिये तू इसको त्याग दे यह ब्रह्महत्या का वचन सुन यज्ञदेव ब्राह्मण बोला कि पुत्र का स्नेह बहुत बलवान् है इसलिये मैं इसका त्याग नहीं करसक्ता तब फिर हत्या ने कहा कि इस पतित का मोह मतकर इसके दर्शन से भी पाप लगता है इतना कह हत्या नें एक थप्पड़ सुमति के मारा कि वह रोनेलगा और हे मातः ! हे पितः ! कहकर चिल्लाने लगा तब उसके माता पिता और भार्या भी दुःख से रोदन करनेलगे उसी अवसर में शिव जी के अवतार दुर्वासामुनि वहां आ निकले तब यज्ञदेव ने उनको प्रणाम किया और बहुतसी स्तुति करके प्रार्थना की कि हे महाराज ! आप साक्षात् शिवजी का अंश हैं आपका दर्शन पापी पुरुषों को कभी नहीं होसक्ता यह मेरा पुत्र बड़ा दुराचारी है और ब्रह्महत्या इसके पीछे लगी है वह इसको मारना चाहती है अब आप कृपाकर ऐसा उपाय बतावें जिससे यह इस हत्या से छूटे यह एकही मेरा पुत्र है इसके मरजाने से मेरा वंश उच्छिन्न होजायगा और पितरों को पिण्ड देनेवाला कोई न रहेगा इसलिये आप कृपा करें यह ब्राह्मण का वचनसुन दुर्वासामुनि ने बहुत काल ध्यान कर कहा कि हे यज्ञदेव ! यह तेरा पुत्र बड़ा पातकी है इसके पातक निवृत्त करनेहारा कोई प्रायश्चित्त नहीं परन्तु हम एक उपाय बताते हैं सावधान होकर सुनो दक्षिण समुद्र में रामधनुष्कोटितीर्थ में जो तेरा पुत्र स्नान करे तो तत्क्षणही पातकों से मुक्त होजाय उस तीर्थ में स्नान करने से दुर्विनीत नाम ब्राह्मण गुरुस्त्रीगमन पातक से मुक्त हुआ वह रामचन्द्रजी का बनाया धनुष्कोटितीर्थ सब पातक हरने में समर्थ है उसी तीर्थ के स्नान करने से तेरा पुत्र शुद्ध होजायगा॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां वानरजम्बुकसुमत्यादिकथानकंनाम चतुस्त्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ३४ ॥

पैंतीसवां अध्याय ॥

दुर्विनीत नाम ब्राह्मण की कथा धनुष्कोटितीर्थ का माहात्म्य ॥

यज्ञदेव ने पूछा कि हे महाराज! दुर्विनीत कौन था और उसने गुरुस्त्रीगमन क्योंकर किया और धनुष्कोटि में स्नान कर उस महापातक से क्योंकर छूटा यह आप कृपाकर मुझ से कथन करें तब दुर्वासामुनि कहने लगे कि हे यज्ञदेव! पाण्डयदेश में बहुत शास्त्रों का जाननेहारा इध्मवाहु नाम एक ब्राह्मण था और उसकी रुचि नाम भार्या थी उसके दुर्विनीत नाम एक पुत्र हुआ वह बालकही था तब इध्मवाहु मृतक होगया दुर्विनीत ने अपने पिता का और्ध्वदैहिक कृत्य किया कुछ दिन तो अपने घर में रहा पीछे बारह वर्ष का दुर्भिक्ष पड़ा तब अपनी माता समेत देशान्तर को निकला और गोकर्ण में पहुँचा वहां सुभिक्ष था इस कारण वहांही दोनों रहनेलगे कुछ काल में दुर्विनीत तरुण होगया एक दिन ऐसा काम के वश हुआ कि बलात्कार से अपनी माता को पकड़ उसके साथ मैथुन किया और वह पुकारती रही परन्तु यह काम करके अन्धा होरहा था इस लिये कुछ न सुना और यह महापातक कर शोचनेलगा कि मैं ने बड़ा घोर पातक किया अब मेरा उद्धार क्योंकर होगा मैंने अपनी जननी से मैथुन किया यह शोचकर रोदन करनेलगा बहुत काल दुःख से रोदन कर अपनी निन्दा करता हुआ मुनियों की समाज में गया और मुनियों से प्रार्थना की कि हे महाराज! मुझ को गुरुस्त्रीगमन के पातक का प्रायश्चित्त बताइये जो शरीर त्यागने से मेरी शुद्धता होय तो मैं करूं अथवा और कोई प्रायश्चित्त आप कहें तो वह करूं यह उसका वचन सुन कोई मुनि तो मौन होगये कि इसके साथ वार्ता करने से पातक लगता है और कोई मुनि उससे कहनेलगे कि रे पातकी! तैंने मातृगमन किया है इसलिये हमारे सम्मुख मत खड़ा हो जल्दी चलाजा उन सब मुनियों को निवारण कर परम दयालु श्रीवेदव्यासजी बोले कि हे ब्राह्मणपुत्र! तू अपनी माता सहित धनुष्कोटितीर्थ पर जा और जितेन्द्रिय जितक्रोध और निराहार हो कर मकर के सूर्य में एकमासपर्यन्त नित्य स्नान करो तब तुम दोनों

निष्पाप होजावोगे ऐसा कोई पाप नहीं जो धनुष्कोटि में स्नान करने से निवृत्त न होय श्रुति स्मृति और पुराणों में धनुष्कोटि की बड़ी प्रशंसा लिखी है वह तीर्थ महापातक निवृत्त करने में समर्थ है हे ब्राह्मणपुत्र! हमारे वाक्य को वेद के तुल्य मान और शीघ्रही धनुष्कोटितीर्थ पर जा करोड़ों महापातक भी उस तीर्थ में स्नान करने से निवृत्त होते हैं यह व्यासजी का वचन सुन उनको प्रणामकर अपनी माता को संग ले दुर्विनीत धनुष्कोटि पर पहुँचा वहां जाय निराहार और जितेन्द्रिय रहकर दोनों माता पुत्र स्नान करनेलगे संकल्पपूर्वक एक महीने पर्यन्त स्नान किया और नित्य त्रिकाल रामनाथ का पूजन किया इस विधि मकर के सूर्य में स्नान कर महीने के अन्त में पारण किया और दोनों फिर व्यास जी के पास आये और प्रणामकर व्यासजी से प्रार्थना की कि हे महाराज! आपकी आज्ञानुसार माघमास में निराहार रहकर हमने धनुष्कोटि में स्नान किया व नित्य रामनाथ का पूजन किया अब जो आज्ञा आप करें वह कीजाय यह उसका वचनसुन व्यासजी बोले कि हे दुर्विनीत! अब तुम दोनों निष्पाप होगये इसमें कुछ सन्देह मत करो अब तुम्हारे बान्धव और ब्राह्मण तुमको ग्रहण करलेंगे हे दुर्विनीत! हमारे प्रसादसे तू शुद्ध हुआ अब जाकर विवाहकर और गृहस्थाश्रम में रहकर धर्म का सेवनकर जीव- हिंसा मतकर और भक्ति से सज्जनों का सेवनकर सन्ध्यावन्दन आदि कर्मों को कभी मत छोड़ जितेन्द्रिय हो नित्य शिव और विष्णु का पूजनकर द्वेष मतकर और किसीकी निन्दा करने में प्रवृत्त मत हो दूसरे का ऐश्वर्य देख मन में सन्ताप मतकर परस्त्री को माता के समान समझ पढ़ेहुये वेदों को मत भूल अतिथियों का अनादर मतकर पितृदिन में श्राद्धकर किसी का पैशुन्य अर्थात् चुगली स्वप्न में भी मत कर इतिहास, पुराण, धर्मशास्त्र, वेदान्त, वेद, वेदाङ्ग आदि नित्य देखतारह शिव और विष्णु के नाम सदा उच्चारण करतारह जाबाल्युपनिषद् के मन्त्रों से भस्मोद्धूलन और त्रिपुण्ड्रकर रुद्राक्ष धारणकर शौच और आचार में तत्पर हो तुलसी और बिल्वपत्र करके त्रिकाल दो काल अथवा एकही काल नित्य नारायण

और सदाशिव का अर्चनकर और तुलसीदल करके युक्त और चरणोदकसे प्रोक्षित नैवेद्य सदा भोजन कर अन्न की शुद्धि के लिये बलिवैश्वदेव कर ब्रह्मचारी भिक्षुक वृद्ध रोगी आदि जो घर में आवे उसको भोजन आदि से सन्तुष्ट कर नित्य माता की शुश्रूषाकर पञ्चाक्षर षडक्षर अथवा अष्टाक्षर मन्त्र का नित्य जपकर इस प्रकार और भी श्रुतिस्मृतिप्रोक्त धर्मों का सेवनकर इस आचरण से देहान्त होनेपर अवश्यही मुक्ति पावेगा यह व्यासजी की आज्ञा पाय अपने घर गया और बहुत काल गृहस्थधर्म का सेवनकर अन्त में मुक्त हुआ और उसकी माता ने भी धनुष्कोटि के प्रभाव से सद्गति पाई इतनी कथा सुनाय दुर्वासा मुनि ने कहा कि हे यज्ञदेव! यह दुर्विनीत की कथा हमने तुझको सुनाई अब तू भी इस अपने पुत्र को साथ ले धनुष्कोटि को जा सिन्धुद्वीपऋषि कहते हैं कि हे जम्बुक! हे वानर! दुर्वासामुनि की आज्ञा पाय यज्ञदेव अपने पुत्र को धनुष्कोटितीर्थ पर लेगया वहां दोनों छहमहीने रहे यज्ञदेव नित्य अपने पुत्र को धनुष्कोटि में स्नान कराता छहमहीने के अन्त में आकाशवाणी हुई कि हे यज्ञदेव ! तेरे पुत्र की ब्रह्महत्या निवृत्त हुई और चोरी, सुरापान, किराती संग आदि सब पापों से छूटगया इसमें तू संशय मत कर यह आकाशवाणी सुन यज्ञदेव बहुत प्रसन्न हुआ और रामनाथ का पूजनकर धनुष्कोटि की प्रशंसा करता हुआ अपने पुत्र को साथ ले अपने घर आया और सुख से रहनेलगा इतना कह सिन्धुद्वीप ऋषिने जम्बुक और वानर से कहा कि तुम दोनों भी धनुष्कोटि में स्नान करो तब निष्पाप होगे और कोई उपाय तुम्हारे निष्पाप होने का नहीं है सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! सिन्धुद्वीपऋषि से यह उपदेश पाय जम्बुक और वानर किसी प्रकार धनुष्कोटितीर्थ पर पहुँचे वहां जाय दोनों ने स्नान किया स्नान करते ही दिव्यदेह होगये और विमान में बैठ उत्तम भूषण वस्त्रआदि से शोभित हो स्वर्ग को गये हे मुनीश्वरो ! धनुष्कोटि के प्रभाव से इसप्रकार वानर और जम्बुक सद्गति को प्राप्त हुये इस अध्याय को जो पढ़े अथवा सुने वह धनुष्कोटितीर्थस्नान के फल को पाय उस गति को पाता है जो योगियों को भी दुर्लभ है ॥

छत्तीसवां अध्याय॥

दुराचार नाम ब्राह्मण की कथा महालयश्राद्ध के माहात्म्य का विस्तार से वर्णन॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! धनुष्कोटि का माहात्म्य कहांतक वर्णन करें जहां स्नानकर एक बड़ापातकी दुराचार नाम ब्राह्मण पापसे मुक्त हुआ यह सुन मुनियों ने पूछा कि हे सूतजी! दुराचार कौन था और उसने क्या पाप किया और फिर धनुष्कोटि में स्नानकर क्योंकर निष्पाप हुआ? यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! दुराचार नाम एक ब्राह्मण बड़ाक्रूर और पापी गोदावरी नदी के तटपर रहता था वह सदा महापातकी मनुष्यों का संग रखता इससे वह भी महापातकी होगया और ब्राह्मणपना जातारहा जो ब्राह्मण एक दिन महापातकी का संग करे उस का ब्राह्मणत्व चतुर्थांश जाता रहता है दो दिन महापातकी के साथ शयन भोजन सहवास आदि करने से आधा ब्राह्मणत्व रहजाता है तीन दिन के संसर्ग से तीन भाग ब्राह्मणत्व नष्ट होजाता है और चौथे दिन भी महापातकी का संसर्ग करे तो सम्पूर्ण ब्राह्मणत्व नष्ट होजाता है चार दिन के अनन्तर भी उनका संग करता रहे तो वह भी महापातकी होजाता है महापातकी मनुष्यों के संग से दुराचार का सब ब्राह्मणपना जातारहा और वह भी महापातकी होगया तब उसको एक भयंकर वेताल ने आक्रान्त करलिया वह भी वेतालाविष्ट हुआ देश २ और वन २ में भटकने लगा दैवयोग से कुछ काल में धनुष्कोटितीर्थ में कूद पड़ा तीर्थ का जल स्पर्श होतेही वेताल ने उसको छोड़ दिया दुराचार भी तीर्थ से बाहर निकल विचार करनेलगा कि वह कौन देश है समुद्र का तीर देख पड़ता है मैं गौतमी नदी के तटपर रहनेवाला यहां क्योंकर आया इतने में वहां दत्तात्रेयमुनि देखे दुराचार उनके चरणों पर गिरा और प्रार्थना करनेलगा कि हे महाराज! मैं गोदावरीतटनिवासी दुराचार नाम ब्राह्मण हूं मैं इस देश में क्योंकर आया और यह कौन देश है आप कृपाकर मेरा संशय निवृत्त करें यह उसका वचन सुन क्षणमात्र विचार कर परमदयालु दत्तात्रेय

मुनि बोले कि हे दुराचार ! तैंने महापातकी मनुष्यों का संसर्ग किया इससे तेरा ब्राह्मणत्व नष्ट होगया तब तुझे वेताल ने ग्रहण किया वही तुझे यहां ले आया और धनुष्कोटितीर्थ में भी तुझे उसी ने डुबाना चाहा परन्तु तीर्थ का जल स्पर्श होतेही तू निष्पाप होगया इसलिये उस वेताल ने तुझे छोड़ दिया धनुष्कोटितीर्थ में स्नान करने से सब पातक निवृत्त होजाते हैं इसी से तेरा भी संसर्गदोष निवृत्त हुआ और वेताल ने तुझे छोड़ा जिस वेताल ने तुझे ग्रहण किया वह भी पूर्वजन्म में ब्राह्मण था उसने महालयपक्ष में पितरों का श्राद्ध नहीं किया इसलिये पितरों के शाप से वह वेताल हुआ वह भी धनुष्कोटि का दर्शन करतेही वेतालत्व से छूट विष्णुलोक को गया जो पुरुष आश्विनकृष्णपक्ष में श्राद्ध नहीं करते वे लोभी पितरों के शाप से वेताल होते हैं और जो पुरुष उस पक्ष में पितरों के निमित्त ब्राह्मणों को उत्तम २ भोजन देते हैं वे कभी दुर्गति को नहीं प्राप्त होते सामर्थ्य के अनुसार एक दो तीन अथवा बहुत ब्राह्मणों को अवश्यही भोजन कराना चाहिये पितरों का श्राद्ध इसने नहीं किया इससे वेताल हुआ और तुझे महापातकी जान इसने ग्रहण किया भाद्रपद से लेकर वृश्चिकपर्यन्त महालय का काल तत्त्वदर्शी मुनीश्वरों ने कहा है उस में भी आश्विनमास और आश्विनमास में कृष्णपक्ष उत्तम है आश्विन कृष्णपक्ष प्रतिपदा को जो मनुष्य भक्ति से श्राद्ध करे उसके ऊपर अग्नि देवता प्रसन्न होता है और श्राद्ध करनेहारा पुरुष अग्निलोक में जाकर अग्नि के समीप सुखपूर्वक निवास करता है और अग्नि के अनुग्रह से प्रतिपदा को श्राद्ध करनेहारा सब ऐश्वर्य पाता है जो प्रतिपदा को महालय श्राद्ध न करे उसके गृह क्षेत्र और ऐश्वर्य आदि को अग्नि दग्ध करता है प्रतिपदा के दिन एक वेदवेत्ता ब्राह्मण को भोजन करावे तो दश दश कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं द्वितीया के दिन जो महालयश्राद्ध करे वह शिवजी के अनुग्रह से बड़ी सम्पत्ति पाता है और शिवजी प्रसन्न होकर उसको कैलास में वास देते हैं द्वितीया के दिन जो श्राद्ध न करे उसके ब्रह्मवर्चस को शिवजी कोप करके नाश करते हैं और वह पुरुष

रौरव कालसूत्र आदि नरकों में निवास करता है द्वितीया को एक ब्राह्मण को भी भोजन करावे तो बीस कल्प पर्यन्त उसके पितर तृप्त रहते हैं और पितरों के अनुग्रह से सन्तान की वृद्धि होती है तृतीया के दिन श्राद्ध करने से कुबेर तृप्त होता है और महापद्म आदि निधि देता है जो तृतीया को श्राद्ध न करे वह दारिद्र्य और दुःखी रहता है और तृतीया को श्राद्ध करने से तीस हज़ार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं चतुर्थी को श्राद्ध करने से गणेशजी प्रसन्न होते हैं और सब विघ्न निवृत्त करते हैं जो चतुर्थी को श्राद्ध न करे उसके सब कार्यों में गणेशजी विघ्न करते हैं और वह पुरुष चण्ड कोलाहल नाम नरक में गिरता है चतुर्थी को श्राद्ध करने से चालीस हज़ार कल्पपर्यन्त पितर तृप्त रहते हैं और श्राद्ध करनेहारे को बहुत पुत्र देते हैं पञ्चमी को श्राद्ध करने से लक्ष्मी प्रसन्न होती है और बहुत सम्पत्ति देती है दिन २ उस पुरुष की कीर्ति बढ़ती है जो पुरुष पञ्चमी को श्राद्ध न करे उसके घर को लक्ष्मी त्यागदेती है और अलक्ष्मी का निवास होता है पञ्चमी को श्राद्ध करने से पचास हज़ार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और उसके वंश का विच्छेद नहीं होता और पार्वती भी प्रसन्न होती हैं षष्ठी को श्राद्ध करने से स्वामिकार्त्तिकेय प्रसन्न होते हैं और उसके पुत्र पौत्रों को ग्रह और बालग्रह कभी पीड़ा नहीं देते और जो श्राद्ध न करे उसके बालकों को जन्म लेतेही पूतना आदि ग्रह हरलेते हैं और वह पुरुष वह्निज्वालाप्रवेशनामक नरक में गिरता है षष्ठी को श्राद्ध करने से साठ हज़ार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और पुत्र तथा सम्पत्ति को देते हैं सप्तमी को श्राद्ध करने से सुवर्णहस्त श्रीसूर्यभगवान् प्रसन्न होकर अपने हाथ से सुवर्ण देते हैं और आरोग्य भी देते हैं जो पुरुष सप्तमी को श्राद्ध न करे वह अनेक रोगों करके पीड़ित रहता है और तीक्ष्णधारास्त्र-शय्या नाम नरक में गिरता है और सप्तमी को श्राद्ध करने से सत्तर हज़ार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान भी देते हैं अष्टमी को श्राद्ध करने से मृत्युंजय सदाशिव प्रसन्न होते हैं शिवजी के प्रसन्न होने से कोई पदार्थ भी दुर्लभ नहीं मुक्ति तो हाथ परही रक्खी है जो अष्टमी को

श्राद्ध न करे उसका कोई मनोरथ सिद्ध नहीं होता और वह संसारसागर में डूबाही रहता है कभी मुक्ति नहीं पाता और वैतरणी में गिरता है अष्टमी को श्राद्ध करने से अस्सी हजार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान देते हैं और सब विघ्न निवृत्त करते हैं नवमी को श्राद्ध करने से दुर्गाभगवती प्रसन्न होती हैं और क्षय अपस्मार कुष्ठ भूत प्रेत पिशाच आदि को निवृत्त करती हैं जो पुरुष नवमी को श्राद्ध न करे वह अपस्मार आदि रोग और ब्रह्मराक्षस अभिचार कृत्या आदि करके पीड़ित होता है उस दिन श्राद्ध करने से नब्बे कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान देते हैं दशमी को श्राद्ध करने से चन्द्रमा प्रसन्न होते हैं और उसकी खेती अच्छी लगती है और दशमी को श्राद्ध न करने से खेती निष्फल होती है दशमी को श्राद्ध करने से सौ हजार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान देते हैं एकादशी को श्राद्ध करने से सब लोक का संहार करनेहारे रुद्रभगवान् प्रसन्न होते हैं रुद्रभगवान् के प्रसन्न होने से सब शत्रुवों को जीतता है ब्रह्महत्या आदि पातक निवृत्त होते हैं और अग्निष्टोम आदि यज्ञों का फल प्राप्त होता है और जो पुरुष श्राद्ध न करे वह शत्रुवों करके पीड़ित रहता है और उसके सब यज्ञ निष्फल होते हैं एकादशी को श्राद्ध करने से दोसौ हजार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान देते हैं द्वादशी को श्राद्ध करने से विष्णुभगवान् प्रसन्न होते हैं विष्णुभगवान् के प्रसन्न होने से चराचर जगत् सन्तुष्ट होता है दिन २ सम्पत्ति बढ़ती है भगवान् की कौमोदकी गदा उसके सब रोगों का नाश करती है सुदर्शनचक्र शत्रुवों का संहार करता है और पाञ्चजन्य शंख अपनी ध्वनि से भूत प्रेत राक्षस आदि के भय को निवृत्त करताहै इसप्रकार सब पीड़ाको विष्णुभगवान् हरते हैं जो द्वादशीको श्राद्ध न करे उसकी सम्पत्ति नष्ट होजाती है और अपस्मार आदि रोग भूत, प्रेत, राक्षस, शत्रु आदि पीड़ा देते हैं और अस्थिभेदन नाम नरक में गिरता है द्वादशी को श्राद्ध करने से छहसौ हजार कल्पतक पितर तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान देते हैं त्रयोदशी को श्राद्ध करने से कामदेव प्रसन्न

होता है उत्तम २ स्त्री वस्त्र भूषण मालाआदि प्राप्त होती हैं और जन्मभर सुखी रहता है जो त्रयोदशी को श्राद्ध न करे वह कोई भोग नहीं पाता और अङ्गारशय्या नाम नरक में गिरता है जो त्रयोदशी को महालयश्राद्ध करे उसके पितर हज़ार कल्पतक तृप्त रहते हैं और अविच्छिन्न सन्तान देते हैं चतुर्दशी को श्राद्ध करने से शिवजी प्रसन्न होते हैं और सब मनोरथ सिद्ध करते हैं और ब्रह्महत्या सुरापान सुवर्णस्तेय आदि पातक तत्क्षण निवृत्त होजाते हैं और अश्वमेध पौण्डरीक आदि यज्ञों का फल प्राप्त होता है जो पुरुष चतुर्दशीको महालय न करे वह करोड़ों वर्ष संसाररूप अन्धकूप में पड़ा रहता है कभी उसकी निष्कृति नहीं होती और महापातक विना कियेही महापातकों से लिप्त होता है और उसके यज्ञ आदि सब कर्म निष्फल होते हैं जो पुरुष चतुर्दशी को भक्ति से महालयश्राद्ध करे उसके पितर नरक में होयँ तो स्वर्ग को जायँ और करोड़ों कल्पतक तृप्त रहें और अविच्छिन्न सन्तान देवें अमावास्या को श्राद्ध करे तो अनन्त कालतक उसके पितर तृप्त रहें अमृतपान से जैसी तृप्ति देवताओं को होती है वैसी ही तृप्ति अमावास्या को श्राद्ध करने से पितरों को होती है यह तिथि महापुण्याहै और देवता तथा पितरों की प्रिया है और शिवजी को भी बहुत प्रिया है अमावास्या को श्राद्ध करने से शिवजी प्रसन्न होते हैं ब्रह्महत्या आदि पातक निवृत्त होजाते हैं और सब कर्म सफल होते हैं और श्राद्ध करनेहारा पुरुष मोक्ष को प्राप्त होता है जो पुरुष अमावास्या को श्राद्ध न करे उसके पितर ब्रह्मलोक में होयँ तो भी नरक को चलेजाते हैं और वंश भी विच्छिन्न होजाता है यह बड़ा अनर्थ है कि महालय की अमावास्या को श्राद्ध न करे और ब्राह्मणों को भोजन न करावे आश्विन की अमावास्या को पितर नृत्य करते हैं कि आज हमारे पुत्र ब्राह्मण भोजन करावेंगे जिस से हम नरकक्लेश से छूट स्वर्ग को जायँगे आश्विनकृष्णपक्ष में पितरों की तृप्ति के लिये नित्यही ब्राह्मण भोजन करावे उसके मातृकुल और पितृकुल के पितर कई कल्पपर्यन्त अमृत पान करके तृप्त रहते हैं सप्तमी से लेकर अमावास्या पर्यन्त नित्य तीन २ ब्राह्मणों को भोजन करावे द्वादशी

से अमावास्या पर्यन्त तो अवश्यही ब्राह्मणभोजन करावे जो ब्राह्मणभोजन न करावे उसका ऐश्वर्य भङ्ग होजाताहै और वह महादारिद्र्यको प्राप्त होता है इसलिये धन का लोभ छोड़ अनेक प्रकार के भोजन वेदवेत्ता ब्राह्मणों को करावे और उनको सन्तुष्ट करे ब्राह्मणों के तृप्त होने से ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र आदि देवता और अग्निष्वात्ता आदि पितर तृप्त होते हैं और तीनों लोक तृप्त होते हैं पार्वणविधान से महालयश्राद्ध करना चाहिये और यथाशक्ति दक्षिणा देनी चाहिये दक्षिणा में वित्तशाठ्य न करे दक्षिणा से यज्ञ सफल होता है विधवा और अपुत्रा स्त्री भी अपने पति के उद्देश्य से महालयश्राद्ध में ब्राह्मण भोजन करावे नहीं तो धर्म की हानि होती है और वह स्त्री नरक को जाती है आश्विनमास में जो पुरुष महालयश्राद्ध नहीं करते उनका वंश उच्छिन्न होजाता है और ब्रह्महत्या को वे पुरुष प्राप्त होते हैं और जो पुरुष भक्ति से श्राद्ध करते हैं उनका वंश कभी उच्छिन्न नहीं होता और सम्पत्ति भी स्थिर रहती है मह नाम कल्याण का है और आलय स्थान को कहते हैं कल्याण का स्थान होने से महालय कहाता है इससे कल्याणप्राप्ति के लिये महालयश्राद्ध अवश्यही करना चाहिये महालयश्राद्ध न करे तो अमङ्गल होता है जो माता पिता की क्षयाहश्राद्ध न करे तो भी महालयश्राद्ध तो अवश्यही करे कभी न भूले जो महालयश्राद्ध करने की सामर्थ्य न होय तो याचना करके भी महालयश्राद्ध करे परन्तु उत्तम ब्राह्मणों से धन धान्य लेवे पतितों से कभी याचना न करे ब्राह्मण से धन न मिले तो क्षत्रिय से क्षत्रियसे भी धन न मिले तो वैश्य से याचना करे और वैश्य से भी नहीं प्राप्त होय तो पितरों की तृप्ति के लिये गोग्रास देवे और गोग्रास देने की भी सामर्थ्य न होय तो जङ्गल में जाय ऊंचे स्वर से रोदन करे और आंसू डालता हुआ दोनों हाथों से अपने पेट को पीटकर यह कहे कि हे पितरो ! मैं निर्लज्ज कृपण दरिद्री और क्रूरकर्म करनेहारा हूं महालयश्राद्ध करने की मेरी सामर्थ्य नहीं सम्पूर्ण पृथ्वी पर याचना करने से भी मुझे कुछ न मिला इसलिये तुम्हारा महालयश्राद्ध मैं नहीं करसक्ता आप सब मुझपर क्षमा करें ये वाक्य ऊंचे

स्वर से रोदन करता हुआ निर्जन वन में कहे उसका रोदन सुनतेही पितर तृप्त होजाते हैं जिस प्रकार अमृतपान से देवता तृप्त होयँ महालय श्राद्ध में ब्राह्मण भोजन कराने से जो तृप्ति पितरों को होती है वही दरिद्री पुरुष के गोग्रास और अरण्यरोदन से भी होती है महालयपक्ष में सूतक आदि कोई विघ्न होजाय तो सूतकान्त में वृश्चिक के सूर्यपर्यन्त भी श्राद्ध करे महालयश्राद्ध में नव ब्राह्मणों को निमन्त्रण देवे पिता १ पितामह २ प्रपितामह ३॥ मातामह १ प्रमातामह २ वृद्धप्रमातामह ३॥ इनके उद्देश्य से एक एक ब्राह्मणों को विश्वेदेवों के उद्देश्य से दो ब्राह्मणों को और विष्णुभगवान् के उद्देश्य से एक ब्राह्मण को निमन्त्रण देवे इसप्रकार नव ब्राह्मणों को वरै अथवा पिता आदि के निमित्त एक ब्राह्मण मातामह आदि के उद्देश्य से एक ब्राह्मण विश्वेदेवों के निमित्त एक और विष्णु भगवान् के उद्देश्य से एक ब्राह्मण वरै इस प्रकार चारही ब्राह्मणों को वरै परन्तु ब्राह्मण वेदवेत्ता कुलीन और सदाचार होने चाहियें दुःशील ब्राह्मणों को वरनेवाला श्राद्ध का घातक होता है जो पुरुष आश्विनकृष्णपक्ष में श्रद्धा से महालयश्राद्ध करे वह सब तीर्थों के स्नान का फल अग्निष्टोम आदि यज्ञ करने का फल तुलापुरुष आदि महादान करने का फल चान्द्रायण आदि व्रत करने का फल सांग चारो वेदों के पारायण का फल गायत्री आदि महामन्त्रों के जप का फल और इतिहास पुराण आदि के श्रवण का फल पाता है महालयश्राद्ध के तुल्य कोई पुण्यकर्म नहीं है महालयश्राद्ध करने से विष्णुलोक ब्रह्मलोक और शिवलोक की प्राप्ति होती है महालयश्राद्ध नित्य है और काम्य भी है इसीसे उसके न करने से प्रत्यवाय होता है और करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं महालय श्राद्ध करने से भूत, वेताल, अपस्मार, ग्रह, शाकिनी, डाकिनी, राक्षस, पिशाच, वेताल और भी अनेक भूत तत्क्षण नाश को प्राप्त होते हैं और बहुत सम्पत्ति मिलती है महालयश्राद्ध करने से राजादशरथ ने रामचन्द्र आदि चार पुत्र पाये और उत्तम कीर्ति भी पाई ययाति राजा ने भी महालयश्राद्ध के प्रभाव से यदु आदि उत्तम २ पुत्र और स्वर्ग में वास पाया

दुष्यन्त राजा ने महालयश्राद्ध कर भरतनामक पुत्र पाया राजा नल महालयश्राद्ध के प्रभाव से बड़ी विपत्ति से छूट फिर राज्य को प्राप्त हुआ और अपने शत्रु कलियुग और पुष्कर का निग्रह किया और इन्द्रसेन नामक उत्तम पुत्र पाया हरिश्चन्द्र राजा भी महालयविधान से विश्वामित्र के दिये हुये घोर दुःख से तरा और फिर भी अपनी भार्या चन्द्रवती और पुत्र रोहिताश्व पाये और अठारह द्वीप का प्रभु हुआ दण्डकारण्य में महालयश्राद्ध कर रामचन्द्रजी ने रावण को मारा और सीता पाई राजा युधिष्ठिर ने महालयश्राद्ध के प्रभाव से सब शत्रु मारे वशिष्ठ, अत्रि, भृगु, कुत्स, गौतम, अङ्गिरा, कश्यप, भरद्वाज, विश्वामित्र, अगस्त्य, पराशर, मार्कण्डेय आदि मुनि महालयश्राद्ध करने से अणिमा आदि आठ सिद्धियों को प्राप्त हो जीवन्मुक्त हुये इसलिये कल्याण की इच्छावाले पुरुषों को अवश्यही महालयश्राद्ध करना चाहिये जो महालयश्राद्ध न करे उसको भूत वेताल आदि से भय होता है इतना कह दत्तात्रेयजी बोले कि हे दुराचार ! कुशस्थल नाम ग्राम में वेदनिधि ब्राह्मण था उसने महालयश्राद्ध न किया इसलिये पितरों के शाप से वेताल हुआ वही वेताल तेरे शरीर में आविष्ट हुआ था हे दुराचार ! महालयश्राद्ध कर और ब्राह्मणों को षट्रसभोजन कराये तो तू सदा सुखी रहेगा और कभी दरिद्री न होगा और आज से कभी महापातकी पुरुष का संग मत करना एक बार करने से तैंने बड़ा दुःख भोगा अब तू हमारी आज्ञा से अपने देश को जा यह दत्तात्रेय मुनि की आज्ञा पाय दुराचार प्रसन्न हो अपने देश को गया और अपने घर में जाय गृहस्थाश्रम के धर्म सेवन करनेलगा फिर उसने कभी महापातकी का संसर्ग नहीं किया और रामचन्द्र के धनुष्कोटि में स्नान करने के प्रभाव से अन्त में मुक्त हुआ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! यह दुराचार के मुक्त होने का वृत्तान्त हमने वर्णन किया धनुष्कोटि सब पातक हरने में समर्थ है जहां स्नान करने से दुराचार मुक्त हुआ धनुष्कोटि के प्रभाव को कौन वर्णन करसक्ता है जिन पापों का प्रायश्चित्त नहीं है और किसी प्रकार से भी जे महापातक निवृत्त नहीं

होसके वे सब धनुष्कोटि में स्नान करतेही विलाय जाते हैं शूद्र करके स्थापित शिवलिङ्ग और विष्णुमूर्ति को जो प्रणाम करे उस पाप का कहीं प्रायश्चित्त नहीं लिखा धनुष्कोटि में स्नान करने से वह पाप भी निवृत्त होजाताहै ब्राह्मण का निन्दक, विश्वासघाती, कृतघ्न, भ्रातृस्त्रीगामी, शूद्रान्न-भोजी, वेदनिन्दक, कन्याविक्रयी, घोड़े गो देवमूर्ति धर्म तीर्थ फल आदि बेचनेहारे, मातृपितृद्रोही, संन्यासियों से द्रोह करनेहारे, शिव, विष्णु, गुरु, ब्राह्मण, यती आदि के निन्दक और सत्कथामें दूषण लगानेहारे मनुष्यों के शुद्ध होने के लिये कोई प्रायश्चित्त नहीं कहा परन्तु वे भी धनुष्कोटि में स्नान करने से शुद्ध होजाते हैं हे मुनीश्वरो! यह धनुष्कोटि का वैभव हमने वर्णन किया जिसके श्रवण करने से मनुष्य मुक्त होजाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां द्विजदुराचारकथानकंनाम षट्त्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३६॥

सैंतीसवां अध्याय॥

क्षीरकुण्ड का माहात्म्य और मुद्गलमुनि की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! चक्रतीर्थ से लेकर धनुष्कोटि पर्यन्त चौबीस तीर्थों का हमने माहात्म्य वर्णन किया अब आप क्या श्रवण किया चाहते हैं यह सूतजी का वचन सुन नैमिषारण्यवासी शौनक आदि मुनि बोले कि हे सूतजी! आपने पहिले कहा था कि क्षीरकुण्ड के समीप चक्रतीर्थ है सो चक्रतीर्थ का माहात्म्य तो श्रवण किया अब आप क्षीरकुण्ड का माहात्म्य विस्तार से वर्णन करें और क्षीरकुण्ड के नाम का कारण भी कहें यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! जो आपने पूछा उसका हम वर्णन करते हैं आप श्रद्धा से श्रवण करें देवीपत्तन से पश्चिमदिशा में थोड़ी दूरपर फुलग्राम नाम पुण्यक्षेत्र है जहां से रामचन्द्रजी ने सेतुका आरम्भ किया उसी स्थान में क्षीरकुण्ड है जिस के ध्यान करने से दर्शन से और स्पर्श से मनुष्य के पातक निवृत्त होते हैं पूर्वकाल में नारायण की प्रीति के लिये मुद्गलमुनि ने फुलग्राम में यज्ञ किया तब प्रसन्न हो विष्णुभगवान् प्रकट हुये कि नीलमेघ के समान

जिनका वर्ण पीताम्बर पहिने शंख, चक्र, गदा, पद्म धारे कौस्तुभमणि करके शोभित भक्तों को आनन्द देनेहारे और वामाङ्ग में लक्ष्मी करके शोभित थे उनको देख भक्ति से मुद्गलमुनि स्तुति करनेलगे॥

मुद्गल उवाच॥ प्रथमं जगतः स्रष्ट्रे पालकाय ततः परम्॥ संहर्त्रे च ततः पश्चान्नमो नारायणाय ते॥ १॥ नमश्शङ्कर-रूपाय कमठाय चिदात्मने॥ नमो वराहवपुषे नमः पश्चा-स्यरूपिणे॥ २॥ वामनाय नमस्तुभ्यं जमदग्निसुताय ते॥ राघवाय नमस्तुभ्यं बलभद्राय ते नमः॥ ३॥ कृष्णाय कल्कये तुभ्यं नमो विज्ञानरूपिणे॥ रक्ष मां करुणा-सिन्धो नारायण जगत्पते॥ ४॥ निर्लज्जं कृपणं क्रूरं पिशुनं दाम्भिकं शठम्॥ परदारपरद्रव्यपरक्षेत्रैकलोलुपम्॥ असूयाविष्टमनसं मां रक्ष कृपया हरे॥ ५॥

यह मुद्गलमुनि के मुख से स्तुति सुन प्रसन्न हो भगवान् कहनेलगे कि हे मुद्गल! हम तेरी भक्ति स्तुति से प्रसन्न होकर यज्ञभाग ग्रहण करने को साक्षात् आये हैं यह भगवान् का वचन सुन प्रसन्न हो मुद्गलमुनि ने प्रार्थना की कि हे महाराज! आज मेरा जन्म, तप, वंश और शरीर सफल हुआ जो आप मेरे यज्ञ में हवि ग्रहण करने के लिये साक्षात् आये जिनको योगी पुरुष ध्यान से देखते हैं उनका मैं साक्षात् दर्शन कररहाहूं इसप्रकार प्रार्थनाकर मुद्गलमुनि ने पाद्य, अर्घ्य, आचमन, आसन, चन्दन, पुष्प आदि से भगवान् का पूजनकर पुरोडाश आदि हवि उनको अर्पण किया भगवान् ने भी उस हवि को अपने हाथ से ग्रहण कर भक्षण किया भगवान् के हवि भक्षण करने से अग्नि सहित सब देवता, ब्राह्मण, ऋ-त्विक्, यजमान और सम्पूर्ण चराचर जगत् तृप्त होगये भगवान् ने कहा कि हे मुद्गल! हम प्रसन्न हैं वर मांग तब मुद्गल ने प्रार्थना की कि हे महा-राज! आपने मेरे यज्ञ में हवि ग्रहण किया इसी से मैं कृतार्थ हूं तो भी यह चाहता हूं कि आपके चरणारविन्द में निष्कपट और निश्चल मेरी भक्ति

होनी चाहिये और यह भी मेरी इच्छा है कि सायंकाल और प्रातःकाल गौ के दुग्ध से आपकी प्रीति के लिये हवन किया करूं वेद में दोनों काल दुग्ध करके हवन करना लिखा है और मुझसरीखे निर्धन तपस्वी के पास गौ कहां से आवे यह मुद्गल का वचन सुन भक्तवत्सल श्रीविष्णुभगवान् ने विश्वकर्मा को बुलाकर एक उत्तम सरोवर बनवाया और स्फटिक आदि उत्तम पाषाणों का प्राकार उसके चारो ओर बनवाया और कामधेनु को बुलाकर भगवान् ने आज्ञा दी कि हे सुरभि ! यह हमारा भक्त मुद्गलमुनि हमारी प्रीति के लिये हवन किया चाहता है इसलिये दोनों काल आयकर इस सरोवर को दुग्ध से भर दे उसी दुग्ध से यह हवन किया करेगा कामधेनु ने भगवान् की यह आज्ञा अङ्गीकार की तब भगवान् ने मुद्गल से कहा कि हे मुद्गल ! इस सरोवर से कामधेनु का दुग्ध नित्य लेकर हमारी प्रसन्नता के लिये सायंकाल और प्रातःकाल हवन कियाकर जिससे हमारी प्रसन्नता होय हमारी प्रसन्नता होनेसे तुझे सम्पूर्ण सिद्धियां प्राप्त होंगी और यह क्षीरसर नाम तीर्थ होगा जिसमें स्नान करने से पातक महापातक सब निवृत्त होजायँगे और हे मुद्गल ! तू भी देह के अन्त में हमारे समीप प्राप्त होगा इतना कह मुद्गलको आलिङ्गनकर विष्णुभगवान् अन्तर्धान होगये मुद्गल ने भी सैकड़ों वर्ष उस सरोवर से दुग्ध लेकर हवन किया और अन्त में मुक्ति पाई इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! यह क्षीरसर की उत्पत्ति हम ने कही यह तीर्थ सब लोकमें प्रसिद्ध है कश्यपमुनि की पत्नी कद्रू ने छल से अपनी सपत्नी विनता को जीता इससे इसको बड़ा पाप लगा तब कश्यपजी की आज्ञा से कद्रू ने क्षीरसरोवर में स्नान किया तब वह पाप निवृत्त हुआ इस तीर्थ में जो पुरुष स्नान करें उनको यज्ञ, दान, तप, तीर्थसेवन, वेदपाठ आदि कर्मों से कुछ प्रयोजन नहीं क्षीरकुण्ड का पवन जिसके देह में लगे वह ब्रह्मलोक में प्राप्त होता है और वहां बहुत काल निवास करके मुक्ति पाता है क्षीरकुण्ड में स्नान करनेहारे पुरुष अग्नि के तुल्य देदीप्यमान हो २ कर यमराज के भी मस्तकपर विराजमान होते हैं और सब नरक उनके लिये व्यर्थ होजाते हैं और वैतरणी नदी

भी शीतल होजाती है क्षीरकुण्ड को छोड़ और तीर्थ में जाना गोदुग्ध को छोड़ अर्कदुग्ध के लिये भटकने के तुल्य है क्षीरकुण्ड में स्नान करनेहारे पुरुषों को कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं मुक्ति भी हाथपर ही धरी है यह हम भुजा उठाकर सत्य कहते हैं कभी इस बात में सन्देह मत करो जो इस अध्याय को भक्ति से पढ़े वह क्षीरकुण्ड के स्नान के फल को प्राप्त होता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां क्षीरकुण्डमाहात्म्यमुद्गलमुनिकथानकंनामसप्तत्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३७॥

अड़तीसवां अध्याय॥

विनता कद्रू की कथा और गरुड़ का विचित्र इतिहास क्षीरकुण्ड का माहात्म्य॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! कद्रू कौन थी और उसने अपनी किस सपत्नी को छलसे जीता क्या छल किया और फिर किस प्रकार क्षीरकुण्ड में स्नान कर निष्पाप हुई? यह आप कृपाकर वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! प्रजापति की कन्या विनता और कद्रू दोनों कश्यप की भार्या थीं विनता के पुत्र अरुण और गरुड़ हुये कद्रू के पुत्र वासुकि अनन्त आदि हजारों सर्प हुये एक दिन कद्रू और विनता ने इन्द्र के घोड़े उच्चैःश्रवा को देखा तब कद्रू ने कहा कि हे विनते! इस घोड़े के बाल नीले हैं कि श्वेत तब विनता बोली कि हे कद्रू! मुझे तो इसके बाल श्वेत देखपड़ते हैं कद्रू ने कहा कि जो इसके श्वेत बाल होयँ तो मैं तेरी दासी बनूं और नील होयँ तो तू मेरी दासी होगी यह प्रण दोनों ने किया कद्रू ने सर्पों को बुलाकर सब बात कही और अपने पुत्र वासुकि आदिकों से यह कहा कि तुम उच्चैःश्रवा के श्वेत बालों को आच्छादन करो जिससे मुझे विनता की दासी न बनना पड़े यह बात सर्पोंने अङ्गीकार न की तब कद्रू ने क्रोध कर उनको शाप दिया कि जनमेजय के यज्ञ में तुम्हारा नाश होगा यह शाप सुन व्याकुल हो कर्कोटक नाग ने कद्रू से कहा कि हे मातः! मैं उच्चैःश्रवा को कृष्णवर्ण करदूंगा तू कुछ भय मत कर यह कह कर्कोटक नाग उच्चैःश्रवा के लिपटगया उसकी देहकान्ति से उच्चैःश्रवा का रङ्ग नील अञ्जन के समान होगया तब कद्रू विनता को

संग ले उच्चैःश्रवा को देखने चली और चन्द्र ऐरावत आदि रत्नों के उत्पत्ति स्थान समुद्र को लङ्घन कर इन्द्र के वाहन उच्चैःश्रवा के समीप पहुँची वहां देखा कि उच्चैःश्रवा काला है तब विनता बहुत व्याकुल हुई कद्रू ने उसको अपनी दासी बनालिया इतने में विनता का पुत्र गरुड़ भी अण्डे को फोड़ पर्वत के समान और अग्निज्वाला के तुल्य देदीप्यमान निकला गरुड़ का रूप देख तीनों लोक भयभीत होगये देवता स्तुति करनेलगे तब गरुड़ ने अपने उस भयंकररूप को त्यागदिया और अपने बड़ेभाई अरुण को पीठपर चढ़ाय गरुड़ अपनी माता के समीप पहुँचा कद्रू ने विनता से कहा कि हे दासी! मैं पाताल को जाया चाहती हूं इसलिये तू मुझे उठा ले और तेरा पुत्र गरुड़ मेरे पुत्र नागों को उठाके ले चले विनता ने यह बात गरुड़ से कही गरुड़ ने माता की आज्ञा अङ्गीकार की और सब सर्पों को पीठपर चढ़ाकर उड़ा कद्रू विनतापर चढ़कर चली गरुड़ बहुत ऊंचा उड़ा इसलिये सूर्य के तेज से सर्प दग्ध होनेलगे तब कद्रूने इन्द्र की स्तुति की इन्द्र ने वृष्टि करके सर्पों का ताप शान्त किया गरुड़ भी क्षणमात्र में नागलोक में जा पहुँचा वहां सर्पों ने फिर गरुड़ से कहा कि हे दासीपुत्र! हम द्वीपान्तर देखने जाया चाहते हैं इसलिये शीघ्रही हमको उठा ले चल तब गरुड़ ने अपनी माता विनता से पूछा कि हे मातः! मैं सर्पों को उठाये फिरता हूं और तू कद्रू का वाहन हो रही है और सर्प मुझे बारबार दासीपुत्र कहते हैं इसमें क्या कारण है? यह सब तू मुझे यथार्थ बता दे तब विनता ने कहा कि हे पुत्र! मुझ को कद्रू ने छल से जीतकर अपनी दासी बनाया इससे तुझे दासीपुत्र कहते हैं और इसीकारण मैं और तू इन के वाहन बनरहे हैं यह सब वृत्तान्त विनता के मुख से सुनकर गरुड़ने पूछा कि हे मातः! इस दासपने से हम क्योंकर छूटें तब विनता ने कहा कि हे पुत्र! सर्पों से और कद्रू से पूछ गरुड़ ने सर्पों से पूछा कि मेरी माता दासभाव से क्योंकर छूट सकी है सर्पों ने कहा कि हे गरुड़! स्वर्ग से जो तू हमको अमृत लादेवे तो आजही तेरी माता को छोड़ देवें यह सुन गरुड़ अपनी माता के समीप आया और कहनेलगा कि हे मातः!

में देवताओं से अमृत लेने को जाता हूं कुछ मुझे खाने को दे विनता ने कहा कि हे पुत्र! समुद्र में एक समूह म्लेच्छों का रहता है उनको तू भक्षणकर और अमृत लेआ उन म्लेच्छों में एक ब्राह्मण भी एक म्लेच्छ स्त्री में अनुरक्त होकर रहता है उसको मत भक्षण करना उसके भक्षण करने से कण्ठ में दाह होगा हे पुत्र! शीघ्र जाकर अमृत लेआ इन्द्र आदि देवता तेरे अङ्गों की रक्षा करें गरुड़ भी माता से बिदा हो समुद्र में पहुँचा और पर्वत की कन्दरा के समान अपना मुख फैलाय म्लेच्छों को भक्षण करनेलगा उनके साथ वह ब्राह्मण भी गरुड़ के मुख में आगया परन्तु कण्ठदाह होने से गरुड़ ने जाना और उस ब्राह्मण से कहा कि हे ब्राह्मण! है तो तू पातकी परन्तु ब्राह्मण होने से अवध्य है इसलिये मेरे मुख से निकलजा ब्राह्मण ने कहा कि मेरी स्त्री भी निकले तो मैं निकलूं उसके विना मैं क्षणभर भी नहीं रहसक्ता गरुड़ ने ब्राह्मण को और उसकी स्त्री को भी अपने मुख से निकालदिया ब्राह्मण अपनी स्त्री समेत वहां को चला गया और गरुड़ भी सब म्लेच्छों को भक्षणकर अपने पिता कश्यप जी के समीप आया कश्यपजी ने पूछा कि हे पुत्र! कहां जाता है गरुड़ ने कहा कि हे महाराज! माता का दासीभाव निवृत्त करने के लिये अमृत लेने जाता हूं बहुत से म्लेच्छ भक्षण करके भी मुझे तृप्ति नहीं हुई क्षुधा के मारे प्राण जाते हैं इसलिये मुझे कुछ भोजन आप बतावें उस भोजन के करने से मैं अमृत लाने को समर्थ होजाऊंगा यह गरुड़ का वचन सुन कश्यपजी बोले कि हे पुत्र! पूर्वकाल में विभावसु नाम एक मुनि था और उसका छोटा भाई सुप्रतीक नाम था उन दोनों ने आपस में विवादकर परस्पर शाप दिया उस शाप से सुप्रतीक तो छहयोजन ऊंचा हाथी होगया और विभावसु दशयोजन चौड़ा और तीनयोजन ऊंचा कूर्म अर्थात् कछुवा होगया वे दोनों इस सरोवर में पूर्व वैर को स्मरण करते हुये अब भी युद्ध करते हैं उन दोनों को तू भक्षण करले गरुड़ भी पिता की आज्ञा पाय वहां गया और उन दोनों को अपने पञ्जों में उठाय ले उड़ा और विलम्ब नाम तीर्थपर गया वहां एक पुराना वटवृक्ष था उसने

गरुड़ से कहा कि हे गरुड़ ! तू मेरी शाखापर बैठकर इनको भक्षण कर ले वटवृक्ष का यह वचन सुन गरुड़ उसकी शाखापर बैठा गरुड़ के बैठतेही भार से वह शाखा टूटी उसमें साठहजार बालखिल्य ऋषि तप करने को लटक रहे थे गरुड़ ने देखा कि शाखा भूमिपर गिरेगी तो इनको क्लेश होग। इसलिये गरुड़ अपनी चोंच में उस शाखा को भी लेउड़ा तब गरुड़ से कश्यपजी ने कहा कि हे पुत्र ! निर्जनवन में जाकर इस शाखा को रख दे गरुड़ ने भी पिता की आज्ञा से निर्जनवन में जाय वह शाखा रक्खी और हाथी तथा कच्छप को भक्षण किया इस अवसर में स्वर्ग के बीच उत्पात होनेलगे तब इन्द्र ने बृहस्पति से पूछा कि हे देवगुरो ! उत्पात क्यों होते हैं? तब बृहस्पति कहनेलगे कि हे देवराज ! पूर्वकाल में कश्यपमुनि ने यज्ञ करना चाहा तब अंगुष्ठ प्रमाण बालखिल्य ऋषियों को यज्ञ की सामग्री इकट्ठी करने के लिये भेजा मार्ग म गौ के खुरके गढ़े में जल भरा था उसमें वे डूबनेलगे उनको देख तुमने हास्य किया तब क्रोधकर उन्हों ने यज्ञाग्नि में इस कामना से हवन किया कि कश्यप के ऐसा पुत्र होय जो इन्द्र को भय देवे वह कश्यप का पुत्र गरुड़ हुआ है और अब अमृत हरने के लिये यहां आता है इससे ये दारुण उत्पात होते हैं यह बृहस्पति का वचन सुन इन्द्रने सब देवताओं को बुलाकर कहा कि गरुड़ अमृत हरने आता है तुमसे रक्षा कीजाय तो करो यह इन्द्र का वचन सुन अस्त्र शस्त्र धारण कर सब देवता अमृत की रक्षा करनेलगे इतने में गरुड़ भी वहां आय पहुँचा उसको देख सब देवता भय से कांपउठे देवताओं के साथ गरुड़ का युद्ध होनेलगा गरुड़ ने अपनी चोंच से देवताओं को भेदन किया देवताओं ने भी गरुड़ को शस्त्रों से बहुत पीड़ा दी तब गरुड़ ने अपने पंखों के पवन से देवताओं को उड़ाकर दूर फेंकदिया देवता बड़ा क्रोधकर गरुड़ के ऊपर बाण, भिन्दिपाल, तोमर आदि शस्त्रों की वर्षा करनेलगे गरुड़ ने अपने पंखों से इतनी धूलि उड़ाई कि देवताओं के नेत्र फूटने लगे तब देवताओं ने वायु करके उस धूलि को शान्त किया और गरुड़ ने भी वसु, रुद्र, आदित्य, मरुत् आदि देवताओं को अपने तीखे नख

और चोंच से घायल किया तब देवता भागगये गरुड़ अमृत के समीप चला तो देखा कि अमृत के चारो ओर प्रचण्ड अग्नि प्रज्वलित होरहा है तब गरुड़ ने हजार चोंच करली और बड़ी २ नदियों को चोंचों में भर २ उस अग्नि को बुझाया आगे जाकर देखा तो बड़ा तेजस्वी और तीखी धारवाला चक्र अमृत के चारो ओर भ्रमता है तब गरुड़ ने छोटी देह किया और चक्र के बीच से निकलकर पार होगया आगे देखा तो दो सर्प अमृत की रक्षा करते हैं जिनकी दृष्टि सेही सब भस्म होजायँ गरुड़ ने अपने पंख और चोंच से उन सर्पों को मूर्च्छित करदिया और अमृत के घट को लेकर उड़ा तब विष्णुभगवान् ने कहा कि हे गरुड़! तेरा पराक्रम देख हम बहुत प्रसन्न हुये वर मांग गरुड़ ने कहा कि तुम्हारे ऊपर मेरी स्थिति होय और अजर अमर होजाऊं और तुम को जो वर चाहिये वह मुझ से भी मांगो तब विष्णुभगवान् ने कहा कि हमारे वाहन तुम हो जावो गरुड़ ने भी यह बात अङ्गीकार की विष्णुभगवान् ने गरुड़ को वर दिया अपने रथ की ध्वजापर स्थापन किया और वाहन भी बनाया इन्द्र ने देखा कि गरुड़ अमृत को लिये जाता है तो बड़ा क्रोधकर वज्र मारा परन्तु गरुड़ ने हँसकर कहा कि हे इन्द्र! तेरे वज्र प्रहार से मुझे कुछ भी व्यथा न हुई परन्तु तेरे आदर के लिये एक पंख मैं अपना गिरायेदेता हूं यह कह गरुड़ने एक छोटा सा पर डालदिया उस सुन्दर पर को देख देवताओं ने गरुड़ का नाम सुपर्ण रक्खा गरुड़ ने कहा कि हे इन्द्र! तीनों लोक को मैं उठा सक्ता हूं और हजार इन्द्र भी आवें तो मेरा क्या कर सक्ते हैं? यह गरुड़ का वचन सुन इन्द्र ने कहा कि हे गरुड़! तू अमृत को क्या करेगा हम को देदे जिन सर्पों को तू अमृत दिया चाहता है वे अमृतपान कर अजर अमर होजायँगे तो देवताओं को और सब जगत् को पीड़ा देंगे यह सुन गरुड़ ने कहा कि हे इन्द्र! जहां मैं इस अमृत को स्थापन करूं वहां से तुम हर लाना गरुड़ का यह वचन सुन प्रसन्न हो इन्द्र ने कहा कि हे गरुड़! तुम से हम प्रसन्न हैं वर मांग तब गरुड़ ने कहा कि हे इन्द्र! जिन सर्पों ने मेरी माता को छल से दासी बनाया वे मेरे भक्ष्य होयँ इन्द्र ने

गरुड़ को यही वर दिया गरुड़ अमृत लेकर चला इन्द्र उसके पीछे २ गये गरुड़ ने माता के समीप पहुँच सर्पों से कहा कि यह अमृत मैं ले आया हूं और कुशों के ऊपर इस अमृतघट को रखता हूं तुम भी स्नानकर पवित्र हो इस अमृत को पान करना अब मेरी माता को छोड़ दो सर्प भी अमृतघट देख प्रसन्न होगये और गरुड़ की माता विनता को छोड़ दिया और आप सब स्नान करने गये इस अवसर में इन्द्र आकर अमृत को उठा ले गये इतने में सर्प भी स्नानकर आये तो देखा कि अमृत नहीं है तब उन कुशों को चाटनेलगे जिन पर अमृतघट रक्खा था कुशों के चाटने से सर्पों की जिह्वा चीरी गई उसी दिन से सर्प द्विजिह्व कहाये और अमृत के स्पर्श होने से कुश भी पवित्र मानेगये इसप्रकार अपनी माता को दासी-भाव से छुटाय गरुड़ ने कद्रू को शाप दिया कि तैंने मेरी माता को छल से दासी बनाया इसलिये तू पति की सेवा के योग्य न होगी यह शाप देकर गरुड़ चलागया कद्रू और विनता दोनों कश्यपजी के समीप गईं कद्रू को देख कश्यपजी क्रोधकर बोले कि हे कद्रू! तैंने छल से विनता को जीता इसलिये हमारी सेवा के योग्य तू नहीं है जो स्त्री पुरुष छल से जीते वह महापातकी होता है और उसके साथ भाषण करने से भी पातक लगता है इसलिये तेरे साथ सम्भाषण करने से हम भी पातकी होजायँगे छली मनुष्य जिस पंक्ति में भोजन करे वह पंक्ति नरक को जाती है छली पुरुष का मुख देख सूर्य जल अथवा अग्नि को देखे तब शुद्ध होता है छली पुरुष के समीप रहने से अवश्य नरक में वास होता है इसलिये हे दुष्टे! शीघ्र ही हमारे आश्रम से चलीजा इतना कह कश्यपजी ने विनता को अङ्गीकार करलिया कद्रू भी पति का यह रूक्ष वचन सुन रोती हुई उन के चरणों पर गिरी परन्तु कश्यपजी ने उसका अपराध क्षमा नहीं किया तब विनता ने प्रार्थना की कि हे महाराज! आप इस मेरी बहिन का अप-राध क्षमा करें इसने भूल से यह अपराध किया इसलिये आपको कृपाकर क्षमा ही करना चाहिये साधु पुरुष दयालु होते हैं यह विनता का वचन सुन कश्यपजी बोले कि हे विनते! तेरी शपथ खाकर कहते हैं कि जब

तक यह दुष्टा इस पातक का प्रायश्चित्त न करेगी हम ग्रहण न करेंगे तब विनता ने फिर प्रार्थना की कि हे महाराज! आपही प्रायश्चित्त बतावें जिससे यह आपकी सेवा के योग्य होय तब क्षणमात्र ध्यानकर कश्यपजी ने कहा कि दक्षिणसमुद्र के तीर फुल्लग्राम के समीप क्षीरसरोवर नाम तीर्थ है वहां जाकर यह स्नान करे तब शुद्ध होगी और चाहे हजार प्रायश्चित्त करे तो भी शुद्ध नहीं होसक्ती यह पति का वचन सुन अपने पुत्रों को संग लेकर कद्रू क्षीरसरोवर को चली और कुछ दिनों में वहां पहुँच उपवास कर संकल्पपूर्वक तीन दिन स्नान किया चौथे दिन स्नान करनेलगी तब आकाशवाणी हुई कि हे कद्रू! इस तीर्थ के प्रभाव से तू छलदोष से निवृत्त हुई और गरुड़ का शाप भी जाता रहा अब जाकर पति की शुश्रूषा कर पति भी तुझे ग्रहण करेगा यह आकाशवाणी सुन प्रसन्न हो तीर्थ की प्रदक्षिणा कर अपने पुत्रों समेत कद्रू कश्यपजी के समीप आई कश्यपजी ने भी उसको शुद्ध जान अङ्गीकार किया इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! यह क्षीरकुण्ड का प्रभाव हमने वर्णन किया जो इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह क्षीरकुण्ड के स्नान फल को प्राप्त होता है और अश्वमेधआदि यज्ञ करने का सहस्र गोदान का और गङ्गा आदि तीर्थों में स्नान करने का फल पाय उत्तम गति पाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां विनताकद्रूकथानकगरुडोत्पत्तिनिरूपणं नामाष्टत्रिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३८॥

उन्तालीसवां अध्याय॥

कपितीर्थ का माहात्म्य और रम्भा अप्सरा की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम कपितीर्थ का माहात्म्य वर्णन करते हैं वह तीर्थ लोकों के कल्याण के लिये वानरों ने बनाया है रावण को मार गन्धमादनपर्वत में जब हनुमान् आदि वानर आये तब उन्होंने यह तीर्थ बनाया उसमें सबने स्नान किया और तीर्थ को यह वर दिया कि इस तीर्थ में जो पुरुष स्नान करें वे सब पातकों से छूट मुक्ति पावें और उनको नरक दारिद्र्य आदि का भय नहीं होवे जो यह विचार करे कि

मैं कपितीर्थ को जाऊंगा और इस निमित्त सौ क़दम भी चले वह सद्गति पावे यह वर देकर सब वानरों ने रामचन्द्रजी से प्रार्थना की कि आप भी इस हमारे तीर्थ को उत्तम वर देवें तब अपने भक्त वानरों की प्रार्थना सफल करने के लिये रामचन्द्रजी ने वर दिया कि इस तीर्थ में स्नान करने से गङ्गा प्रयाग आदि तीर्थों के स्नान का फल गोसहस्रदान अग्निष्टोम आदि यज्ञ गायत्री आदि मन्त्रों के जप चारो वेद के पारायण और शिव विष्णु आदि देवताओं के पूजन का फल प्राप्त होगा रामचन्द्रजी के यह वर देने के अनन्तर शिव, ब्रह्मा, इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर, वायु, चन्द्रमा, आदित्य, निर्ऋति, साध्य, वसु, विश्वेदेव आदि सब देवता सनकआदि योगी नारद आदि देवर्षि अत्रि, भृगु, कुत्स, गौतम, पराशर, कण्व, अगस्त्य, सुतीक्ष्ण, विश्वामित्र आदि सब मुनीश्वर उस तीर्थ की प्रशंसा करने लगे और सबों ने भक्ति से उस कपितीर्थमें स्नान किया और सबों ने यह कहा कि यह कपितीर्थ सब लोक में प्रसिद्ध होगा इतना कह सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! मोक्ष की इच्छावाले पुरुषों को अवश्यही कपितीर्थ में स्नान करना चाहिये इस तीर्थ का माहात्म्य हम कहांतक वर्णन करें विश्वामित्र मुनिके शाप से शिला हुई रम्भा इस तीर्थ के प्रभाव से फिर अपने रूप को प्राप्त हुई यह सुन मुनीश्वरों ने पूछा कि हे सूतजी! रम्भाको विश्वामित्रमुनि ने क्यों शाप दिया और शिला होकर कपितीर्थ में क्योंकर पहुँची यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में कुशिकवंश के बीच विश्वामित्र नाम एक राजा हुआ है वह एक समय बहुतसी सेना साथ ले अपने राज्य को देखने निकला बहुत देश देखताहुआ वशिष्ठजीके आश्रम में पहुँचा वशिष्ठजी ने भी कामधेनु के प्रभाव से राजा का और उसकी सेना का भलीभांति सत्कार किया भांति २ के भोजन सबको कराये कामधेनु का प्रभाव देख राजा विश्वामित्र ने वशिष्ठजी से कामधेनु की याचना की परन्तु वशिष्ठजी ने कामधेनु न दी तब राजा ने बलात्कार से कामधेनु को हरना चाहा परन्तु कामधेनु के शरीर से इतने म्लेच्छगण उत्पन्न हुये कि उन्होंने विश्वामित्र की सेना का संहार किया तब राजा विश्वामित्र वशिष्ठजी से पराजित हो

हिमालय में जाय तप करनेलगा और शिवजी को प्रसन्नकर उन से सब अस्त्र पाये फिर वशिष्ठजी के आश्रम में आय राजा विश्वामित्र वशिष्ठजी पर अस्त्र छोड़नेलगा परन्तु वशिष्ठजी ने अपने ब्रह्मदण्ड करके सब अस्त्रों को निष्फल करदिया तब विश्वामित्र बहुत लज्जित हुआ और ब्राह्मण बनने के लिये तप करने में प्रवृत्त हुआ पूर्व आदि तीन दिशाओं में जहां तप करनेलगा वहांहीं विघ्न हुआ तब उत्तरदिशा में हिमालयपर्वत के बीच कौशिकी नदी के तटपर तप करनेलगा निराहार जितेन्द्रिय और जितश्वास होकर दिव्य हजार वर्षपर्यन्त तप किया ग्रीष्मऋतु में पञ्चाग्नि तापता शिशिर ऋतु में जलशय्या में सोता और वर्षाऋतु में निरावरणस्थान में रहता इस प्रकार ऊपर को भुजा उठाय एक हजार दिव्य वर्ष तक अत्युग्र तप विश्वामित्र ने किया तब देवता बहुत व्याकुल हुये और सब ने रम्भा को बुलाकर कहा कि हे रम्भे ! हिमालयपर्वत में जाकर विश्वामित्र को अपने कटाक्षों से मोहितकर जिस प्रकार उसके तप में विघ्न होय ऐसा उपाय कर यह देवताओं का वचन सुन हाथ जोड़ भय से कांपती हुई रम्भा कहनेलगी कि हे महाराज ! विश्वामित्रमुनि महाक्रूर हैं वह मुझे अवश्यही शाप देगा इसलिये आप सब मुझे ऐसे क्रूरकर्म में आज्ञा न देवें मैं आपकी दासी हूं मेरी रक्षा करें यह रम्भा का वचन सुन इन्द्र ने कहा कि हे रम्भे ! भय मतकर तेरी सहाय के लिये वसन्त और कामदेव को साथ ले मैं भी आता हूं तू चलकर अपने रूप से विश्वामित्र को वशकर रम्भा इन्द्रकी आज्ञा पाय विश्वामित्र के आश्रमको गई वहां जाय विश्वामित्र के सम्मुख खड़ी होकर हाव भाव करनेलगी और वसन्तऋतु चारोंओर छागया कोकिल मीठे २ शब्द बोलनेलगे यह सब देख विश्वामित्र के मन में संशय हुआ फिर योगबल से जाना कि यह सब कर्म इन्द्रका है और रम्भाको देख विश्वामित्र मुनि ने कहा कि हे रम्भे ! तू हमारे तप में विघ्न करने आई है इसलिये शिला होजा और बहुत कालतक शिलाभाव को प्राप्त होकर एक ब्राह्मण करके इस शाप से मुक्त होगी इतना कहतेही रम्भा शिला होगई विश्वामित्र मुनि भी बहुत काल तपकर वशिष्ठजी के वाक्य से ब्राह्मण हुये और रम्भा को

भी शिला हुये बहुत काल व्यतीत हुआ उसी आश्रम में अगस्त्यमुनिका शिष्य श्वेतमुनि मोक्ष की इच्छा से तप करनेलगा उसके तप में एक अङ्गारका नाम राक्षसी नित्य विघ्न करती मूत्र विष्ठा आदि लाकर आश्रम में डालदेती और अनेकप्रकार के उपद्रव करके नित्यही मुनि को त्रास देती एक दिन श्वेतमुनि ने क्रोधकर वह शिला जो रम्भा होगई थी उठाई और वायव्यास्त्र मन्त्र पढ़ उस राक्षसी पर चलाई आगे २ राक्षसी और पीछे २ शिला सब दिशाओं में घूमती अन्त में राक्षसी व्याकुल हो दक्षिण समुद्र के तीर कपितीर्थ में घुसी परन्तु वह शिला भी उसके ऊपर तीर्थ में गिरी गिरतेही वह राक्षसी चूर्ण होगई और शिला भी तीर्थ का जल स्पर्श होतेही रम्भा होगई और उसके ऊपर देवताओं ने पुष्पवृष्टि की इतने में आकाश से विमान आया रम्भा भी वस्त्र भूषणआदि से अलंकृत हो उर्वशी आदि अपनी सखियों समेत विमान में बैठ कपितीर्थ की प्रशंसा करती हुई स्वर्ग को गई वह राक्षसी भी पूर्वजन्म में घृताची नाम अप्सरा थी और अगस्त्य मुनि के शाप से राक्षसी होगई थी वह भी कपितीर्थ में प्राण त्यागने से अपने रूप को प्राप्त हो रम्भा के साथही विमान में बैठ स्वर्ग को गई इस भांति शिला और राक्षसी अगस्त्यजी के शिष्य श्वेतमुनि के प्रसाद करके और कपितीर्थ के प्रभाव से अपने पूर्वरूप को प्राप्त हुई इस कारण हे मुनीश्वरो! सब प्रकार से कपितीर्थ में स्नान करना चाहिये जो पुरुष भक्ति से इस अध्याय को पढ़ें अथवा श्रवण करें वे कपितीर्थ के स्नानफल को प्राप्त होकर सद्गति पाते हैं॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां कपितीर्थमाहात्म्यरम्भा-
कथानकं नामैकोनचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः॥ ३९॥

चालीसवां अध्याय॥

गायत्रीतीर्थ और सरस्वतीतीर्थ का माहात्म्य और ब्रह्माजी की कथा॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! महापुण्य को देनेहारा और नरक क्लेश का नाश करनेहारा गायत्री और सरस्वती का माहात्म्य हम वर्णन करते हैं जिसके पढ़ने और सुनने से महापातक की निवृत्ति होय गायत्री

और सरस्वती में जो मनुष्य स्नान करें वे कभी गर्भवास का दुःख नहीं भोगते और मुक्त होते हैं गन्धमादनपर्वतमें ब्रह्मपत्नी गायत्री और सरस्वती के सन्निधान से दो तीर्थ हैं इतना सुन मुनीश्वरों ने पूछा कि हे सूतजी! गन्धमादनपर्वत में किस कारण से गायत्री और सरस्वती का सन्निधान हुआ है यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! पूर्वकाल में ब्रह्माजी ने काम के वश हो अपनी पुत्री सरस्वती को चाहा वह भी अपने पिता का दुस्संकल्प जान लज्जा से हरिणी होगई ब्रह्माजी भी हरिण का रूप धार उसके पीछे लगे तब सब देवता ब्रह्माजी की बहुत निन्दा करनेलगे शिवजी भी ब्रह्माजी का यह दुराचार देख क्रोध से धनुष् बाण ले व्याध का रूप धार उनके पीछे लगे और एक बाण ऐसा मारा कि हरिणरूप ब्रह्माजी भूमिपर गिरे और उनके देह से एक तेजपुञ्ज निकलकर आकाश को गया वही मृगशिरानक्षत्र होगया और आर्द्रानक्षत्र के रूप से शिवजी स्थित हुये जो अबतक भी मृगशिरानक्षत्र के पीछे मृग व्याधरूप से आकाश में देख पड़ते हैं इसप्रकार ब्रह्माजी के मृतक होने के अनन्तर अतिशोकातुर हो गायत्री और सरस्वती विचार करके ब्रह्माजी के पुनर्जीवन के लिये शिवक्षेत्र गन्धमादनपर्वत में जाय तप करनेलगीं उन्होंने स्नान के लिये अपने २ नाम से एक २ तीर्थ बनाया तीन काल उन तीर्थों में स्नानकर काम क्रोधआदि त्याग जितेन्द्रिय हो शिवजी का ध्यान करतीहुईं दोनों पञ्चाक्षर मन्त्र का जप करतीं इस भांति अपने पति ब्रह्माजी के जीवन के लिये बहुत कालतक उग्र तप किया तब श्रीमहादेवजी प्रसन्न हुये और गणेश, कार्त्तिकेय, नन्दी, भृङ्गी आदि सहित गायत्री और सरस्वती के सम्मुख प्रकट हुये उनको देख भक्ति से दोनों स्तुति करनेलगीं॥

गायत्रीसरस्त्यावूचतुः॥ नमो दुर्वारसंसारध्वान्तध्वंसैकहेतवे॥ ज्वलज्ज्वालावलीभीमकालकूटविषादिने॥ १॥ जगन्मोहन पञ्चाङ्गदेहनाशैकहेतवे॥ जगदन्तकर क्रूर यमान्तक नमोस्तु ते॥ २॥ गङ्गातरङ्गसंघट्टकजटामण्डलधा-

रिणे॥ नमस्तेस्तु विरूपाक्ष बालशीतांशुधारिणे ॥ ३ ॥ पिनाकभीमटङ्कारत्रासितत्रिपुरौकसे॥ नमस्ते विविधाकार-जगत्स्रष्टृशिरश्छिदे ॥ ४ ॥ शान्तामलकृपादृष्टिसंरक्षित-मृकण्डुज॥ नमस्ते गिरिजानाथ रक्षावां शरणागते॥ ५ ॥ महादेव जगन्नाथ त्रिपुरान्तक शङ्कर ॥ वामदेव महादेव रक्षावां शरणागते ॥ ६ ॥

यह स्तुति सुन प्रसन्न हो श्रीमहादेवजी ने कहा कि हे गायत्रि ! हे सरस्वति ! हम तुम से प्रसन्न हैं जो वर चाहती हो मांगो तब उन दोनों ने यह प्रार्थना की कि हे नाथ ! आप हमारे पिता और हम दोनों आपकी पुत्री हैं अब आप ऐसी अनुग्रह करें जिससे हमारे पति ब्रह्माजी जी उठें और फिर हमारा उनका समागम होजाय यह उनकी प्रार्थना सुन शिवजी ने अपने गणों के हाथ ब्रह्माजी का शरीर वहां मँगवाया और शिर भी मँगवाया फिर गायत्री और सरस्वती के सम्मुखही शिवजी ने ब्रह्माजी का शिर धड़ से जोड़कर उनको जिलादिया और ब्रह्माजी उठ खड़े हुये जैसे सोकर उठें और भक्ति से शिवजी की स्तुति करनेलगे ॥

ब्रह्मोवाच ॥ नमस्ते देवदेवेश करुणाकर शङ्कर॥ पाहि मां कृपया शम्भो निषिद्धाचरणात्प्रभो ॥ मा प्रवृत्तिर्भवेद् भूयो रक्ष मां त्वं तथा सदा ॥

यह ब्रह्माजी की प्रार्थना सुन शिवजी ने कहा कि हे ब्रह्माजी! अब ऐसा प्रमाद कभी मत करना जे पुरुष उत्पथ में चलें उनको हम दण्ड देते हैं इसीलिये आपको भी दण्ड दिया इतनी बात ब्रह्माजी से कह गायत्री और सरस्वती से कहा कि तुम्हारे तप के प्रभाव से ब्रह्माजी का पुनर्जीवन हुआ अब तुम सब ब्रह्मलोक को जाओ और तुम्हारे सन्निधान से इन दोनों कुण्डों में स्नान करनेवाले पुरुषों की मुक्ति होगी तुम दोनों के नाम से ये दोनों तीर्थ प्रसिद्ध होंगे ये दोनों तीर्थ सब तीर्थों को भी शुद्ध करनेवाले

होंगे इन तीर्थों में स्नान करने से महापातकों का नाश सब मनोरथों की सिद्धि हमारा और विष्णु जी का प्रसाद भी होगा इन दोनों तीर्थों के तुल्य न कोई तीर्थ हुआ न होगा गायत्री जप से रहित वेदाभ्यास पञ्चयज्ञ नित्यानुष्ठान आदि से वर्जित पुरुष भी इन कुण्डों में स्नान करने से उन कर्मों के फल को प्राप्त होंगे और भी पातकी पुरुष इनमें स्नानकर शुद्ध होजायँगे इतना कह शिवजी तो अन्तर्धान हुये और गायत्री सरस्वती सहित ब्रह्मा जी ब्रह्मलोकको गये इतना कह सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो! इस प्रकार गन्धमादनपर्वत में गायत्री और सरस्वती का सन्निधान हुआ है जो पुरुष इस अध्याय को भक्ति से पढ़े अथवा सुने वह दोनों तीर्थों के स्नानफल को प्राप्त हो सद्गति पाता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां गायत्रीसरस्वतीतीर्थमाहात्म्य-ब्रह्मकथानकंनाम चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४० ॥

इकतालीसवां अध्याय ॥

राजा परीक्षित और कश्यपनाम ब्राह्मणकी कथा और गायत्रीतीर्थ व सरस्वतीतीर्थका माहात्म्य ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! गायत्रीतीर्थ और सरस्वतीतीर्थ का प्रभाव हम और भी वर्णन करते हैं कश्यप नाम ब्राह्मण नरकप्रद बड़े पाप से इन तीर्थों में स्नानकर छूटा मुनियों ने पूछा कि हे सूतजी! कश्यप कौन था उसने क्या पाप किया और फिर क्योंकर पाप से मुक्त हुआ यह आप कृपा करके वर्णन करें आपका वचनरूप अमृत पान करते २ हमको तृप्ति नहीं होती यह सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! गायत्री और सरस्वती के माहात्म्य का एक इतिहास हम वर्णन करते हैं जिसके सुनने से सब पातक नाश होयँ अभिमन्यु का पुत्र राजा परीक्षित धर्म से हस्तिनापुर में राज्य करता था वह साठ वर्ष की अवस्था में एक दिन आखेट के लिये वनमें गया वहां एक मृग के पीछे लगाहुआ अपनी सेना से अलग होकर दूर चलागया और क्षुधा तृषा से भी बहुत व्याकुल था आगे एक मुनि समाधि लगाये बैठा था उससे राजा ने पूछा कि हे मुने! मेरे बाण से बिधाहुआ मृग तुमने देखा कि नहीं यह राजा का वचन सुन

कर भी मुनि ने कुछ उत्तर न दिया तब धनुष् के अग्रभाग से एक मरा सर्प उठाकर राजा ने मुनि के गले में डालदिया और आप अपनी राजधानी को चलाआया उस मुनि के पुत्र का शृङ्गी नाम था उसके मित्र कृशाख्यने शृङ्गी से कहा कि तेरा पिता गले में मरा सर्प डाले बैठा है अब तू झूठा अहंकार मत कियाकर यह सुन शृङ्गी ने बड़ा कोप किया और राजा परीक्षित को शाप दिया कि जिस दुष्ट ने मेरे पिता के गले में सर्प डाला है उसको सात दिन के भीतर तक्षक नाग डसेगा और वह मरजायगा इसप्रकार मुनि-पुत्र ने शाप दिया यह बात उसके पिता शमीकऋषि ने समाधि खुलने के अनन्तर सुनी तब अपने पुत्र से कहा कि तैंने सब प्रजा के रक्षक राजा को क्यों शाप दिया विना राजा के राज्य में हम क्योंकर रहसकेंगे क्रोध से बड़ा पाप होता है दया से सुख मिलता है जो उत्पन्न हुये क्रोध को क्षमा से निवृत्त करता है वह दोनों लोकों में सुख पाता है क्षमावाले पुरुष सदा सुख पाते हैं इतना कह शमीकऋषि ने अपने शिष्य गौरमुख से कहा कि तू जाकर राजा परीक्षित से कह आ कि मेरे पुत्र ने तुमको शाप दिया है यह गुरु की आज्ञा पाय गौरमुख ने जाकर राजा परीक्षित से कहा कि हे राजन्! तुम शमीकमुनि के गले में मरा सर्प डाल आये इसलिये उनके पुत्र ने शाप दिया है कि सात दिन के भीतर तक्षक नाग के डसने से तुम्हारी मृत्यु होगी यह बात कहने के लिये मेरे गुरु ने मुझको भेजा है इतना कह गौरमुख अपने आश्रम को गया और राजा भी अतिव्याकुल हुआ राजा ने गङ्गा के बीच अति ऊंचे एक स्तम्भ के ऊपर एक मण्डप अर्थात् बँगला बनवाया और आप उसमें बैठा अनेक गारुड़ी मान्त्रिक चिकित्सक आदि अपने समीप रक्खे और बहुत से ब्रह्मवेत्ता ऋषि राजा के समीप बैठे उस अवसर में कश्यप नाम एक ब्राह्मण यह बात सुन राजा परीक्षित के पास को चला वह सब मान्त्रिकों में उत्तम था और इस अभिप्राय से आया कि तक्षक के विष से राजा की रक्षाकर बहुत सा धन पाऊंगा उसी अवसर में तक्षक भी ब्राह्मण का रूप धार हस्तिनापुर को चला आता था उसने मार्ग में कश्यप को देखा और पूछा कि हे ब्राह्मण! तू कहां जाता है तब

कश्यप ने कहा कि राजा परीक्षित को आज तक्षक नाग डसेगा उसका विष निवृत्त करने के लिये मैं जाता हूं तब तक्षक ने कहा कि हे ब्राह्मण ! तक्षक मैंही हूं और मेरे डसे के ऊपर किसीका मन्त्र तन्त्र नहीं चलसक्ता जो तुझ में सामर्थ्य होय तो इस वटवृक्ष को डसकर मैं भस्म करता हूं और तू इसका उज्जीवन कर इतना कह तक्षक ने उस वृक्ष को डसा डसतेही वह वृक्ष भस्म होगया एक मनुष्य भी उस वृक्षपर पहिले से चढ़ा था वह भी भस्म होगया उसको तक्षक और कश्यप दोनों नहीं जानते थे कश्यप ने कहा कि अब मेरे मन्त्र की शक्ति को सब देखें इतना कह कश्यप ने वट वृक्ष को मन्त्र के प्रभाव से फिर जीता करदिया वह मनुष्य भी जो वृक्ष के साथ जल गया था जी उठा तब तक्षक ने कहा कि हे कश्यप ! मुनिकुमार का वचन मिथ्या न होय ऐसा करना चाहिये राजा से तू जितना धन चाहता है उससे भी द्विगुणधन मुझी से लेले और अपने घर को लौटजा इतना कह तक्षक ने बहुत से उत्तम रत्न कश्यप को दिये कश्यप ने भी ज्ञानदृष्टि से जाना कि राजा परीक्षित की आयुर्दाय समाप्त होचुकी है इस धन को क्यों छोड़ते हो यह विचार तक्षक का दिया बहुत सा धन ले अपने आश्रम को चला आया तक्षक ने अपने सर्पों से कहा कि तुम मुनि-वेष धारकर राजा परीक्षित के पास जावो और उत्तम २ फल राजा को दो यह तक्षक की आज्ञा पाय वे सर्प मुनिवेष धार राजा के समीप पहुँचे और अनेक उत्तम फल राजा को दिये उनमें एक फल के बीच तक्षक भी छोटेसे कीट का रूप धार बैठ गया था राजा ने वे फल मन्त्रियों को बांटदिये और सब से बड़ा फल अपने हाथ में रक्खा इतने में सूर्य अस्त होनेलगे राजा ने उस फल में एक रक्तवर्ण का कीट देखकर कहा कि आज सात दिन पूरे होगये ऋषि का वचन मिथ्या न होना चाहिये इसलिये यह छोटा सा कीट मुझे काटलेवे यह कहकर राजा ने वह कीट अपनी ग्रीवापर रखलिया रखतेही वह कीट तक्षक होगया और राजा के सब शरीर को लपेटकर ऐसा दंशित किया कि उस महल समेत राजा भस्म होगया आसपास के लोग तक्षक को देखतेही भाग गये थे इससे बचगये राजा की मृत्यु के अनन्तर

सब और्ध्वदैहिक कृत्य कराय मन्त्रियों ने परीक्षित के पुत्र जनमेजय को गद्दीपर बैठाया कश्यप भी अपने आश्रम में गया परन्तु सब ब्राह्मणों ने उसका तिरस्कार किया कि ऐसे धर्मात्मा राजा की तैंने रक्षा न की और धनलोभसे लौटआया कश्यप भी बड़ा व्याकुल हुआ जिस नगर ग्राम आश्रम आदि में जाय वहांहीं उसको सब धिक्कार देवें तब अतिदुःखी हो शाकल्यमुनि की शरण में गया और प्रार्थना की कि हे महाराज! सब ब्राह्मण मुनि बन्धु मित्र आदि मेरी निन्दा करते हैं इसका मैं कारण नहीं जानता ब्रह्महत्या, सुरापान, गुरुस्त्रीगमन, सुवर्ण की चोरी आदि कोई महापातक मैंने नहीं किया और महापातकी पुरुषों का कभी मैंने संसर्ग भी नहीं किया और भी कोई उपपातक मैंने नहीं किया फिर मेरी निन्दा क्यों करते हैं जो आप इसका कारण जानते होयँ तो मुझ से कृपाकर कहो कश्यप का यह वचन सुन क्षणमात्र ध्यान कर शाकल्यमुनि बोले कि हे कश्यप! राजा परीक्षित की रक्षा के लिये तू चला और तक्षक से धन लेकर मार्ग से ही चला आया जो चिकित्सा करने को समर्थ होकर भी विष रोग आदि करके पीड़ित मनुष्य की रक्षा न करें वह ब्रह्मघातक होता है क्रोध से काम से भय से लोभ से मात्सर्य से मोह से जो समर्थ होकर विष शस्त्र रोग आदि करके पीड़ित मनुष्य की रक्षा न करे वह ब्रह्मघातक, सुवर्णस्तेयी, गुरुदारागामी, सुरापान करनेहारा और संसर्ग दोष दुष्ट भी गिनाजाता है कन्या बेचनेवाले, रस बेचनेवाले, घोड़े हाथी बेचनेवाले, कृतघ्न, विश्वासघातक आदि सबका प्रायश्चित्त है परन्तु जो समर्थ होकर आरत की रक्षा न करे उसका कुछ प्रायश्चित्त नहीं उस मनुष्य के साथ पंक्ति में भोजन न करे सम्भाषण न करे और उसका मुख भी न देखे उसके साथ सम्भाषण करने से महापातक लग जाता है राजा परीक्षित परमविष्णुभक्त धर्मात्मा महायोगी और चारो वर्णों की रक्षा करनेहारा था तैंने तक्षक का वचन माना और राजा की रक्षा न की इसीकारण सब तेरी निन्दा और तिरस्कार करते हैं यद्यपि राजा परीक्षित की आयुर्दाय समाप्त होगई थी तो भी जबतक श्वास रहे तबतक उपाय करना चाहिये

क्योंकि काल की गति विलक्षण है कदाचित् बचजाय यह प्राचीन वैद्यों का निश्चय है तू चिकित्सा करने में समर्थ होकर भी मार्ग से लौटगया और राजा की रक्षा न की इसलिये राजा का पाप तुझ को लगा यह शाकल्यमुनि का वचन सुन कश्यप ने प्रार्थना की कि हे महाराज! कोई ऐसा उपाय बतावें जिससे यह पातक निवृत्त होय आप दयालु हैं और मैं आपकी शरण में प्राप्त हुआ हूं यह कश्यप की प्रार्थना सुन क्षणमात्र ध्यानकर शाकल्यमुनि बोले कि हे कश्यप! इस पातक के निवृत्त होने के लिये हम एक उपाय कहते हैं उसको शीघ्रही कर दक्षिण समुद्र के बीच सेतु के मध्य गन्धमादनपर्वत में गायत्री और सरस्वती नामक दो तीर्थ हैं वहां तू स्नान करतेही शुद्ध होजायगा उन तीर्थों का पवन लगतेही सब पाप निवृत्त होजाते हैं इसलिये तू भी शीघ्रही जाकर स्नान कर कश्यप यह शाकल्यमुनि की आज्ञा पाय उनको प्रणामकर गन्धमादनपर्वत को चला वहां जाय गायत्री सरस्वती और दण्डपाणि भैरव को प्रणामकर संकल्पपूर्वक दोनों तीर्थों में स्नान किया स्नान करतेही कश्यप निष्पाप होगया और तीर्थ के तीरपर बैठ जप करनेलगा थोड़े काल के अनन्तर सब आभरणों से भूषित गायत्री और सरस्वती प्रकट हुईं उनको देख कश्यप ने भक्ति से प्रणाम किया और पूछा कि तुम दोनों कौन हो तब वे बोलीं कि हे कश्यप! हम दोनों गायत्री और सरस्वती हैं नित्य तीर्थरूप करके यहां निवास करती हैं इन दोनों तीर्थों में स्नान करने से हम तुझपर प्रसन्न हुई हैं जो वर तू चाहे वह मांग इन तीर्थों में जो स्नान करे उसको हम अभीष्ट वर देती हैं यह उनका वचन सुन कश्यप स्तुति करनेलगा॥

कश्यप उवाच॥ चतुराननगेहिन्यौ जगद्धात्र्यौ नमाम्यहम्॥ विद्यास्वरूपे गायत्रीसरस्वत्यौ शुभे उभे॥ १॥ सृष्टिस्थित्यन्तकारिण्यौ जगतां वेदमातरौ॥ हव्यकव्यस्वरूपे च चन्द्रादित्यविलोचने॥ २॥ सर्वदेवाधिपे वाणीगायत्र्यौ सततं भजे॥ गिरिजा कमला चापि युवामेव

जगद्धिते ॥ ३ ॥ युष्मद्दर्शनमात्रेण जगत्सृष्ट्यादिकल्पनम् ॥ युष्मन्निमेषे सततं जगतां प्रलयो भवेत् ॥ ४ ॥ उन्मेषे सृष्टिरभवद्भो गायत्रिसरस्वति ॥ युवयोर्दर्शनादद्य कृतार्थोभवमाशु वै ॥ ५ ॥

यह स्तुतिकर कश्यप ने प्रार्थना की कि सब मुनि और उत्तम ब्राह्मण मुझे निष्पाप जान अङ्गीकार करलेवें और अब कभी मेरी बुद्धि पापकृत्य में न लगे सदा धर्म में ही तत्पर रहे यह वर मुझे आप दोनों कृपा करके दो यह वचन सुन दोनों बोलीं कि हे कश्यप ! यह सब बात तुझ को हमारी अनुग्रह से प्राप्त होगी इतना कह अपने २ तीर्थ में दोनों अन्तर्धान होगईं और कश्यप भी कृतार्थ हो अपने देश को आया और सब ब्राह्मणों ने उसको निष्पाप जान अङ्गीकार किया सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! इसप्रकार गायत्री और सरस्वती में स्नानकर कश्यप बड़े पातक से छूट गया जो पुरुष भक्ति से इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह गायत्री और सरस्वती के स्नानफल को प्राप्त हो सब पापों से छूटता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां परीक्षितकश्यपकथानकं नामैकचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४१ ॥

बयालीसवां अध्याय ॥

गन्धमादनपर्वत के ऋणमोचनआदि सब तीर्थों का माहात्म्य ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! सेतुके बीच और भी जे तीर्थ हैं उन का वैभव हम वर्णन करते हैं ऋणमोचन नाम एक तीर्थ है जिसमें स्नान करने से तीन प्रकार का ऋण निवृत्त होता है ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य इन तीन वर्णों पर ऋषि देवता और पितरों का ऋण होता है ब्रह्मचर्य का अनुष्ठान न करे तो ऋषियों का ऋण रहता है यज्ञ न करे तो देवताओं का ऋण और पुत्र उत्पन्न न करने से पितरों का ऋण रहता है ब्रह्मचर्य यज्ञ और पुत्रोत्पादन विनाही ऋणमोचनतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य ऋषि देवता और पितरों के ऋण से छूटजाता है ऋषि देवता और पितर ब्रह्मचर्य आदि से वैसे सन्तुष्ट नहीं होते जैसे ऋणमोचन में स्नान करने से होते हैं और

दारिद्र्य पुरुष जो धनवानों के ऋण से ग्रस्त होय वह भी इस तीर्थ में स्नान करे तो उसका ऋण निवृत्त होजाय और वह आप धनाढ्य होजाय यहां स्नान करने से ऋणमुक्ति होती है इसी से इसका नाम ऋणमोचन है ऋषि पुरुषों को अवश्यही इस तीर्थ में स्नान करना चाहिये इस तीर्थ के समान तीर्थ न हुआ न होगा यहां एक तीर्थ पाण्डवों का बनाया है पांचों पाण्डवों ने भोग और मोक्ष के लिये वहां यज्ञ किये इसलिये उस तीर्थ का नाम पञ्चपाण्डव हुआ दशहजार कोटि तीर्थ सदा पञ्चपाण्डव तीर्थ में निवास करते हैं आदित्य, वसु, रुद्र, साध्य, मरुद्गण आदि सब देवता उस तीर्थ में निवास करते हैं इस तीर्थ में स्नानकर जो पुरुष देवता और पितरों का तर्पण करे वह सब पापों से छूट ब्रह्मलोक को जाता है जो पुरुष इस तीर्थ के तटपर एक ब्राह्मण को भी भोजन करावे वह दोनों लोकों में सुखी रहता है चारो वर्णों में से कोई मनुष्य इस तीर्थ में स्नान करे वह फिर वियोनि में नहीं जन्म लेता पर्वदिनों में जो मनुष्य पाण्डवतीर्थ में स्नान करें वे कभी नरक को नहीं देखते जो सायंकाल और प्रातःकाल इस तीर्थ का स्मरण करे वह गङ्गाआदि सब तीर्थों के स्नानफल को प्राप्त होता है गन्धमादनपर्वत में इन्द्र आदि देवताओं ने दैत्यों का नाश होने के लिये एक देवतीर्थ बनाया है उसमें स्नान करने से सब पाप निवृत्त होते हैं और अक्षय स्वर्गवास होता है स्त्री अथवा पुरुष ने जन्मभर पाप किये होयँ वे सब पाप देवतीर्थ में स्नान करतेही नष्ट होजाते हैं सब देवताओं में जैसे विष्णुभगवान् प्रधान हैं इसीप्रकार सब तीर्थों में देवतीर्थ मुख्य है सौ वर्ष पर्यन्त अग्निहोत्र करने से जो पुण्य होता है वह देवकुण्ड में एक बार स्नान करने से होता है देवतीर्थ पर निवास करना दान देना जप आदि कर्म करने और भक्ति से देवतीर्थ में स्नान करना ये सब बातें बहुत दुर्लभ हैं देवतीर्थ में जाने से अश्वमेध का फल प्राप्त होता है वहां दो चार दिन निवास करे तो उत्तम सिद्धि को प्राप्त होता है और जन्म १५७ से छूटजाता है तीन दिन स्नान करने से वाजपेययज्ञ का फल प्राप्त होता है देवतीर्थ के स्मरण करने से ये सब पाप निवृत्त होजाते हैं इस

तीर्थ पर देवता और पितरों का अर्चन करने से सब मनोरथ सिद्ध होते हैं और सब यज्ञों का फल प्राप्त होता है इस तीर्थ के तुल्य कोई तीर्थ न हुआ न होगा दोनों लोकों में कल्याण की इच्छावाले पुरुषों को विशेष करके मुमुक्षु पुरुषों को देवतीर्थ में अवश्यही स्नान करना चाहिये यह देवतीर्थ का माहात्म्य हमने संक्षेप से वर्णन किया विस्तार से तो कहां तक वर्णन करें अब रामसेतु में सुग्रीवतीर्थ का माहात्म्य कहते हैं सुग्रीव-तीर्थ में स्नान करने से अश्वमेध का फल प्राप्त होकर सूर्यलोक में निवास होता है और हज़ार गोदान का फल होता है ब्रह्महत्या आदि पाप निवृत्त होते हैं वेदपारायण का फल होताहै वहां स्नानकर देवता पितरों का तर्पण करे तो आठ अग्निष्टोमयज्ञ का फल होताहै सुग्रीवतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य जातिस्मर होता है इसलिये अवश्यही सुग्रीवतीर्थ में स्नान करना चाहिये यह सुग्रीवतीर्थ का माहात्म्य कहा अब नलतीर्थ का वैभव वर्णन करते हैं नलतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य सब पापों से निवृत्त हो अग्निष्टोम आदि यज्ञों का फल पाय स्वर्ग में निवास करता है तीन दिन उपवास करे और नलतीर्थ में देवता और पितरों का तर्पण करे तो अति-रात्र अश्वमेध आदि यज्ञके फलको पाय सूर्यके तुल्य प्रकाशित होता है अब नीलतीर्थ का माहात्म्य कहते हैं अग्नि के पुत्र नील ने वह तीर्थ बनाया है नीलतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य सब पापों से मुक्त हो बहुत स्वर्ण-यज्ञ का सौगुणा फल पाय अग्निलोक को जाता है गवाक्षतीर्थ में स्नान करे तो कभी नरक का भय न होय अङ्गदतीर्थ में स्नान करने से मनुष्य देवत्व को प्राप्त होता है इसप्रकार गज, गवय, शरभ, कुमुद, पनसआदि वानरों के बनाये तीर्थ गन्धमादन में हैं उनमें स्नान करने से मोक्ष प्राप्त होता है विभीषण के बनाये तीर्थ में स्नान करे तो पाप, दुःख, रोग, कुम्भी-पाक आदि नरकों का भय दुःस्वप्न दारिद्र्य आदि नाश को प्राप्त होते हैं वहां स्नान करनेहारा मनुष्य सर्वपापों से छूट वैकुण्ठ को जाता है विभी-षण के मन्त्रियों ने चार तीर्थ बनाये हैं उनमें स्नान करने से सब पाप निवृत्त होते हैं गन्धमादनपर्वत में रामनाथ महादेव का सेवन करने के

लिये सरयूनदी वहां निवास करती है उसमें स्नान करने से सब यज्ञ, तप, तीर्थ, दान आदि का फल प्राप्त होता है दशहज़ार कोटि तीर्थ गन्धमादन में निवास करते हैं गङ्गाआदि नदी सातो समुद्र ऋषियों के आश्रम पुण्यवन शिव विष्णु आदि क्षेत्र सब गन्धमादन में निवास करते हैं तेंतीसकोटि देवता, पितर, मुनि, यक्ष, किन्नर आदि सब रामसेतु में निवास करते हैं सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह गन्धमादन के सब तीर्थों का माहात्म्य हमने वर्णन किया इस अध्याय को जो पुरुष पढ़े अथवा सुने वह सब पापों से छूट मोक्ष को प्राप्त होता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये सापाञ्च्यात्थ्यांभ्मृणमोचनादिसकलतीर्थनिरूपणं नाम द्विचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४२ ॥

तेंतालीसवां अध्याय ॥

रामेश्वर का माहात्म्य अष्टविध भक्ति का वर्णन रामेश्वर के पूजन आदि का फल ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम रामनाथ का माहात्म्य वर्णन करते हैं जिसके सुनने से मनुष्य सब पापों से छूट जायँ रामचन्द्रजी के स्थापन किये लिङ्ग का जो मनुष्य दर्शन करे वह मुक्ति पाता है सत्ययुग में जो पुण्य दश वर्ष में साधन करसक्के थे वह त्रेतायुग में एक वर्ष करके द्वापर में एक मास करके और कलियुग में एक दिन करके सिद्ध होसक्का है वह पुण्य कोटिगुण एक २ निमेष में रामनाथ के दर्शन से प्राप्त होता है रामेश्वरलिङ्ग में सब तीर्थ, सब देवता, ऋषि, पितर, मुनि आदि निवास करते हैं नित्य त्रिकाल जो रामेश्वर का स्मरण अथवा कीर्तन करते हैं वे सब पापों से छूट सच्चिदानन्दस्वरूप साम्ब शिव में लीन होते हैं कभी उन मनुष्यों को यमयातना नहीं होती जो रामनाथलिङ्ग का एक बार भी पूजन करें वे मनुष्य नहीं साक्षात् रुद्र हैं जो रामेश्वर का पूजन न करें वे कभी संसार के दुःख से नहीं छूटते जो रामेश्वर का स्मरण करता रहे उसको दान व्रत तप यज्ञआदि करने की कुछ अपेक्षा नहीं जो रामेश्वर का स्मरण न करें वे अज्ञानी जड़ मूक बधिर अन्ध आदि होते हैं और उनके धन सन्तान क्षेत्र आदि की सदा हानि होती है रामेश्वरलिङ्ग

के दर्शन किये पीछे गया प्रयाग काशी आदि तीर्थों में जाने का कुछ प्रयोजन नहीं जो पुरुष अतिदुर्लभ मनुष्यजन्म पाय रामेश्वर का दर्शन और पूजन करते हैं उनका जन्म सफल है रामेश्वरलिङ्ग का पूजन करनेहारे मनुष्य को ब्रह्मा विष्णु इन्द्र आदि देवता की कुछ आकांक्षा नहीं रहती रामेश्वर को जो मनुष्य प्रणाम प्रदक्षिणा आदि करें वे कभी दुःख नहीं देखते और यमलोक को भी नहीं जाते हजारों ब्रह्महत्या आदि पाप रामेश्वर का दर्शन करतेही विलय को प्राप्त होजाते हैं जो मनुष्य स्वर्गसुख भोगना चाहें वे सदा रामेश्वर का पूजन करें करोड़ों जन्मों के किये पाप रामेश्वर के दर्शन करतेही नाश को प्राप्त होजाते हैं लोभ से भय से संसर्ग से जो मनुष्य एक वार भी रामेश्वर का स्मरण अथवा पूजन करते हैं वे कभी दोनों जन्मों में दुःख नहीं पाते रामेश्वर का कीर्तन और पूजन करने से अवश्यही शिवसायुज्य प्राप्त होता है जिस भांति अग्नि काष्ठ को दग्ध करदेता है इसी प्रकार रामेश्वर का दर्शन पापों को भस्म करता है रामेश्वर की भक्ति आठ प्रकार की है रामेश्वर के भक्तों में स्नेह रखना, पूजा देखकर प्रसन्न होना, आप पूजन करना, रामेश्वर के अर्थ देह की चेष्टा करना, रामेश्वरकथा सुनने में आदर, रामेश्वरस्मरण से शरीर में रोमाञ्च और अश्रुपात आदि होना, रामेश्वर का स्मरण करते रहना और रामेश्वर के आश्रय से जीना यह आठ प्रकार की भक्ति म्लेच्छ में भी हो तो वह मुक्ति का भागी होता है देवता में अनन्यभक्ति ब्रह्मज्ञान और वेदान्त शास्त्र श्रवण से जितेन्द्रिय मुनीश्वरों को प्राप्त होती है वह मुक्ति विना ज्ञान विना वैराग्य और विना कायक्लेश के सब वर्ण और सब आश्रम के मनुष्यों को रामेश्वर के दर्शनमात्र से मिलसक्ती है कृमि, कीट, देवता, मनुष्य, बड़े तपस्वी मुनि रामेश्वर का दर्शन करने से तुल्यही गति पाते हैं पापी पुरुष पाप का भय न करें और पुण्य करनेहारे पुण्य का गर्व न रक्खें रामेश्वरदर्शन किये पीछे सब समान हैं जो भक्ति से रामेश्वर का दर्शन करे उसकी तुल्यता चार वेद जाननेहारा ब्राह्मण भी नहीं करसक्ता रामेश्वर का भक्त चाण्डाल भी मिले तो वेदवेत्ता ब्राह्मण को छोड़ सब दान

उसको देने चाहियें जो गति ऊर्ध्वरेता योगीश्वरों की होती है वह ही रामेश्वरदर्शन करनेहारों की होती है रामेश्वर में बसनेवाले सब मनुष्य मरण के अनन्तर साक्षात् शिवस्वरूप होते हैं रामेश्वर को जो मनुष्य यात्रा करें उनके एक २ पद में अश्वमेध का फल होता है रामेश्वर में जो एक ग्रास भर अन्न भी ब्राह्मण को देवे वह सप्तद्वीपवती भूमि के दानफल को पाता है रामनाथ को जो पुरुष भक्ति से पत्र फल जल अर्पण करे उस की सदा रामनाथ महादेव रक्षा करते हैं रामनाथ का पूजन भक्ति स्मरण स्तुति आदि सब अतिदुर्लभ हैं जो पुरुष भक्ति से रामनाथ की शरण में प्राप्त होते हैं वे दोनों लोकों में लाभ और जय पाते हैं जिसका चित्त दिन रात रामनाथ में लगा रहे वह धन्य है जो रामेश्वर का पूजन नहीं करते वे भोग मोक्ष नहीं पाते पूजन करनेहारेही भुक्ति और मुक्ति पाते हैं रामेश्वर पूजन से अधिक कोई पुण्य नहीं है जो पुरुष रामेश्वर के साथ द्वेष करे वह दशहजार ब्रह्महत्याओं से लिप्त होता है, और उसके साथ सम्भाषण-मात्र करने से नरक में वास होता है सब देव और यज्ञ रामनाथ के ही हैं इस कारण सबको छोड़ रामनाथ की शरण में जाना चाहिये रामनाथ की शरण में प्राप्त हुये पुरुष सब पापों से छूट शिवलोक को जाते हैं सब यज्ञ, तप, दान, तीर्थस्नान आदि करने से जो फल मिलता है उससे कोटिगुणा फल रामेश्वर के दर्शन से होता है दो घड़ी रामनाथ का स्मरण करे तो सौपीढ़ी समेत शिवलोक में प्राप्त होता है जो दिनभर रामनाथ का दर्शन करे वह सब संसार सुख भोग अन्त में रुद्र बनता है जो प्रभात उठ रामनाथ का स्मरण करे उसको साक्षात् शिव जानना चाहिये रामनाथ के दर्शन करनेहारे पुरुष के दर्शन करने से सब पाप निवृत्त होजाते हैं मध्याह्न को रामनाथ का दर्शन करे तो हजारों सुरापानपातक नष्ट होते हैं सायंकाल को दर्शन करने से गुरुदारगमनपातक निवृत्त होते हैं सायं-काल के समय उत्तम स्तोत्रों से रामेश्वर की स्तुति करे तो हजार सुवर्ण-स्तेयपातक नाश को प्राप्त होते हैं धनुष्कोटि में स्नान और रामेश्वर का दर्शन एक बार भी करलेवे तो गङ्गाआदि तीर्थों की कुछ अपेक्षा नहीं रहती

है जो वस्तु रामनाथ की सेवा से न प्राप्त होय वह किसी प्रकार से भी नहीं प्राप्त होसक्ती है जो कभी रामनाथ का दर्शन न करे उसको वर्णसंकर जानना चाहिये जो प्रभात उठ तीनबार रामनाथ शब्द को उच्चारण करे उस का पूर्व दिन का किया पाप निवृत्त होजाता है रामनाथ के होते भी मनुष्य क्यों याचना करते फिरते हैं रामनाथ की कृपा होने से सब क्लेश निवृत्त होजाते हैं जिसप्रकार सूर्योदय होतेही अन्धकार प्राणत्याग के समय जो पुरुष रामनाथ का स्मरण करे वह फिर जन्म नहीं लेता और साक्षात् शिव होजाता है जो पुरुष (हे रामनाथ! हे करुणानिधे! हे भक्तवत्सल!) इत्यादि वाक्य उच्चारण किया करे उसको कभी कलियुगकी बाधा नहीं होती और वह माया में भी लिप्त नहीं होता और काम क्रोध आदि भी उसको पीड़ा नहीं देते जो पुरुष काष्ठ से रामनाथ का मन्दिर बनावे वह तीनकोटि कुलसहित स्वर्ग को जाता है ईंटों से बनावे तो वैकुण्ठ पावे पत्थर से मन्दिर बनावे तो ब्रह्मलोक को जावे और स्फटिकआदि उत्तम शिलाओं से रामनाथ का मन्दिर बनावे तो उत्तम विमान में बैठ शिवलोक को जावे ताम्र करके रामनाथ का मन्दिर बनावे तो शिवसालोक्य पावे चांदी करके बनावे तो शिवसायुज्य मिले और सुवर्ण का मन्दिर बनवावे तो शिवसारूप्य पावे धनवान् सुवर्ण का बनवावे और दारिद्र्य पुरुष मृत्तिका का मन्दिर बनवावे तो भी दोनों को तुल्यही फल मिलता है रामनाथ के स्नान कराने के समय और तीनकाल आरती के समय जो पुरुष अनेक प्रकार के बाजे बजावें वे सब पापों से छूट रुद्रलोक को प्राप्त होते हैं जो पुरुष रामनाथ के स्नान समय में रुद्राध्याय, चमक, पुरुषसूक्त, त्रिसुपर्ण, पञ्चशान्ति, पवमान आदि का पाठ करे वह कभी नरक नहीं देखता गोदुग्ध दधि घृत पञ्चगव्य से जो रामनाथ को स्नान करावे वह नरक नहीं देखता घृत से स्नान करावे तो करोड़ों जन्म के पाप निवृत्त होते हैं दुग्ध से स्नान करावे तो इकीस कुल सहित शिवलोक को जाय दही से स्नान करावे तो विष्णुलोक में प्राप्त होय तिलतैल से जो रामेश्वरलिङ्ग को अभ्यङ्ग करावे वह कुबेर के समीप निवास करता है इक्षुरस से जो भक्तिपूर्वक एक बार भी रामनाथको स्नान

करावे वह चन्द्रलोक को जाता है बड़हर और आम्र के रस से स्नान करावे वह पितृलोक में निवास करता है नारिकेल के जल से स्नान करावे तो ब्रह्महत्या आदि पाप निवृत्त होते हैं पकेकेलों से रामनाथलिङ्ग को लेपन करे तो सब पापों से छूट वायुलोक को जाय वस्त्र से छनेहुये जल करके रामनाथ को स्नान करावे तो वरुणलोक में निवास करे चन्दनयुक्त जल से स्नान करावे तो गन्धर्वलोक पावे कमलआदि पुष्पों करके सुगन्धित और सुवर्णयुक्त जल से स्नान करावे तो इन्द्र के समीप निवास करे पाटल उत्पल कह्लार आदि से वासित जल करके स्नान करावे तो सब पापों से छूटे और भी सुगन्ध पुष्पों करके वासित जल से स्नान कराने से शिवलोक की प्राप्ति होती है इलायची कपूर आदि से सुगन्ध जल करके रामेश्वर को स्नान करावे तो अग्निलोक में जाय सुखपूर्वक निवास करे रामनाथ के अभिषेक के लिये जो मृत्तिका के घट देवे वह सुखपूर्वक सौ वर्ष आयुर्दाय भोगता है ताम्र के घट देवे तो स्वर्ग को जाय चांदी के कुम्भ देवे तो ब्रह्मलोक पावे सुवर्ण के कलश देने से शिवलोक मिले और रत्नकुम्भ अभिषेक के लिये देवे तो शिवजी के समीप निवास करे जो दूध देनेहारी गौ रामेश्वर के अर्पण करे वह अश्वमेध यज्ञका फल पाय शिवलोक में निवास करता है स्नान के समय रामनाथ और धनुष्कोटि का स्मरण करे वह सेतुस्नान का फल पाता है जो रामनाथ के मन्दिर को कली पुतवाकर श्वेत करदेवे उसके पुण्य फल को हम सौ वर्ष में भी नहीं वर्णन करसके जो रामनाथ के मन्दिर का जीर्णोद्धार करे वह ब्रह्महत्या आदि पापों से छूटता है और नया मन्दिर बनाने से भी सौगुणा अधिक पुण्य पाता है रामनाथ के आगे जो दीप जलावे वह अविद्यारूप अन्धकार से छूट ब्रह्मसायुज्य को प्राप्त होता है घृत, तेल, मूंग, चावल, गुड़, खांड़ आदि जो रामेश्वर के अर्पण करे वह इन्द्र के समीप निवास करता है रामनाथ के दर्शन, स्पर्श, स्मरण, पूजन आदि से सब पाप नाश को प्राप्त होते हैं जो पुरुष दर्पण और घण्टा रामनाथ को चढ़ावे वह उत्तम विमान में बैठ शिवलोक को जाता है भेरी, मृदङ्ग, पणव, वंशी आदि बाजे जो रामनाथ

के अर्पण करे वह भी उत्तम विमान में बैठ शिवलोक को जाय रामनाथ के निमित्त थोड़ा भी देवे वह अनन्तगुण होजाता है जन्मभर जो रामेश्वर क्षेत्रमें रहे वह अवश्यही मुक्ति पाता है आयुर्दाय, यौवन, सम्पत्ति, पुत्र, स्त्री आदि कोई पदार्थ जगत् में स्थिर नहीं राजा धन क्षेत्रआदि को हरलेते हैं इसलिये इन सबका मोह छोड़ रामेश्वर की शरण में प्राप्त होय जो पुरुष उत्तम ग्राम रामेश्वर के अर्पण करे वह साक्षात् शिवस्वरूपही होजाता है सब पात्रों में उत्तम पात्र रामेश्वर हैं इसलिये सब पदार्थ रामेश्वर के अर्पण करने चाहिये रामनाथ के दर्शन पर्यन्तही सब पातक रहते हैं पंखा, ध्वजा, छत्र, चामर, चन्दन, गुग्गुल, ताम्र, चांदी, सोने आदि के घट और भी उत्तम २ सामग्री जो पुरुष रामेश्वर के अर्पण करें वे जन्मान्तर में चक्रवर्ती राजा होते हैं रामेश्वर के पूजन के लिये जो भक्ति से पुष्प लाते हैं वे अश्वमेधादि यज्ञों का फल पाते हैं रामेश्वर का दर्शन, श्रवण, पूजन, स्मरण आदि करनेहारे पुरुषों को कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं जो पुरुष रामनाथ को जाय उसके पातक भयभीत होजाते हैं रामनाथ का दर्शन करनेहारे पुरुषों को वेद, शास्त्र, तीर्थ, यज्ञ आदि से कुछ प्रयोजन नहीं चन्दन, केसर, कस्तूरी, गुग्गुल, राल आदि धूप जो पुरुष रामेश्वर के अर्पण करे वह धनाढ्य और वेद शास्त्र का जाननेहारा होता है मोतियों के हार और उत्तम २ वस्त्र जो रामनाथ के अर्पण करे वह कभी दुर्गति नहीं भोगता गङ्गाजल से जो रामनाथ को स्नान करावे उसका शिवजी भी सत्कार करते हैं जबतक वृद्धावस्था न प्राप्त होय इन्द्रिय शिथिल न होजायँ और मृत्यु न आपहुँचे तबतक रामेश्वरकी शरणमें प्राप्त होजाना चाहिये सब पुराण और धर्मशास्त्रों में रामेश्वरकी पूजाके तुल्य कोई धर्म नहीं है और रामेश्वर का सेवन करनेहारे पुरुष बहुत कालतक संसारसुख भोगकर अन्त में मुक्ति पाते हैं सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह रामनाथ का थोड़ा सा वैभव हम ने वर्णन किया जो पुरुष इसको भक्ति से पढ़े अथवा श्रवण करे वह धनुष्कोटि स्नान और रामनाथ के दर्शन करने का फल पाय सद्गति को प्राप्त होता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां रामेश्वरपूजनादिफलनिरूपणं नामत्रयश्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४३ ॥

चवालीसवां अध्याय॥

रावण आदि के वध की कथा व रामेश्वर के स्थापन का कारण॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सर्वपुराणज्ञ, सूतजी! आपके मुख-कमल से यह सेतुमाहात्म्य और रामेश्वर का वैभव सुन हम कृतार्थ हुये अब आप यह वर्णन करें कि श्रीरामचन्द्रजी ने रामेश्वर का स्थापन किस प्रकार किया और किस समय किया यह मुनियों का प्रश्न सुन सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! जिसलिये गन्धमादनपर्वत में रामचन्द्रजी ने रामेश्वर का स्थापन किया इस वर्णन करते हैं रामचन्द्रजी की भार्या सीता को रावण हरलेगया तब वानरों की सेनासहित रामचन्द्रजी महेन्द्र पर्वत पर पहुँचे और समुद्र को देखा और सेतु बांध पूर्णमासी के दिन सायंकाल के समय समुद्र पार बेलापर्वतपर पहुँचे रावण भी लङ्का में अपने महल के ऊपर बैठा था सुग्रीव ने जाकर रावण का मुकुट उतारलिया रावण भी मुकुट उतरने से लज्जित हो महल के भीतर चलागया रामचन्द्रजी ने सेना का डेरा किया तब रावण के अनुचर पर्वण, पूतना, जम्भ, खर, क्रोधवश, हरिप्रारुज, चारुज, प्रहस्त आदि अदृश्य होकर रामचन्द्रजी की सेना में आये परन्तु विभीषण ने उनको प्रकट करदिया इसलिये वे सब वानरों के हाथ से मारे गये यह बात रावण न सहसका इससे युद्ध करने निकला तब रामचन्द्र भी रावण के साथ युद्ध करने निकले और युद्ध होनेलगा लक्ष्मण मेघनाद का, सुग्रीव विरूपाक्ष का, अङ्गद खर्वट का, नल पौण्ड्र का, पनस पुटश का परस्पर युद्ध प्रवृत्त हुआ और भी वानर और राक्षसों का द्वन्द्वयुद्ध होनेलगा वानरों ने बहुत से राक्षस मारे तब रावण के पुत्र इन्द्रजित् ने रामचन्द्र और लक्ष्मण को नागपाश से बांधा उस समय गरुड़ ने आय उनको छुटाया प्रहस्त और विभीषण का युद्ध होता था प्रहस्त ने बड़े वेग से विभीषण पर गदा का प्रहार किया परन्तु विभीषण हिमालयपर्वत की भांति स्थिर रहा फिर विभीषण ने आठ घण्टाओं करके शोभित शक्ति प्रहस्तपर चलाई उसके लगते ही प्रहस्त का शिर उड़ गया और वृक्ष की भांति भूमिपर गिरा उसको गिरे देख धूम्राक्ष नाम दैत्य

वानरसेना की ओर चला उसको देख भय से वानरसेना भगी तब हनुमान् जी ने उसको मारगिराया यह सब वृत्तान्त राक्षसों ने रावण से कहा तब रावण ने कुम्भकर्ण को जगाया और युद्ध करने भेजा उसको लक्ष्मण ने ब्रह्मास्त्र से मारा दूषण के छोटेभाई वज्रवेग और प्रमाथी हनुमान् और नील ने मारे जो रावण के तुल्य पराक्रमी थे वज्रदंष्ट्र को विश्वकर्मा के पुत्र नल ने और अकम्पन को कुमुद नाम वानर ने यमलोक को भेजा अतिकाय और त्रिशिरा को लक्ष्मण ने देवान्तक और नरान्तक को सुग्रीव ने कुम्भ-कर्ण के दोनों पुत्रों को हनुमान् ने मकराक्ष को विभीषण ने मारा तब रावण ने अपने पुत्र इन्द्रजित् को युद्ध की आज्ञा दी वह भी जाकर अदृश्य हो आकाश में स्थित होकर वानरों का संहार करनेलगा कुमुद, अङ्गद, सुग्रीव, नल, जाम्बवान् आदि सहित वानर भूमिपर गिरे रामचन्द्रजी को भी बड़ा क्षोभ हुआ तब विभीषण ने प्रार्थना की कि हे महाराज ! कुबेर का भेजा हुआ एक यक्ष जल लेकर आया है उस जल को नेत्र में लगाने से अदृश्य भूत देख पड़ते हैं यह विभीषण का वचन सुन वह जल रामचन्द्रजी ने लिया और लक्ष्मण, सुग्रीव, हनुमान्, अङ्गद, मैन्द, द्विविद आदि सबको दिया उन सब ने नेत्र धोये तब आकाश में इन्द्रजित् को देखा लक्ष्मण और इन्द्रजित् का घोर युद्ध होनेलगा जैसा इन्द्र और प्रह्लाद का पूर्वकाल में हुआ था तीसरे दिन लक्ष्मण ने इन्द्रजित् को मारा और उसके साथ जो सेना थी उसका वानरों ने संहार किया प्रिय पुत्र के मरजाने पर क्रोध और शोक करके पीड़ित रावण रथ में बैठ युद्ध करने आया रावण ने जानकी को मारना चाहा था परन्तु विन्ध्य ने उसको निवारण किया इतने में इन्द्र का सारथि मातलि रामचन्द्रजी के लिये रथ लाया तब रामचन्द्रजी इन्द्र के भेजेहुये उस रथ में बैठ रावण से युद्ध करनेलगे और ब्रह्मास्त्र से रावण को मारा रावण के मारने से सब ऋषि रामचन्द्रजी को आशीर्वाद देनेलगे देवता सिद्ध विद्याधर स्तुति और पुष्पवृष्टि करनेलगे रामचन्द्रजी भी लङ्का का राज्य विभीषण को दे सीता और लक्ष्मण सहित पुष्पक विमान पर चढ़ गन्धमादनपर्वत में पहुँचे वहां आय सीता का

अग्नि में शोधन किया वहांही सीता, लक्ष्मण, हनुमान्, विभीषण, सुग्रीव, अङ्गद आदि सहित रामचन्द्रजी स्थित थे तब दण्डकारण्य के सब मुनि अगस्त्यमुनि सहित वहां आये और रामचन्द्रजी की स्तुति करनेलगे ॥

मुनय ऊचुः ॥ नमस्ते रामचन्द्राय लोकानुग्रहकारिणे ॥ अरावणं जगत्कर्तुमवतीर्णाय भूतले ॥ १ ॥ ताटकादेहसंहर्त्रे गाधिजाध्वररक्षिणे ॥ नमस्ते जितमारीच सुबाहुप्राणहारिणे ॥ २ ॥ अहल्यामुक्तिसंदायिपादपङ्कजरेणवे ॥ नमस्ते हरकोदण्डलीलाभञ्जनकारिणे ॥ ३ ॥ नमस्ते मैथिलीपाणिग्रहणोत्सवशालिने ॥ नमस्ते रेणुकापुत्रपराजयविधायिने ॥ ४ ॥ सह लक्ष्मणसीताभ्यां कैकेय्यास्तु वरद्वयात् ॥ सत्यं पितृवचः कर्तुं नमोवनमुपेयुषे ॥ ५ ॥ भरतप्रार्थनादत्तपादुकायुगलाय ते ॥ नमस्ते शरभङ्गस्य स्वर्गप्राप्त्येकहेतवे ॥ ६ ॥ नमोविराधसंहर्त्रे गृध्रराजसखाय ते ॥ मायामृगमहाक्रूरमारीचाङ्गविदारिणे ॥ ७ ॥ रावणापहृतासीतायुद्धत्यक्तकलेवरम् ॥ जटायुषं तु संदह्य तत्कैवल्यप्रदायिने ॥ ८ ॥ नमः कबन्धसंहर्त्रे शबरीपूजिताङ्घ्रये ॥ प्राप्तसुग्रीवसख्याय कृतवालिवधाय ते ॥ ९ ॥ नमः कृतवनेसेतुं समुद्रे वरुणालये ॥ सर्वराक्षससंहर्त्रे रावणप्राणहारिणे ॥ १० ॥ संसाराम्बुधिसंतारपोतपादाम्बुजायते ॥ नमोभक्तार्तिसंहर्त्रे सच्चिदानन्दरूपिणे ॥ ११ ॥ नमस्ते रामभद्राय जगतामृद्धिहेतवे ॥ रामादिपुण्यनाम्ने च जगतां पापहारिणे ॥ १२ ॥ नमस्ते सर्वलोकानां सृष्टिस्थित्यन्तकारिणे ॥ नमस्ते करुणामूर्ते भक्तरक्षणदीक्षित ॥ १३ ॥ ससीताय नमस्तुभ्यं विभीषणसुखप्रद ॥ लङ्केश्वरवधाद्राम पालितं हि जग-

व्यथा ॥ १४ ॥ रक्ष रक्ष जगन्नाथ पाह्यस्माञ्जानकीपते ॥

इस प्रकार मुनियों ने स्तुति की सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जो पुरुष इस स्तोत्र को तीन काल पढ़े वह भोग और मोक्ष पाता है यात्रा के समय पढ़े तो मार्ग में किसीप्रकार का भय नहीं होता इस स्तोत्र के पाठ से भूत, वेताल, रोग, पाप, दुःखआदि क्षय को प्राप्त होते हैं और पुत्र धन मोक्ष आदि सब पदार्थ इस स्तोत्र के पाठ से मिलते हैं मुनियों की कीहुई स्तुति सुन रामचन्द्रजी ने कहा कि हे मुनीश्वरो! सब जीव शुद्धि के लिये हमारी प्राप्ति चाहते हैं और जो हमारे दर्शन पावे वह मुक्त होजाता है तो भी हम भक्ति करके शान्तचित्त और जगत् के हित में प्रवृत्त साधुवों को प्रणामही करते हैं हम ब्राह्मणों के भक्त हैं इसलिये सदा ब्राह्मणों का सेवन करते हैं अब एक बात आप से पूछते हैं आप सब कृपाकरि हम से कहें पुलस्त्यमुनि के पुत्र रावण के वध से जो पाप हमको हुआ उसका आप प्रायश्चित्त बतावें जिसके करने से हम निष्पाप होजायँ यह रामचन्द्रजी का वचन सुन मुनि बोले कि हे महाराज! आप जगत्प्रभु हैं आप को कुछ पातक नहीं तो भी लोकों के कल्याण के लिये और पापकी शङ्का निवृत्त करने के अर्थ इस गन्धमादनपर्वत में आप शिवलिङ्ग स्थापन करें शिवलिङ्ग स्थापन के फल को ब्रह्माजी भी नहीं वर्णन करसके मनुष्य की तो क्या कथा है? आप के स्थापन किये लिङ्ग के दर्शन का फल काशी विश्वनाथ के दर्शन फल से कोटिगुणित होगा और आपके नामसे यह लिङ्ग प्रसिद्ध होगा इसलिये आप विलम्ब न करें यह मुनियों का वचन सुन हनुमान् को रामचन्द्रजी ने आज्ञा दी कि हे वायुपुत्र! शीघ्रही कैलास में जाय एक उत्तम शिवलिङ्ग ले आवो हनुमान्जी भी रामचन्द्रजी की आज्ञा पाय भुजाओं का शब्दकर गन्धमादन को कँपाय आकाश को उड़े और क्षणमात्र में कैलास पर्वतपर पहुँचे परन्तु वहां लिङ्गरूप महादेव न मिले तब लिङ्ग प्राप्ति के लिये हनुमान्जी ऊर्ध्वबाहु जितेन्द्रिय हो श्वास रोक कर तप करनेलगे कुछ काल के अनन्तर प्रसन्न हो शिवजी ने हनुमान् को एक उत्तम लिङ्ग दिया परन्तु हनुमान्जी के आगमन में विलम्ब होने

से मुनीश्वरों ने रामचन्द्र से कहा कि मुहूर्तकाल आगया और हनुमान् शिवलिङ्ग लेकर आया नहीं इसलिये सीताजी ने लीला करके जो बालू का शिवलिङ्ग बनाया है उसको आप स्थापन कीजिये यह मुनियों का वचन रामचन्द्रजी ने अङ्गीकार किया और ज्येष्ठमास शुक्ल पक्ष दशमी तिथि बुधवार हस्तनक्षत्र व्यतीपातयोग गरकरण आनन्दयोग कन्या के चन्द्र और वृष के सूर्य में सीतासहित रामचन्द्रजी ने रामेश्वरलिङ्ग का स्थापन किया और भक्ति से पूजन किया तब पार्वती सहित शिवजी ने प्रत्यक्ष हो रामचन्द्रजी से कहा कि हे रामचन्द्रजी ! आप के स्थापन किये इस लिङ्ग का जो पुरुष दर्शन करेंगे वे महापातकों से निवृत्त होंगे धनुष्कोटितीर्थ में स्नान कर जो रामेश्वर का दर्शन करेंगे उनके अनेक जन्मों के पाप नाश को प्राप्त होंगे यह शिवजी ने वर दिया रामेश्वर के आगे रामचन्द्रजी ने नन्दिकेश्वर को स्थापन किया और धनुष् के अग्र करके भूमि को भेदन कर शिवजी के अभिषेक के लिये एक कूप बनाया उसका नाम धनुष्कोटि हुआ जिसका माहात्म्य पहिले वर्णन करचुके हैं उस तीर्थ के जल से शिवजी को स्नान कराया फिर सब देवता ऋषि गन्धर्व अप्सरा और वानरों ने एक २ शिवलिङ्ग स्थापन किया सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! जिस प्रकार रामचन्द्रजी ने शिवलिङ्ग स्थापन किया वह हमने वर्णन किया जो इस अध्याय को पढ़े अथवा सुने वह रामेश्वर के दर्शन का फल पाय शिवसायुज्य पाता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां रावणादिवधे रामेश्वरस्थापन-कारणंनाम चतुश्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४४ ॥

पैंतालीसवां अध्याय ॥

हनुमान्जी की अद्भुत कथा व हनुमान्जी के प्रति रामचन्द्रजी का ब्रह्मज्ञान उपदेश ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! उसी अवसर में हनुमान्जी भी उत्तम शिवलिङ्ग लेकर आपहुँचे और रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण, सुग्रीव आदि को प्रणाम किया और देखा कि रामचन्द्रजी ने शिवलिङ्ग स्थापन करदिया तब हनुमान्जी को बड़ा क्रोध हुआ और कहनेलगे कि हे

रामचन्द्रजी ! मेरा जन्म वृथा है मेरा ऐसा पुत्र किसी स्त्री के न होय जो इतना दुःख भोगता फिरे पहिले तो आपकी सेवा में खिन्न हुआ फिर राक्षसों के साथ युद्ध में अतिदुःख भोगा और सब से यह अधिक क्लेश हुआ कि आपने मेरा अनादर किया सुग्रीव ने भार्या के लिये आपकी सेवा की और विभीषण ने राज्य के लिये परन्तु मैंने किसी प्रयोजन के लिये आप का सेवन नहीं किया विना हेतु दिनरात आपका सेवन करता हूं हज़ारों वानरों को बचा आपने मुझे आज्ञा दी तब मैं कैलास में गया वहां तपकर शिवजी को प्रसन्न किया और अति उत्तम शिवलिङ्ग लेकर आपके समीप पहुँचा परन्तु आप ने और ही लिङ्ग स्थापन करदिया और हमारा यह परिश्रम वृथा हुआ यह मेरा शरीर केवल भूमि का भार है मैं मन्दभाग्य इस दुःख को नहीं सहसक्ता क्या करूं और कहां जाऊं मैं शरीर त्यागता हूं तब यह अनादर का दुःख निवृत्त होगा यह कहकर हनुमान्जी रामचन्द्रजी के चरणों पर गिरपड़े तब उनका दुःख निवृत्त करने के लिये हँसकर रामचन्द्र जी कहनेलगे कि हे हनुमन् ! हम अपना और पराया सब व्यवहार जानते हैं अपने कर्मसेही जीव उत्पन्न होते हैं और मरते हैं अपने कर्मों से ही जीव नरक को जाते हैं और परमात्मा निर्गुण है हे हनुमन् ! इस प्रकार तत्त्व का निश्चय कर शोक को त्याग दे लिङ्गत्रय से मुक्त निराश्रय निराकार निरञ्जन ज्योतिःस्वरूप आत्मा को देख तत्त्वज्ञान के बाधक शोक को मतकर सदा तत्त्वज्ञान में निष्ठा रख स्वयंप्रकाश आत्मा का सदा ध्यान कर देह में ममता छोड़ धर्म को भज हिंसा को त्याग साधु पुरुषों का सेवनकर इन्द्रियों को जीत परनिन्दा को छोड़ शिव विष्णु आदि देवताओं का सदा पूजनकर सत्य बोल शोक का त्यागकर प्रत्यक् ब्रह्म की एकता जान भले बुरे की भ्रान्ति छोड़ पदार्थों को उत्तम जानने से उनमें राग उत्पन्न होता है और पदार्थों को बुरा समझने से द्वेष होता है राग द्वेष के वश में होकर जीव अनेकप्रकार के धर्म अधर्म करते हैं जिनसे देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्षआदि योनियों में जन्म लेते हैं और स्वर्ग नरक को जाते हैं जिस शरीर के स्पर्श से चन्दन अगुरु कर्पूर आदि सुगन्ध द्रव्य मल

होजाते हैं वह शरीर क्योंकर उत्तम मानाजाय भक्ष्य भोज्य पदार्थ जिसके संग से विष्ठा होजाते हैं उत्तम शीतल जल जिसके संग से मूत्र होजाता है वह शरीर क्योंकर शोभन होसक्ता है श्वेतवस्त्र जिसके संग से मलिन होजाते हैं वह शरीर शोभन किस भांति होय हे हनुमन्! इस संसारसमुद्र में कोई सुख नहीं है पहिले जीव जन्म लेकर बालक होता है पीछे तरुण और वृद्ध होकर मृत्युवश होता है और फिर जन्म लेता है अज्ञान से जीव दुःख भोगता है और ज्ञान से सुख पाता है अज्ञान का नाश कर्म से नहीं होता केवल ज्ञान से होता है ज्ञान भी वेदान्तवाक्यों करके विरक्त पुरुष को होता है और को नहीं होसक्ता ज्ञान के अधिकारी को भी गुरुकृपा से ही ज्ञान होता है जिसके हृदय से सब संकल्प निवृत्त होजायँ वह परब्रह्म को पाता है और जीवन्मुक्त होता है जागते, सोते, बैठते, चलते, भोजन करते सब अवस्थाओं में काल जीवों का ग्रास करता है सब संग्रहोंका अन्त क्षय है सब उच्चता का अन्त गिरना है सब समागमों का अन्त वियोग है इसी प्रकार जीवन का अन्त मरण है पकेहुये फलों को जिस प्रकार गिरने का भय होता है इसी भांति जीवों को मरण का भय है जिस प्रकार बहुत दृढ़ भी घर कुछ काल में जीर्ण होकर गिरजाता है इसीप्रकार शरीर भी जीर्ण होकर मृत्युवश होता है हे हनुमन् ! नित्य दिन रात्रि व्यतीत होनेसे मनुष्यों की आयुर्दाय बीतती चलीजाती है इसलिये आत्मा का शोच कर और बातों का क्या शोच करताहै बैठरहो चाहे दौड़ते फिरो आयुर्दाय तो क्षीण होतीही है मृत्यु जीवों के साथही चलता है साथ ही बैठता है दूर देश को जावो तो भी साथही जाता है शरीर में बलि पड़जाती है शिर के बाल श्वेत होजाते हैं वृद्धावस्था में श्वास कास आदि अनेक रोग देह को जीर्ण करडालते हैं जिस प्रकार समुद्र में अनेक काष्ठ इकट्ठे होजाते हैं और फिर इधर उधर बिखर जाते हैं इसीप्रकार संसार में पुत्र, स्त्री, धन, बन्धु, गृह, क्षेत्र आदि पदार्थ इकट्ठे होजाते हैं और फिर चले भी जाते हैं जिस भांति मार्ग में कई पथिक साथ होजाते हैं और थोड़ी दूर साथ चल के अपने २ रास्ते लगते हैं इसी प्रकार पुत्र स्त्री आदि का समागम है

शरीर के साथही मृत्यु भी नियत कियाजाता है मृत्यु से बचने का कोई उपाय नहीं है जीव कर्म के वश होकर एक शरीर को त्याग दूसरे को धारता है कभी प्राणियोंका वास एक स्थानमें नहीं रहसक्ता है सब अपने २ कर्मवश से वियोग को प्राप्त होते हैं शरीर केही जन्म मरण होते हैं आत्मा के नहीं होते आत्मा सदा निर्विकार है इसलिये हे कपीश्वर ! सद्रूप निर्मल ब्रह्म का चिन्तन कर तेरे किये और हमारे किये कर्म में कुछ भेद मत समझ हमने जो लिङ्ग स्थापन किया उसको तू अपने लाये लिङ्ग का स्थापन समझ तेरे आगमन में विलम्ब होनेसे हमने सीता का बनाया बालू का लिङ्ग स्थापन करदिया इसमें तू कुछ दुःख और शोक मतकर कैलास से लायेहुये लिङ्ग को तू स्थापन कर यह लिङ्ग तीन लोक में तेरे नाम से प्रसिद्ध होगा प्रथम तेरे स्थापन किये लिङ्ग का दर्शन करके सब मनुष्य रामेश्वर का दर्शन करेंगे बहुतसे ब्रह्मराक्षस तैंने मारे हैं उस पाप की निवृत्ति के लिये अपने नाम से इस लिङ्ग को स्थापन कर साक्षात् शिवजी के दिये इस लिङ्ग का दर्शन कर जे रामेश्वर का दर्शन करेंगे वे कृतकृत्य होंगे जे दूर देश में रहकर भी इन दोनों लिङ्गों का स्मरण करेंगे वे सायुज्य मुक्ति पावेंगे जे पुरुष हनुमदीश्वर और रामेश्वर का दर्शन करेंगे वे सब यज्ञ और तप का फल पावेंगे हम ने, सीता ने, लक्ष्मण ने, तैंने, सुग्रीव ने, नल ने, नील ने, जाम्बवान् ने, विभीषण ने, इन्द्रादि देवताओं ने और शेषनागादि नागों नें जे लिङ्ग स्थापन किये इन ग्यारह लिङ्गों में सदा सदाशिवका सन्निधान रहेगा इसलिये अपने पाप की शुद्धि के लिये तू भी लिङ्ग स्थापन कर और जो तू हमारे स्थापन किये लिङ्ग को उखाड़सके तो हम तेरे लाये लिङ्ग को स्थापन करें परन्तु हमारे स्थापन किये लिङ्ग को कौन उखाड़ सक्ता है इस लिङ्ग की जड़ सातों पाताल भेदनकर नीचे चलीगई है इसलिये अपने लाये लिङ्ग को तू शीघ्र स्थापन कर शोक मत कर यह रामचन्द्रजी का वचन सुन हनुमान्जी ने विचार किया कि इस बालू के लिङ्ग को उखाड़ देना क्या बड़ी बात है इसलिये इसको उखाड़ अभी अपने लाये हुये लिङ्ग को स्थापन करता हूं यह मन में विचार सब

देवता मुनि वानर आदि के और रामचन्द्र लक्ष्मण सीताजी के देखते २ हनुमान्‌जी ने दोनों हाथों से उस लिङ्ग को पकड़ा और उखाड़ने के लिये बहुत बल किया परन्तु वह लिङ्ग न हिला तब किलकिला शब्द करके और पूंछ को भूमि में पटककर सब बल लगाया तौभी वह लिङ्ग न हिला फिर पूंछ में लिङ्ग को लपेटा और दोनों हाथ भूमि पर रख आकाश को हनुमान् जी उछले तब सातों द्वीपों सहित पृथ्वी कांपउठी परन्तु लिङ्ग नहीं उखड़ा और हनुमान्‌जी का पुच्छ लिङ्ग से छूटगया इसलिये एक कोसपर हनुमान्‌जी गिरे और उनके आंख, नाक, कान, मुख और गुदा से रुधिर गिरनेलगा उस रुधिर से रक्तकुण्ड बना हनुमान्‌जी को इस प्रकार गिरे देख सब जगत् में हाहाकार हुआ और रामचन्द्रजी लक्ष्मण सीता और वानरों सहित दौड़कर हनुमान्‌जी के समीप गये उस समय गन्धमादनपर्वत में राम लक्ष्मण ऐसे शोभित थे मानो रात्रि के समय तारागणों करके युक्त सूर्य और चन्द्रमा शोभित होयँ जायके हनुमान्‌जी को देखा कि मूर्च्छित हुये पड़े हैं और मुख से रुधिर बहता है शरीर चूर्ण होगया है उनको देख सब वानर हाहाकार कर मूर्च्छित हुये सीता ने अपने हाथ से हनुमान्‌जी को स्पर्श किया और रामचन्द्रजी हनुमान् को अपनी गोद में सुलाय अश्रुपात करते हुये हनुमान्‌जी के अङ्गों पर हाथ फेरनेलगे॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां हनुमत्कथानकंनामपञ्चचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ४५॥

छियालीसवां अध्याय॥

हनुमान्‌जी को रामचन्द्रजी ने जिसप्रकार आश्वासन किया उसका वर्णन हनुमान्‌जी का किया रामस्तोत्र और सीतास्तोत्र हनुमत्कुण्ड और हनुमदीश्वर महादेव का माहात्म्य वर्णन॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! रामचन्द्रजी कहनेलगे कि हे हनुमन्! पम्पासर के तटपर हम दीनदशा को प्राप्त होरहे थे उस समय तैंने हमारा आश्वासन किया और सुग्रीव से मैत्री कराई तेरे को देख हम माता पिता का भी स्मरण नहीं करते तैंने हमारे ऊपर अनेक उपकार किये हमारे प्रयोजन के लिये समुद्र उतरा मैनाकपर्वत को तलप्रहार किया नागों की माता सुरसा को जीता महाक्रूरा छाया ग्रहण करनेवाली

राक्षसी को मारा सायंकाल के समय सुवेलपर्वत पर पहुँच लङ्का को जीत रावण के महल में गया निर्भय होकर सारी रात्रि लङ्का में सीता को ढूंढ़ा कहीं सीता न देखी तब अशोकवनिका में गया वहां सीता को सन्देश दे और हमारे लिये सीता से चूड़ामणि लेकर अशोकवनिका के वृक्षों को तोड़ा और अस्सीहजार किन्नर नाम राक्षसों को हमारे अर्थ मारा जो राक्षस अतिबली थे फिर प्रहस्त के पुत्र जम्बुमाली को सात मन्त्रिपुत्रों को पांच सेनापतियों को और रावण के पुत्र अक्ष को तैंने युद्ध में मारा तब इन्द्रजित् तुझे बांधकर रावण की सभा में लेगया वहां तैंने रावण का अति अनादर किया और लङ्कापुरी को भस्म करके फिर ऋष्यमूकपर्वत में पहुँचा हे हनुमन्! हमारे अर्थ तैंने बहुत क्लेश भोगे अब तू भूमिपर गिरा है इसलिये हमको बहुत शोक है हे हनुमन्! जो तू मरजायगा तो हम भी अभी प्राण त्यागेंगे फिर हम को सीता से और लक्ष्मण भरत शत्रुघ्न से तथा राज्य से कुछ प्रयोजन नहीं हे वत्स! शीघ्र उठ हमारे भोजन के लिये कन्दमूल ले आ स्नान के लिये जल का कलश ला और हमारे शयन के लिये शय्या बिछाय मृगचर्म और दर्भ हमारे लिये ले आ ब्रह्मास्त्र से बँधेहुये हमको तैंने छुटाया औषध लाकर लक्ष्मण को जीवदान दिया तेरी सहायता से हमने रावण कुम्भकर्ण आदि बड़े पराक्रमी राक्षसों को मारा और सीता प्राप्त हुई हे वायुपुत्र! हे सीताशोकनाशक! हमको लक्ष्मण को और जानकी को अयोध्या में पहुँचाये विनाही क्यों त्याग करता है इस भांति हनुमान् का मुख देखतेहुये और दीन वचन कहतेहुये रामचन्द्रजी अश्रुपात करनेलगे और इतना अश्रुपात किया कि हनुमान् का शरीर आर्द्र होगया धीरे २ हनुमान् की भी मूर्च्छा खुली और देखा कि साक्षात् नारायण रावण के भय से लोकरक्षा के अर्थ मनुष्यरूप धारे जानकी लक्ष्मण करके सहित वानरों करके वेष्टित नीलमेघ के समान जिनका वर्ण कमल से नेत्र जटा-मण्डल करके शोभित देवता ऋषि पितर आदि करके स्तुत अतिदयालु श्री रामचन्द्रजी मुझे गोद में लिये बैठे हैं तब हनुमान्जी उठे और रामचन्द्रजी के चरणों में दण्डवत प्रणाम करके हाथ जोड़ भक्ति से स्तुति करनेलगे॥

हनुमानुवाच॥ नमो रामाय हरये विष्णवे प्रभविष्णवे॥ आदिदेवाय देवाय पुराणाय गदाभृते॥ १॥ विष्टरे पुष्पके नित्यं निविष्टाय महात्मने॥ प्रहृष्टवान [illegible] जाय ते॥ २॥ निष्पिष्टराक्षसेन्द्राय जगदिष्टविधायिने॥ नमः सहस्रशिरसे सहस्रचरणाय च॥ ३॥ सहस्राक्षाय शुद्धाय राघवाय च विष्णवे॥ भक्तार्तिहारिणे तुभ्यं सीतायाः पतये नमः॥ ४॥ हरये नारसिंहाय दैत्यराजविदारिणे॥ नमस्तुभ्यं वराहाय दंष्ट्रोद्धृतवसुंधर॥ ५॥ त्रिविक्रमाय भवते बलियज्ञविभेदिने॥ नमो वामनरूपाय महामन्दरधारिणे॥ ६॥ नमस्ते मत्स्यरूपाय त्रयीपालनकारिणे॥ नमः परशुरामाय क्षत्रियान्तकराय ते॥७॥ नमस्ते राक्षसघ्नाय नमो राघवरूपिणे॥ महादेवमहाभीममहाकोदण्डभेदिने॥ ८॥ क्षत्रियान्तकरक्रूरभार्गवत्रासकारिणे॥ नमोऽस्त्वहल्यासन्तापहारिणे चापहारिणे॥ ९॥ नागायुतबलोपेतताटकादेहदारिणे॥ शिलाकठिनविस्तारबालिवक्षोविभेदिने॥ १०॥ नमो मायामृगोन्मादकारिणेऽज्ञानहारिणे॥ दशस्यन्दनदुःखाब्धिशोषणागस्त्यरूपिणे॥ ११॥ अनेकोर्मिसमाधूतसमुद्रमदहारिणे॥ मैथिलीमानसाम्भोजभानवे लोकसाक्षिणे॥ १२॥ राजेन्द्राय नमस्तुभ्यं जानकीपतये हरे॥ तारकब्रह्मणे तुभ्यं नमो राजीवलोचन॥ १३॥ रामाय रामचन्द्राय वरेण्याय सुखात्मने॥ विश्वामित्रप्रियायेदं नमः खरविदारिणे॥ १४॥ प्रसीद देवदेवेश भक्तानामभयप्रद॥ रक्ष मां करुणासिन्धो रामचन्द्र नमोऽस्तु ते॥ १५॥ रक्ष मां वेदवचसामप्यगोचर राघव॥

हि मां कृपया राम शरणं त्वामुपैम्यहम्॥ १६॥ रघुवीर हामोहमपाकुरु ममाधुना॥ स्नाने चाचमने भुक्तौ जात्स्वप्नसुषुप्तिषु॥ १७॥ सर्वावस्थासु सर्वत्र पाहि मां रघुन्दन॥ महिमानन्तव स्तोतुं कः समर्थो जगत्त्रये॥ १८॥ त्रमेव त्वं महत्त्वं वै जानासि रघुनन्दन॥

इस प्रकार रामचन्द्रजी की स्तुति करके हनुमान्‌जी सीताजी की स्तुति करनेलगे॥

हनुमानुवाच॥ जानकि त्वां नमस्यामि सर्वपापप्रणाशिनीम्॥ दारिद्र्यदुःखसंहर्त्रीं भक्तानामिष्टदायिनीम्॥ १॥ वैदेहराजतनयां राघवानन्दकारिणीम्॥ भूमेर्दुहितरं विद्यां नमामि प्रकृतिं शिवाम्॥ २॥ पौलस्त्यैश्वर्यसंहर्त्रीं भक्ताभीष्टां सरस्वतीम्॥ पतिव्रताधुरीणां त्वां नमामि जनकात्मजाम्॥ ३॥ अनुग्रहपरामृद्धिमनघां हरिवल्लभाम्॥ आत्मविद्यात्रयीरूपामुमारूपां नमाम्यहम्॥ ४॥ प्रासादाभिमुखां लक्ष्मीं क्षीराब्धितनयां शुभाम्॥ नमामि चन्द्रभगिनीं सीतां सर्वाङ्गसुन्दरीम्॥ ५॥ नमामि धर्मनिलयां करुणां वेदमातरम्॥ पद्मालयां पद्महस्तां विष्णुवक्षस्स्थलालयाम्॥ ६॥ नमामि चन्द्रनिलयां सीतां चन्द्रनिभाननाम्॥ आह्लादरूपिणीं सिद्धिं शिवां शिवकरीं सतीम्॥ ७॥ नमामि विश्वजननीं रामचन्द्रेष्टवल्लभाम्॥ सीतां सर्वानवद्याङ्गीं भजामि सततं हृदा॥ ८॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! इस प्रकार भक्ति से हनुमान्‌जी सीता और रामचन्द्रजी की स्तुतिकर आनन्द से अश्रुपात करतेहुये मौन होगये हनुमान्‌जी के किये इन दोनों स्तोत्रों को जो पुरुष भक्ति से पढ़े वह

बड़ा ऐश्वर्य पाता है धन, धान्य, क्षेत्र, दूध देनेहारी गौ, आयुर्दाय, विद्या पुत्र, उत्तम स्त्री और सद्गति इस स्तोत्र के पाठ से प्राप्त होती हैं इस स्तोत्र के पाठ से ब्रह्महत्या आदि पाप निवृत्त होते हैं नरक का भय नहीं होत देहान्त होनेपर मुक्ति मिलती है रामचन्द्रजी हनुमान्‌जी की की हुई स्तुति सुन प्रसन्न हो कहनेलगे कि हे वायुपुत्र ! तुमने अज्ञान से यह साहस किया इस लिङ्ग को ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्रआदि देवता भी नहीं उखाड़सक्ते महादेवजी की अवज्ञा करनेसे तुम मूर्च्छित होकर गिरे फिर कभी सदाशिव से द्रोह मत करना आज से लेकर यह कुण्ड तुम्हारे नाम से प्रसिद्ध होग इस कुण्ड में स्नान करने से महापातकों का नाश होगा महादेवजी की जटा से गोदावरी नदी निकली है उसमें स्नान करने से हज़ार अश्वमे का फल होता है उससे सौगुणा अधिक पुण्य सरस्वती यमुना और गङ्गा में स्नान करने से होता है जहां ये तीनों मिली हैं अर्थात् प्रयाग में वह स्नान करने से सहस्रगुण पुण्य होता है उतनाही पुण्य इस तुम्हारे कुण्ड में स्नान करने से प्राप्त होगा मनुष्यजन्म पाय हनुमत्कुण्ड के तीर जो पुरुष श्राद्ध न करे उसके पितर निराश होकर जाते हैं और उस पुरुष प देवता ऋषि और पितरों का कोप होता है हनुमत्कुण्ड के तीरपर जो हवन और दान न करे उसका जीवन वृथा है और वह दोनों लोकों में दुः पाता है जो पुरुष हनुमत्कुण्ड के तीर जल और तिलों से पितरों का तर्पण करे उसके पितर आनन्द को प्राप्त होते हैं और घृतकुल्या पीते हैं सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! रामचन्द्रजी का यह वचन सुन और उनकी आज्ञ पाय रामेश्वर के उत्तरभाग में हनुमान्‌जी का लायाहुआ लिङ्ग स्थापन किया रामेश्वरलिङ्ग में हनुमान्‌जी की पूंछ लपेटने के तीन चिह्न अद्यापि देख पड़ते हैं सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! जिसप्रकार रामचन्द्र ने रामेश्वर का स्थापन किया वह हमने वर्णन किया जो पुरुष इस अ को पढ़े अथवा सुने वह सब पापों से छूट शिवलोक को जाता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां हनुमदीश्वरमाहात्म्यनिरूपणंनाम षट्चत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४६ ॥

सैंतालीसवां अध्याय॥

रावण के जन्मआदि का वर्णन और रामचन्द्रजी को रावण के वध करने से ब्रह्महत्या लगने का वर्णन॥

शौनक आदि ऋषि पूछते हैं कि हे सूतजी! रावण राक्षस के मारने से रामचन्द्रजी को ब्रह्महत्या क्यों लगी ब्रह्महत्या तो ब्राह्मण के वध करने से लगती है रावण तो ब्राह्मण था ही नहीं फिर क्योंकर उसके वध से रामचन्द्रजी को हत्या लगी यह आप वर्णन करें तब सूतजी कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो! ब्रह्माजी के पुत्र पुलस्त्य और पुलस्त्य के पुत्र विश्रवा हुये विश्रवामुनि ने बहुत काल अतिदुष्कर तप किया उस काल में बड़ा पराक्रमी सुमाली नाम दैत्य अतिरूपवती अपनी कन्या को साथ लिये पाताल से आय भूमिपर बिचरता था उसने विश्रवा के पुत्र कुबेर को पुष्पकविमान में बैठे देखा और मनमें विचार किया कि ऐसा भाग्यशाली पुत्र हमारे भी होय तो हमारी वृद्धि सब प्रकार से होय यह मन में विचारकर अपनी पुत्री कैकसी से कहा कि हे पुत्रि! अब तू यौवन में प्राप्त हुई इसलिये तेरा विवाह होना चाहिये तरुण कन्या का विवाह न करने से माता पिता दुर्गति को प्राप्त होते हैं प्रत्याख्यान के भय से कोई तुझे मांगता नहीं कौन वर तुझे वरेगा यह मैं नहीं जानता अब ब्रह्माजी के पौत्र और पुलस्त्यमुनि के पुत्र विश्रवामुनि को तू आप जाय के वर ले जिससे कुबेर के तुल्य पुत्र तेरे भी होय यह पिता का वचन सुन कैकसी विश्रवामुनि की कुटी में गई और लज्जासे मुख नीचे कर बैठगई उस सन्ध्याकाल में विश्रवामुनि अग्निहोत्र करते थे उन्होंने अतिरूपवती कैकसी को देख पूछा कि हे भद्रे! तू किसकी पुत्री है और किस कार्य के लिये यहां आई है यह सब यथार्थ कह तब कैकसी बड़ी विनय से हाथजोड़ नम्र हो कहनेलगी कि हे महाराज! आप तप के प्रभाव से मेरा सब अभिप्राय जानते हैं मैं सुमाली दैत्य की कन्या कैकसी हूं और पिता की आज्ञा से आपके समीप आई हूं और मेरा अभिप्राय आप जानलेवें यह कैकसी का वचन सुन क्षणमात्र ध्यानकर

विश्रवामुनि ने कहा कि हे कैकसि ! तेरा अभिप्राय हमने जाना तू पुत्र के लिये हमारे पास आई है परन्तु तू इस अतिदारुण सन्ध्याकाल में हमारे समीप आई इसलिये अतिक्रूर राक्षस तेरे पुत्र उत्पन्न होंगे यह मुनि का वचन सुन फिर कैकसी ने विनय से प्रार्थना की कि हे महाराज ! आपके संग से तो ऐसे पुत्र न उत्पन्न होने चाहिये तब फिर मुनि ने कहा कि अच्छा सब से पिछला पुत्र हमारे वंश के योग्य धर्मात्मा और शास्त्रवेत्ता होगा यह मुनि का वचन सुन प्रसन्न हो कैकसी वहां रही और कुछ काल के अनन्तर उसके एक अतिभयंकर पुत्र उत्पन्न हुआ जिसके दश शिर बीस भुजा बड़ी २ दाढ़ लालरंग के केश अतिकृष्ण वर्ण बड़ा शरीर था उसका नाम विश्रवामुनि ने रावण रक्खा फिर कुम्भकर्ण उत्पन्न हुआ वह रावण से भी अधिक क्रूर था पीछे शूर्पणखा नाम अतिक्रूरा राक्षसी कैकसी के गर्भ से उत्पन्न हुई सबके पीछे बड़ा धार्मिक और शास्त्रवेत्ता विभीषण उत्पन्न हुआ रावण कुम्भकर्ण आदि विश्रवामुनि के पुत्र थे इसलिये उनके मारने से रामचन्द्रजी को ब्रह्महत्या लगी उस हत्या की निवृत्ति के लिये रामचन्द्रजी ने वैदिकविधान से रामेश्वर का स्थापन किया रामचन्द्रजी ने भी रामेश्वरलिङ्ग को स्थापनकर अपने को कृतार्थ माना जहां रामचन्द्र जी की ब्रह्महत्या निवृत्त हुई वहां ब्रह्महत्याविमोचन नाम तीर्थ हुआ वहां स्नान करने से ब्रह्महत्या निवृत्त होती है उस तीर्थ के समीप छायारूप रावण अबतक देख पड़ता है उसके आगे एक नागलोक का बिल है रामचन्द्रजी ने उस हत्या को नागलोक के बिलमें प्रवेश करादिया और उस बिलके ऊपर मण्डप बनाय भैरव को स्थापन किया भैरव के भय से ब्रह्महत्या बिल के बाहर न निकलसकी निरुद्यम होकर बैठगई रामेश्वरलिङ्ग के दक्षिणभाग में पार्वतीजी हैं लिङ्ग के दोनों ओर सूर्य और चन्द्र हैं सम्मुखभाग में अग्नि निवास करता है आठो दिक्पाल अपनी २ दिशा में रामनाथ के सेवन के लिये स्थित हैं गणपति कार्त्तिकेय और वीरभद्रआदि गण रामेश्वर के आसपास विद्यमान हैं सब देवता, मुनि, नाग, सिद्ध, गन्धर्व, अप्सरा आदि रामेश्वर की सेवा के लिये भक्तिपूर्वक वहां निवास करते हैं बहुत

से वेदवेत्ता ब्राह्मण रामचन्द्रजी ने रामेश्वर का पूजन करने के लिये वहां नियुक्त किये उन ब्राह्मणों का भोजन वस्त्र दक्षिणा आदि से अवश्य पूजन करना चाहिये उन ब्राह्मणों के प्रसन्न होने से देवता मुनि और पितर सन्तुष्ट होते हैं उन ब्राह्मणों को बहुत से ग्राम रामचन्द्रजी ने दिये और रामेश्वर के भोग के लिये बहुत सा धन और हजारों ग्राम भूषण वस्त्र रत्न वाहन आदि रामचन्द्रजी ने दिये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! रामेश्वर का प्रभाव कहांतक वर्णन करें गङ्गा यमुना भी अपना पाप निवृत्त करने के अर्थ निरन्तर जिनका सेवन करती हैं इस अध्याय को जो पुरुष भक्ति से पढ़े अथवा सुने वह विष्णुसायुज्य पाता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां रावणवधे रामस्य ब्रह्महत्यास्पर्शनंनाम सप्तचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४७ ॥

अड़तालीसवां अध्याय ॥

पाण्ड्यदेश के शङ्करनाम राजा और शाकल्यमुनि की कथा रामेश्वरप्रशंसा ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! रामनाथ के प्रभाव की एक कथा हम वर्णन करते हैं जिसके श्रवण करने से सब पातक दूर होजायँ पूर्वकाल विषे पाण्ड्य देश में एक शङ्कर नाम राजा हुआ है वह बड़ाधार्मिक ब्रह्मण्य यज्ञकरनेहारा सत्यप्रतिज्ञ वेदवेदाङ्ग जाननेहारा वैदिकधर्म में तत्पर चारो वर्ण और आश्रमों की रक्षा में सावधान शिव विष्णु आदि देवताओं का पूजक और बड़ा दानी था वह एक दिन सिंह व्याघ्र महिष सूकर आदि जीवों से भरे वन में मृगया खेलनेगया और सेनासहित वन में जाय मृगों को मारनेलगा सेना के मनुष्य भी सिंह आदि जीवों को मारते थे उस वन में गुफ़ाके बीच एक शान्तचित्त मुनि व्याघ्रचर्म ओढ़े समाधि लगाये बैठे थे और उनकी पत्नी भी सेवा के लिये मुनि के समीप थी राजा ने जाना कि कोई व्याघ्र गुफ़ा में बैठा है यह जान एक बाण ऐसा मारा कि मुनि और मुनिपत्नी की देह में पार होगया तब उनका एक बालक था वह विलाप करनेलगा कि हे मातः! हे पितः! मुझ को छोड़ तुम कहां गये मैं किसकी शरण जाऊं मुझे कौन पढ़ावेगा भोजन कौन देगा आचार

कौन सिखावेगा और हे मातः! तेरी भांति मेरा लालन कौन करेगा विना अपराध किस दुष्ट ने तुम को मारदिया इसप्रकार ऊंचेस्वर से विलाप करने लगा उसका शब्द सुन राजा वहां गया और सब मुनि वहां आय एकत्र हुये मुनीश्वरों ने देखा कि मुनि और मुनिपत्नी मरे पड़े हैं और बालक विलाप कररहा है तब सब उसका आश्वासन करनेलगे कि हे बालक! धनवान्, दारिद्र्य, मूर्ख, पण्डित, पुष्ट, कृश, दुर्जन, सज्जनआदि चाहे जैसा पुरुष होय मृत्युसे कोई नहीं बचता वन, पर्वत, नगर, ग्राम आदि किसी स्थल में रहो वहीं मृत्यु जाय पहुँचती है हे वत्स! गर्भ में स्थित कोई मृत्युवश होते हैं कोई जन्मते ही मरजाते हैं कितने बाल्यावस्थामें मृतक होते हैं कोई तरुण होकर और कोई वृद्ध होकर यमलोक को जाते हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और यति सब मृत्यु के वश होते हैं कोई बच नहीं सक्ता ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवता, गन्धर्व, नाग, राक्षस और भी सब जीव विलय होजाते हैं इसलिये हे बालक! तू माता पिता के मरने से शोक मत कर एक सच्चिदानन्द परब्रह्म का जन्ममरण नहीं होता और वह न घटता है न बढ़ता यह देह नव छिद्रों करके युक्त मल का भाण्ड है रुधिर पूय विष्ठा मूत्र आदि से भरा है जलबुद्बुद के तुल्य क्षणभंगुर है काम, क्रोध, लोभ, मोह, मात्सर्य, हिंसा, असूया, अशौच आदि का निवास स्थान है इस देह को जे पुरुष उत्तम समझें वे मूढ़ और दुर्बुद्धि हैं अनेक छिद्रों करके युक्त घट के तुल्य यह देह है इसमें प्राणरूप पवन इतने दिन रुकारहा यही आश्चर्य है हे बालक! माता पिता का शोक मतकर वे तो अपने कर्म के वश हो देह को त्यागगये और तू कर्मवश से यहां विद्यमान है जब तेरे कर्म क्षय होंगे तब तू भी मृत्यु के वश होगा जिस काल में तेरे माता पिता उत्पन्न हुये उस समय तू नहीं उत्पन्न हुआ था इस लिये तेरा गमन उनके साथ क्योंकर होसक्ता है जो तेरी उनकी गति तुल्य होय तो जहां वे गये वहां तू भी जासक्ता है मृतक पुरुषों के बान्धव जो अश्रुपात करते हैं वह परलोक में मृतक पुरुषों को पान करने पड़ते हैं इस कारण रोदन मतकर धैर्य धर और इनका प्रेतकार्य वैदिकविधान से कर

इन दोनों की मृत्यु बाण लगने से हुई है इसलिये इनके अस्थि रामेश्वर क्षेत्र में रामसेतु के समीप डाल और वहांहीं इनका सपिण्डीकरण आदि कर तब यह अपमृत्युदोष निवृत्तहोगा यह वचन सब मुनियों का सुन उस शाकल्यमुनि के पुत्र जाङ्गल ने अपने माता पिता का पितृमेध किया दूसरे दिन उनके अस्थि लेकर हालास्यक्षेत्र में पहुँचा और कुछ दिन में रामेश्वरक्षेत्र में जाय पहुँचा वहां रामसेतु के समीप माता पिता के अस्थि डाले और एक वर्ष वहां रहकर सब कृत्य किया वर्ष समाप्ति में मुनिपुत्र ने स्वप्न देखा कि उसके माता पिता चतुर्भुज हो शंख, चक्र, गदा, पद्म धारे गरुड़ पर चढ़े तुलसी की माला और कौस्तुभमणि से भूषित देख पड़े उनको देख मुनिपुत्र बहुत प्रसन्न हुआ और अपने आश्रम में पहुँच सब वृत्तान्त उन मुनीश्वरों से कहा मुनि भी सुनकर प्रसन्न हुये परन्तु सब ने राजा शङ्कर से कहा कि हे पाण्ड्य देश के राजन्! तैंने क्रूरता और मूर्खता से स्त्रीहत्या और ब्राह्मणहत्या की इसलिये तू अग्नि में प्रवेशकर और किसी प्रकार से तेरी शुद्धि नहीं चाहे जितने प्रायश्चित्त कर तेरे सम्भाषण से हज़ारों ब्रह्महत्या लगती हैं इसलिये हे दुष्ट! तू हमारे आगे से चला जा यह मुनियों का वचन सुन राजा बोला कि हे मुनीश्वरो! आप मुझपर अनुग्रह करो मैं अभी अग्नि में प्रवेश करता हूं इतना कह राजा ने अपने मन्त्रियों को बुलाकर कहा कि हे मन्त्रियो! मुझ से ब्रह्महत्या और स्त्रीहत्या अज्ञान से बनपड़ी उसकी निवृत्ति के लिये मुनियों की आज्ञा से मैं अग्नि में प्रवेश करूंगा इसलिये काष्ठ लाकर मुझे चिता बना दो और मेरे पुत्र सुरुचि को गद्दीपर बैठा दो इस बात का कुछ शोक भी मत करो दैव बलवान् है यह राजा का वचन सुन मन्त्री रोदन करनेलगे और बोले कि हे महाराज! आप ने हम को पुत्रवत् पालन किया अब आपके विना हम नगर में प्रवेश न करेंगे हम भी आपके आगे ही अग्नि में प्रवेश करेंगे यह मन्त्रियों का वचन सुन राजा ने कहा कि हे मन्त्रियो! मुझ ऐसे महापातकी के साथ दग्ध होना उचित नहीं और मैं अब राजसिंहासन के योग्य नहीं अब तुम सुरुचि को सिंहासन पर बैठाय उसकी सेवा में रहो और मेरे

लिये शीघ्रही चिता बना दो विलम्ब मत करो यह राजाकी दृढ़ आज्ञा पाय मन्त्रियों ने चिता बनाय अग्नि प्रज्वलित की राजा ने अग्नि को प्रज्वलित देख स्नान किया और अग्नि तथा मुनीश्वरों की प्रदक्षिणाकर हृदय में साम्ब सदाशिव का ध्यान करता हुआ राजा अग्नि में प्रवेश करनेलगा तब आकाशवाणी हुई कि हे राजन्! अग्नि में प्रवेश मत कर ब्रह्महत्या निवृत्ति के लिये मैं तुझे उपाय बताता हूं सावधान होकर सुन दक्षिण समुद्र के तीर गन्धमादनपर्वत में रामचन्द्रजी के स्थापन किये रामेश्वर के लिङ्गका एक वर्ष पर्यन्त तीन काल सेवन कर प्रदक्षिणा नमस्कार महाभिषेक आदि कर भांति २ के नैवेद्य लगाय चन्दन अगरु कर्पूर आदि से लिङ्ग का पूजन कर दोभार गोघृत दोभार गोदुग्ध और द्रोणभर शहद से नित्य रामेश्वर का अभिषेक कर पायस का नैवेद्य लगाय और तिलतैल से नित्य दीपक प्रज्वलित कर इसप्रकार रामेश्वर का सेवन करने से स्त्री-हत्या और ब्रह्महत्या निवृत्त होजायगी रामेश्वर का दर्शन करने से सौ भ्रूणहत्या और सुरापान, सुवर्णस्तेय, गुरुस्त्रीगमन, ब्रह्महत्या आदि हजारों महापातक तत्क्षण निवृत्त होजाते हैं रामेश्वर की सेवा न बनपड़े तो गया प्रयाग आदि तीर्थों से कुछ प्रयोजन नहीं इसलिये हे राजन्! शीघ्र जाकर रामनाथ की सेवा कर विलम्ब मत करो इतना कह आकाशवाणी बन्द होगई सब मुनियों ने राजा से कहा कि हे महाराज! आप शीघ्र रामेश्वर को जावो हमने रामेश्वर का माहात्म्य विना जाने आपको यह प्रायश्चित्त बतलाया यह मुनियों का वचन सुन प्रसन्न हो थोड़ी सी सेना साथ ले राजा रामेश्वर को चला वहां पहुँच जितेन्द्रिय और जितक्रोध हो एकबार भोजन का नियम कर तीनकाल रामेश्वर का सेवन करनेलगा दशभार सुवर्ण रामनाथ के अर्पण किया नित्य रामेश्वर का महापूजन करता और नियम से धनुष्कोटि में स्नान कर ब्राह्मणों को दान देता इसप्रकार आकाशवाणी की आज्ञानुसार एक वर्ष पर्यन्त राजा ने उग्र तप किया वर्ष के अन्त में भक्तिपूर्वक राजा शङ्कर शिवजी की स्तुति करनेलगा॥

शङ्कर उवाच॥ नमामि रुद्रमीशानं रामनाथमुमापति-

म्॥ पाहि मां कृपया देव ब्रह्महत्यां दहाशु मे॥ १ ॥ त्रिपुरघ्न महादेव कालकूटविषादन॥ रक्ष मां त्वं दयासिन्धो ब्रह्महत्यां विमोचय ॥ २ ॥ गङ्गाधर विरूपाक्ष रामनाथ त्रिलोचन ॥ मां पालय कृपादृष्ट्या छिन्धि मत्पातकं विभो ॥ ३ ॥ कामारे कामसंदायिन् भक्तानां राघवेश्वर ॥ कटाक्षं पातय मयि शुद्धं मां कुरु धूर्जटे ॥ ४ ॥ मार्कण्डेयभयत्राण मृत्युञ्जय शिवाऽव्यय ॥ नमस्ते गिरिजाधीय निष्पापं कुरु मां सदा ॥ ५ ॥ रुद्राक्षमालाभरण चन्द्रशेखर शङ्कर ॥ वेदोक्त-सम्यगाचारयोग्यं मां कुरु ते नमः ॥ ६ ॥ सूर्यदन्तभिदे तुभ्यंभारतीनासिकाच्छिदे॥ रामेश्वरायदेवाय नमो मे शुद्धिदो भव॥ ७ ॥ आनन्दं सच्चिदानन्दं रामनाथं वृषध्वजम्॥ भूयो भूयो नमस्यामि पातकं मे विनश्यतु॥ ८ ॥ इति ॥

इसप्रकार स्तुति करते २ राजा के मुख से अतिभयंकर ब्रह्महत्या निकली जिसका नीलवस्त्र रक्तकेश अतिक्रूर स्वरूप था उस ब्रह्महत्या को शिवजी की आज्ञा से भैरवजी ने मारदिया और रामेश्वर भगवान् ने प्रसन्न होकर राजा से कहा कि हे राजन्! तेरे इस स्तोत्र से हम बहुत प्रसन्न हैं जो वर चाहे मांग जो दोष स्त्रीहत्या और ब्रह्महत्या का तुझको लगा था वह निवृत्त होगया अब पूर्ववत् राज्यकर जो पुरुष हमारी सेवा करते हैं हम उनके ब्रह्महत्याआदि पातक निवृत्त करदेते हैं हमारे सेवन करनेहारे मनुष्य जन्म मरण से छूटजाते और अन्त में सायुज्यमुक्ति पाते हैं और जो इस स्तोत्र से हमारी स्तुति करेंगे उनके सब पातक निवृत्त करदेंगे हे राजन्! तेरी भक्ति और स्तुतिसे हम प्रसन्न हुये वर मांग यह शिवजी की आज्ञा पाय राजा ने प्रार्थना की कि हे नाथ! आपके दर्शन सेही मैं कृतार्थ हुआ अब क्या वर मांगूं मार्कण्डेय का भय हरनेहारे आपके चरणारविन्द का दर्शन किया अब और वर नहीं चाहता आपके चरणों में दृढ़ भक्ति होय

और जन्म मरण से छूटजाऊं और जो मनुष्य मेरे किये इस स्तोत्र को पढ़ें वे आपकी सेवा का फल पाय सब पापों से छूटें सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! शिवजी ने ये सब वर राजा को दिये और रामनाथलिङ्ग में आप अन्तर्धान हुये राजा भी कृतार्थ हो रामनाथ को प्रणामकर अपनी सेना सहित राजधानी को चला मार्ग में सब मुनीश्वरों से यह वृत्तान्त कहा तब मुनीश्वरों ने राजा का अभिषेक किया राजा भी राजधानी में आय पुत्र और मन्त्रियों सहित धर्मराज्य करनेलगा बहुत काल राज्य कर अन्त में रामनाथ के सायुज्य को प्राप्त हुआ हे मुनीश्वरो ! राजा का चरित और रामनाथ का प्रभाव हमने वर्णन किया इस अध्याय को जो भक्ति से पढ़े अथवा श्रवण करे वह रामनाथ के सायुज्य को प्राप्त होता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां नृपशङ्करशाकल्यमुनिकथानकं नामाष्टचत्वारिंशत्तमोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

उंचासवां अध्याय ॥

रामचन्द्र लक्ष्मणआदि के किये रामेश्वर महादेव के अनेक स्तोत्र ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अब हम रामनाथ के स्तोत्र वर्णन करते हैं आप श्रद्धा से श्रवण करो रामेश्वर का स्थापन कर रामचन्द्रजी ने, लक्ष्मण ने, सीता ने, सुग्रीवआदि वानरों ने, अगस्त्यआदि ऋषियों ने और ब्रह्माआदि देवताओं ने जो स्तुति की है हम क्रमपूर्वक कथन करते हैं जिनके श्रवणमात्र से मनुष्य मुक्त होजाय ॥

श्रीराम उवाच ॥ नमो महात्मने तुभ्यं महामायाय शूलिने ॥ स्वपदाम्बुजभक्तार्तिहारिणे सर्पहारिणे ॥ १ ॥ नमो देवाधिदेवाय रामनाथाय साक्षिणे ॥ नमो वेदान्तवेद्याय योगिनां तत्त्वदायिने ॥ २ ॥ सर्वदानन्दपूर्णाय विश्वनाथाय शंभवे ॥ नमो भक्तभयच्छेदहेतुपादाब्जरेणवे ॥ ३ ॥ नमस्तेऽखिलनाथाय नमः साक्षात्परात्मने ॥ नमस्तेद्भुतवीर्याय महापातकनाशिने ॥ ४ ॥ कालकालाय कालाय काला-

तीताय ते नमः॥ नमोऽविद्यानिहन्त्रे ते नमः पापहराय च॥ ५॥ नमः संसारतप्तानां तापनाशैकहेतवे॥ नमो मद्ब्रह्महत्याविनाशिने च विषाशिने॥६॥ नमस्ते पार्वतीनाथ कैलासनिलयाव्यय॥ गङ्गाधर विरूपाक्ष मां रक्ष सकलापदः॥७॥ तुभ्यं पिनाकहस्ताय नमो मदनहारिणे॥ भूयो भूयो नमस्तुभ्यं सर्वावस्थासु सर्वदा॥ ८॥ इति॥

यह स्तोत्र रामचन्द्रजी ने किया अब लक्ष्मणजी का किया स्तोत्र कहते हैं॥

लक्ष्मण उवाच॥ नमस्ते रामनाथाय त्रिपुरघ्नाय शंभवे॥ पार्वतीजीवितेशाय गणेशस्कन्दसूनवे॥ १॥ नमस्ते सूर्यचन्द्राग्निलोचनाय कपर्दिने॥ नमः शिवाय सोमाय मार्कण्डेयभयच्छिदे॥ २॥ नमःसर्वप्रपञ्चस्य सृष्टिस्थित्यन्तहेतवे॥ नम उग्राय भीमाय महादेवाय साक्षिणे॥ ३॥ सर्वज्ञाय वरेण्याय वरदाय वराय ते॥ श्रीकण्ठाय नमस्तुभ्यं पञ्चपातकभेदिने॥ ४॥ नमस्तेस्तु परानन्दसत्यविज्ञानरूपिणे॥ नमस्ते भवरोगघ्न स्तायूनां पतये नमः॥ ५॥ पतये तस्कराणां ते वनानां पतये नमः॥ गणानां पतये तुभ्यं विश्वरूपाय साक्षिणे॥ ६॥ कर्मणा प्रेरितः शम्भो जनिष्ये यत्र यत्र तु॥ तत्र तत्र पदद्वन्द्वे भवतो भक्तिरस्तु मे॥ ७॥ असन्मार्गे मतिर्मा भूद्भवतः कृपया मम॥ वैदिकाचारमार्गे च रतिः स्याद्भवते नमः॥ ८॥ इति॥

यह लक्ष्मणजी ने स्तुति की अब सीताजी का किया स्तोत्र कहते हैं॥

सीतोवाच॥ परमकारण शंकर धूर्जटे गिरिसुतास्तनकुङ्कुमशोभित॥ मम पतौ परिदेहमतिं सदा नविषमां

परपूरुषगोचरा ॥ १ ॥ गङ्गाधर विरूपाक्ष नीललोहित शङ्कर ॥ रामनाथ नमस्तुभ्यं रक्ष मां करुणाकर ॥ २ ॥ नमस्ते देवदेवेश नमस्ते करुणालय ॥ नमस्ते भवभीतानां भवभीतिविमर्दन ॥ ३ ॥ नाथ त्वदीयचरणाम्बुजचिन्तनेन निर्धूय भास्करसुताद्भयमाशु शम्भो ॥ नित्यत्वमाशु गतवान्समृकण्डुपुत्रः किंवा न सिध्यति तवाश्रयणात्परेश ॥ ४ ॥ परेश परमानन्द शरणागतपालक ॥ पातिव्रत्यं मम सदा देहि तुभ्यं नमोनमः ॥ ५ ॥ इति ॥

अब हनुमान् का किया स्तोत्र कहते हैं ॥

देवदेव जगन्नाथ रामनाथ कृपानिधे ॥ त्वत्पादाम्भोरुहगता निश्चला भक्तिरस्तु मे ॥ १ ॥ यं विना न जगत्सत्ता तद्भानमपि नो भवेत् ॥ नमः सद्भानरूपाय रामनाथाय शंभवे ॥ २ ॥ इति ॥

अब अङ्गद आदि के किये स्तोत्र कहते हैं ॥

अङ्गद उवाच ॥ यस्य भासा जगद्भानं यत्प्रकाशं विना जगत् ॥ न भासते नमस्तस्मै रामनाथाय शंभवे ॥१॥ इति ॥ जाम्बवानुवाच ॥ सर्वानन्दस्सदानन्दो भासते परमार्थतः ॥ नमो रामेश्वरायास्मै परमानन्दरूपिणे ॥ १ ॥ इति ॥ नील उवाच ॥ यद्देशकालादिग्भेदैरभिन्नं सर्वदाद्वयम् ॥ तस्मै रामेश्वरायास्मै नमो भिन्नस्वरूपिणे ॥ १ ॥ इति ॥ नल उवाच ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशाना यदविद्याविजृम्भिताः ॥ नमोऽविद्याविहीनाय तस्मै रामेश्वराय ते ॥ १ ॥ इति ॥ कुमुद उवाच ॥ यत्स्वरूपापरिज्ञानात्प्रधानं कारणत्वतः ॥ कल्पितं कारणायास्मै रामनाथाय शंभवे ॥ १ ॥ इति ॥ पनस उ-

वाच ॥ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादियदविद्याविजृम्भितम् ॥ जाग्रदादिविहीनाय नमोस्मै ज्ञानरूपिणे ॥ १ ॥ इति ॥ गज उवाच ॥ यत्स्वरूपापरिज्ञानात्कार्याणां परमाणवः ॥ कल्पिताकारणत्वेन तार्किकापसदैर्वृथा ॥ १ ॥ तमहं परमानन्दं रामनाथं महेश्वरम् ॥ आत्मरूपतया नित्यमुपास्ये सर्वसाक्षिणम् ॥ २ ॥ इति ॥ गवाक्ष उवाच ॥ अज्ञानपाशबद्धानां पशूनां पाशमोचकम् ॥ रामेश्वरं शिवं शान्तमुपैमि शरणं सदा ॥ १ ॥ इति ॥ गवय उवाच ॥ स्वाध्यस्तं जगदाधारं चन्द्रचूडमुमापतिम् ॥ रामनाथं शिवं वन्दे संसारामयभेषजम् ॥ १ ॥ इति ॥ शरभ उवाच ॥ अन्तःकरणमात्मेति यदज्ञानाद्विमोहितैः ॥ भण्यते रामनाथं तमात्मानं प्रणमाम्यहम् ॥ १ ॥ इति ॥ गन्धमादन उवाच ॥ रामनाथमुमानाथं गणनाथंत्रियम्बकम् ॥ सर्वपातकशुद्ध्यर्थमुपास्ये जगदीश्वरम् ॥ १ ॥ इति ॥ सुग्रीव उवाच ॥ संसाराम्भोधिमध्ये मां जन्ममृत्युजलेभये ॥ पुत्रदारधनक्षेत्रवीचिमालासमाकुले ॥ १ ॥ मज्जद्ब्रह्माण्डखण्डे च पतितं नाप्तपारकम् ॥ क्रोशंतमवशं दीनं विषयव्यालकातरम् ॥ २ ॥ व्याधिनक्रसमुद्विग्नतापत्रयझषार्दितम् ॥ मां रक्ष गिरिजानाथ रामनाथ नमोस्तु ते ॥ ३ ॥ इति ॥ विभीषण उवाच ॥ संसारवनमध्ये मां विनष्टनिजमार्गके ॥ व्याधिचौरेऽघसिंहे च जन्मव्याघ्रेलयोरगे ॥ १ ॥ बाल्ययौवनवार्द्धक्यमहाभीमान्धकूपके ॥ क्रोधेर्ष्यालोभवह्नौ च विषयक्रूरपर्वते ॥ २ ॥ त्रासमूकण्टकाढ्ये च सीदन्तं मामनाथकम् ॥ शोभनां पदवीं शंभो नय रामेश्वराधुना ॥ ३ ॥ इति ॥ सर्वे वानरा ऊचुः ॥ विद्यानिन्द्यासु सर्वत्र जानित्वा

योनिषु प्रभो ॥ कुम्भीपाकादिनरके पतित्वा च पुनस्तथा ॥ १ ॥ जनित्वा च पुनर्योनौ कर्मशेषेण कुत्सिते ॥ संसारे पतितानस्मान् रामनाथ दयानिधे ॥ २ ॥ अनाथान्विनाशान्दीनान् क्रोशतः पाहि शङ्कर ॥ नमस्तेस्तु दयासिन्धो रामनाथ महेश्वर ॥ ३ ॥ इति ॥ ब्रह्मोवाच ॥ नमस्ते लोकनाथाय रामनाथाय शम्भवे ॥ प्रसीद मम सर्वेश मदविद्यां विनाशय ॥ १ ॥ इति ॥ इन्द्र उवाच ॥ यस्य शक्तिरुमादेवी जगन्माता त्रयीमयी ॥ तमहं शङ्करं वन्दे रामनाथमुमापतिम् ॥ १ ॥ इति ॥ यम उवाच ॥ पुत्रौ गणेश्वरस्कन्दौ वृषो यस्य च वाहनम् ॥ तं वै रामेश्वरं सेवे सर्वाज्ञाननिवृत्तये ॥ १ ॥ इति ॥ वरुण उवाच ॥ यस्य पूजाप्रभावेण जितमृत्युर्मृकण्डुजः ॥ मृत्युञ्जयमुपास्येहं रामनाथं हृदा तु तम् ॥ १ ॥ इति ॥ कुबेर उवाच ॥ ईश्वराय लसत्कर्णकुण्डलाभरणाय ते ॥ लाक्षारुणशरीराय नमो रामेश्वराय वै ॥ १ ॥ इति ॥ आदित्य उवाच ॥ नमस्तेस्तु महादेव रामनाथ त्रियम्बक ॥ दक्षाध्वरविनाशाय नमस्ते पाहि मां शिव ॥ १ ॥ इति ॥ सोम उवाच ॥ नमस्ते भस्मदिग्धाय शूलिने सर्पमालिने ॥ रामनाथ दयाम्भोधे श्मशाननिलयाय ते ॥ १ ॥ इति ॥ अग्निरुवाच ॥ इन्द्राद्यखिलदिक्पालसेवितपदाम्बुज ॥ रामनाथाय शुद्धाय नमो दिग्वाससे सदा ॥ १ ॥ इति ॥ वायुरुवाच ॥ हराय हरिरूपाय व्याघ्रचर्माम्बराय च ॥ रामनाथ नमस्तुभ्यं ममाभीष्टप्रदो भव ॥ १ ॥ इति ॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ अहंतासाक्षिणे नित्यं प्रत्यगद्वयवस्तुने ॥ रामनाथ ममाज्ञानमाशु नाशय ते नमः ॥ १ ॥

इति ॥ शुक उवाच ॥ वञ्चकानामलक्ष्याय महामन्त्रार्थ-रूपिणे ॥ नमोऽद्वैतविहीनाय रामनाथाय शम्भवे ॥ १ ॥ इति ॥ अश्विनावूचतुः॥ आत्मरूपतया नित्यं योगिनां भासते हृदि॥ अनन्यभानवेद्याय नमस्ते राघवेश्वर ॥ १ ॥ इति ॥ अगस्त्य उवाच ॥ आदिदेव महादेव विश्वेश्वर शिवाऽव्यय ॥ मम नाथाम्बिकानाथ प्रसीद वृषभध्वज ॥ १ ॥ अपराधसहस्रं मे क्षमस्व परमेश्वर ॥ ममाहमिति पुत्रादावहन्तां मम मोचय ॥ २ ॥ इति ॥ सुतीक्ष्ण उवाच ॥ क्षेत्राणि रत्नानि धनानि दारामित्राणिवस्त्राणिगजाश्वपुत्राः ॥ नैवोपकारायहिरामनाथ मह्यं प्रयच्छ त्वमतो विरक्तिम् ॥ १ ॥ इति ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ श्रुतानि शास्त्राण्यपिनिष्फलानि त्रय्यप्यधीताविफलैवनूनम्॥त्वयीश्वरेचेन्नभवेद्धिभक्तिः श्रीरामनाथे शिव-मानुषस्य॥१॥ इति॥ गालव उवाच ॥ दानानि यज्ञानियमास्तपांसि गङ्गादितीर्थेषु निमज्जनानि ॥ रामेश्वरं त्वां न नमन्ति येतु व्यर्थानि तेषामिति निश्चयोऽत्र ॥१॥ वशिष्ठ उवाच॥कृत्वापिपापान्यखिलानि लोकस्त्वामेत्यरामेश्वर भक्तियुक्तः॥नमेतचेत्तानिलयंव्रजेयुर्यथान्धकाराखितेजसाद्धा॥१॥ इति॥ अत्रिरुवाच॥ दृष्ट्वातु रामेश्वर मे कदापि स्पृष्ट्वानमस्कृत्य भवंतमीशम् ॥ पुनर्न गर्भे स नरः प्रयायात्किंत्वद्वयं ते लभते स्वरूपम् ॥ १ ॥ इति ॥ अङ्गिरा उवाच ॥ यो रामनाथं मनुजो भवन्तमुपेत्य बन्धून् प्रणमन् स्मरेत ॥ संतारयेत्तानपि सर्वपापात्किमद्भुतन्तस्यकृतार्थतायाम्॥ १ ॥ इति ॥ गौतम उवाच ॥ श्रीरामनाथेश्वरगूढमेतद्रहस्यभूतं परमं विशोकम् ॥ त्वत्पादमूलं भजतां नृणां ये सेवां प्रकु-

वन्ति हि तेपि धन्याः॥ १॥ शतानन्द उवाच॥ वेदान्तविज्ञानरहस्यविद्भिर्विज्ञेयमेतद्धि मुमुक्षुभिस्तु॥ शास्त्राणि सर्वाणि विहाय देव त्वत्सेवनं यद्रघुवीरनाथ॥ १॥ इति॥ भृगुरुवाच॥ रामनाथ तव पादपङ्कजद्वन्द्वचिन्तनविधूतकल्मषः॥ निर्भयं व्रजति सत्सुखाह्वयं त्वां स्वयंप्रभममोघचिद्घनम्॥ १॥ इति॥ कुत्स उवाच॥ रामनाथ तव पादसेवनं भोगमोक्षवरदं नृणां सदा॥ रौरवादिनरकप्रणाशनं कः पुमान्न भजते रसग्रहः॥ १॥ इति॥ काश्यप उवाच॥ रामनाथ तव पादसेविनां किंव्रतैः कृततपोभिरध्वरैः॥ वेदशास्त्रजपचिन्तया च किं स्वर्गसिन्धुपयसापि किंफलम्॥ १॥ श्रीरामनाथ त्वमागत्य शीघ्रं ममोत्क्रान्तिकाले भवान्या च साकम्॥ मां प्रापयस्वात्मपदारविन्दं विशोकं विमोहं सुखं चित्स्वरूपम्॥ २॥ इति॥ गन्धर्वा ऊचुः॥ रामनाथ त्वमस्माकं भजतां भवसागरे॥ अपारदुःखकल्लोले न त्वत्तोऽन्या गतिर्हि नः॥ १॥ इति॥ किन्नरा ऊचुः॥ रामनाथ भवारण्यव्याधिव्याघ्रभयानके॥ त्वामन्तरेण नास्माकं पदवीदर्शको भवेत्॥ १॥ इति॥ यक्षा ऊचुः॥ रामनाथेन्द्रियारातिबाधा नो दुःसहाः सदा॥ तां विजेतुं सहायस्त्वमस्माकं भव धूर्जटे॥ १॥ इति॥ नागा ऊचुः॥ अचिन्त्यमहिमानं त्वां रामनाथ वयं कथम्॥ स्तोतुमल्पधियः शक्ता भविष्यामोऽम्बिकापते॥ १॥ इति॥ किंपुरुषा ऊचुः॥ नानायोनौ च जननं मरणं चाप्यनेकशः॥ विनाशाय तथाज्ञानं रामनाथ नमोऽस्तु ते॥ १॥ इति॥ विद्याधरा ऊचुः॥ अम्बिकापतये तुभ्यमसङ्गाय महात्मने॥ नमस्ते रामनाथाय प्रसीद वृषभध्वज॥ १॥ इति॥ वसव ऊचुः॥

रामनाथगणेशाय गणवृन्दार्चिताङ्घ्रये॥ गङ्गाधरायगुह्याय नमस्ते पाहि नः सदा॥ १॥ इति॥ विश्वेदेवा ऊचुः॥ ज्ञप्तिमात्रैकनिष्ठानां मुक्तिदाय सुयोगिनाम्॥ रामनाथाय साम्बाय नमोऽस्मान्रक्ष शङ्कर॥ १॥ इति॥ मरुत ऊचुः॥ परतत्त्वाय तत्त्वानां तत्त्वभूताय वस्तुतः॥ नमस्ते रामनाथाय स्वयंभानाय शम्भवे॥ १॥ इति॥ साध्या ऊचुः॥ स्वातिरिक्तविहीनाय जगत्सत्ताप्रदायिने॥ रामेश्वराय देवाय नमोऽविद्याविभेदिने॥ १॥ इति॥ सर्वे देवा ऊचुः॥ सच्चिदानन्दसम्पूर्णद्वैतवस्तुविवर्जितम्॥ ब्रह्मात्मानं स्वयंभानुमादिमध्यान्तवर्जितम्॥ १॥ इति॥ अविक्रियमसङ्ग्ञ्च परिशुद्धं सनातनम्॥ आकाशादिप्रपञ्चानां साक्षिभूतं सनातनम्॥ २॥ प्रमातीतं प्रमाणानामपि बोधप्रदायिनम्॥ आविर्भावतिरोभावसङ्कोचरहितं सदा॥ ३॥ स्वस्मिन्नध्यस्तरूपस्य प्रपञ्चस्यास्यसाक्षिणम्॥ निर्लेपं परमानन्दं निरस्तसकलक्रियम्॥ ४॥ भूमानन्दं महात्मानं चिद्रूपं भोगवर्जितम्॥ रामनाथं वयं सर्वे स्वपातकविशुद्धये॥ ५॥ चिन्तयामः सदा चित्ते स्वात्मानन्दबुभुत्सवः॥ रक्षास्मान्करुणासिन्धो रामनाथ नमोस्तु ते॥ ६॥ रामनाथाय रुद्राय नमः संसारहारिणे॥ ब्रह्मविष्णवादिरूपेण विभिन्नाय स्वमायया॥ ७॥ इति॥ विभीषणसचिवा ऊचुः॥ वरदाय वरेण्याय त्रिनेत्राय त्रिशूलिने॥ योगिध्येयाय नित्याय रामनाथाय ते नमः॥ १॥ इति॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! रामचन्द्र लक्ष्मण आदि के मुख से स्तुति सुन प्रसन्न हो रामेश्वर प्रभु ने कहा कि हे रामचन्द्रजी! हे लक्ष्मण

जी ! हे सीते ! हे सुग्रीव आदि वानरो ! आप सब के किये इस स्तोत्राध्याय को जे पढ़ें सुनें और सुनावें वे सब हमारे पूजनका फल पावेंगे धनुष्कोटितीर्थ में स्नान करने का और एक वर्ष पर्यन्त रामसेतु के वास का भी फल प्राप्त होता है गन्धमादन के सब तीर्थों में स्नान करने से जो फल प्राप्त होता है वह इस अध्याय के पठन से होगा इस अध्याय को पठन करनेहारा मनुष्य जन्म मरण जरा रोग आदि के भय से छूट हमारे सायुज्य को प्राप्त होगा॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां रामादिकृतरामेश्वरानेकस्तवनिरूपणं नामैकोनपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥

पचासवां अध्याय ॥

सेतुमाधव के वैभव का वर्णन पुण्यनिधि राजा और लक्ष्मीजी की अद्भुत कथा ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अब हम सब पाप हरनेहारा सेतुमाधव का वैभव वर्णन करते हैं आप भक्ति से श्रवण करें पूर्वकाल में चन्द्रवंश में उत्पन्न पुण्यनिधि नाम राजा हालास्येश्वर करके भूषित मथुरापुरी में हुआ है वह एक समय अपने पुत्र को राज्य सौंप चतुरङ्गिणी सेना और अपने अन्तःपुर समेत स्नान के लिये रामसेतु को चला वहां पहुँच संकल्पपूर्वक धनुष्कोटि में स्नान किया और भी वहां के सब तीर्थों में स्नानकर भक्तिपूर्वक राजा पुण्यनिधि रामेश्वर का सेवन करने लगा वहां राजा ने विष्णुभगवान् की प्रीति के लिये यज्ञ किया यज्ञान्तस्नान धनुष्कोटि में कर और रामेश्वर का पूजन आदि कर अपनी राजधानी में आय राज्य करनेलगा कुछ काल के अनन्तर लक्ष्मी विष्णुभगवान् के साथ विनोद से विवाद कर राजा की भक्ति परीक्षा के लिये आठ वर्ष की कन्या बन धनुष्कोटितीर्थ पर आय स्थित होगई उस अवसर में राजा भी वहां स्नान करने आया था राजा स्नान कर तुलापुरुष आदि सब दान दिये और राजधानी को चलनेलगा तब उस परमसुन्दरी कन्या को देखा और पूछा कि हे कन्ये ! तू किसकी पुत्री है और हे वत्से ! यहां अकेली काम के लिये आई है और कहां से आई है यह राजा का वचन सुन कन्या ने कहा कि मेरे माता पिता बान्धव आदि कोई नहीं और मैं

अनाथा हूं इसलिये हे महाराज! आपकी पुत्री होकर आपके घर में रहना चाहती हूं परन्तु जो मुझे हठ से आकर्षण करे उसको आप दण्ड देवें राजा ने कन्या का यह वचन सुन कहा कि हे पुत्रि! जो तू कहेगी वह सब करूंगा मेरे भी केवल एक पुत्र है कन्या नहीं है इसलिये मेरी पुत्री होकर रह जिस वर में तेरी रुचि होगी उसी को तुझे देदूंगा यह राजा का वचन सुन प्रसन्न हो कन्या उसके साथ गई राजा ने अपनी रानी विन्ध्यावली से कहा कि हे प्रिये! यह हम दोनोंकी पुत्री है इसको अपने समीप रक्खो सब प्रकार से इसकी रक्षा करना यह राजा की आज्ञा पाय रानी ने उस कन्या को अपने समीप रक्खा और पुत्री की भांति उसका पालन पोषण करनेलगी विष्णुभगवान् भी गरुड़ पर चढ़ लक्ष्मी को ढूंढ़ने निकले बहुत देशों में घूमे परन्तु कहीं लक्ष्मी न मिलीं तब रामसेतु पर पहुँचे इस अवसर में वह कन्या भी अपनी सखियों समेत उपवन में पुष्प बीनने आई थी विष्णुभगवान् भी ब्राह्मण का रूप धारे गङ्गाजल की काँवर कन्धे पर रुद्राक्ष और विभूति धारे शिव नाम जपते वहां आये और उस कन्या को देखा कन्या भी उनको देख स्तब्ध होगई ब्राह्मणरूपधारी विष्णुभगवान् ने उस कन्या का हाथ पकड़कर खींचा तब वह कन्या ऊंचे स्वर से पुकारी कन्या का पुकारना सुन राजा भी वहां दौड़ा आया और कन्या से पूछा कि हे पुत्रि! तुझे किसने छेड़ा तब कन्या ने कहा कि हे पितः! एक ब्राह्मण ने मुझे हठ से पकड़ा तब मैंने आक्रोश किया अब वह ब्राह्मण निर्भय होकर एक वृक्ष के नीचे बैठा है यह राजा ने कन्या का वचन सुन क्रोधकर उस ब्राह्मण को पकड़वाया और हथकड़ी बेड़ी पहिनाय रामनाथ के समीप एक मण्डप में क़ैद करदिया और कन्या को आश्वासन कर अपने साथ लेगया रात्रि के समय स्वप्न में राजा ने उस ब्राह्मण को देखा कि शंख, चक्र, गदा, पद्म, कौस्तुभमणि, पीताम्बर और भांति २ के भूषणधार शेषशय्या पर सोता है और नारद गरुड़ विष्वक्सेन आदि किंकर सेवा में खड़े हैं और अपनी कन्या को भी देखा कि कमल के ऊपर बैठी हाथ में कमल लिये है सुवर्ण कमलों की माला और भांति २ के रत्न-

जटित भूषणों से अलंकृत है दिग्गज जिसका अभिषेक कररहे हैं यह स्वप्न में देख राजा उठा और कन्या के घर में गया वहां देखा तो कन्या उसी रूप में बैठी है जो राजा ने स्वप्न में देखा था प्रभात होतेही राजा कन्या को साथ ले रामनाथ के मन्दिर के समीप गया जहां ब्राह्मण को कैद कर रक्खा था ब्राह्मण को भी उसी रूप में देखा जो स्वप्न में देखा था तब राजा विष्णुभगवान् को जान स्तुति करनेलगा ॥

पुण्यनिधिरुवाच ॥ नमस्ते कमलाकान्त प्रसीद गरुडध्वज ॥ शार्ङ्गपाणे नमस्तुभ्यमपराधंक्षमस्वमे ॥ १ ॥ नमस्ते पुण्डरीकाक्ष चक्रपाणे श्रियःपते ॥ कौस्तुभालंकृताङ्गाय नमःश्रीवत्सलक्षण ॥ २ ॥ नमस्ते ब्रह्मपुत्राय दैत्यसङ्घविदारिणे ॥ अशेषभुवनावासनाभिपङ्कजशालिने ॥ ३ ॥ मधुकैटभसंहर्त्रे रावणान्तकराय ते ॥ प्रह्लादरक्षिणे तुभ्यं धरित्रीपतये नमः ॥ ४ ॥ निर्गुणायाप्रमेयाय विष्णवे बुद्धिसाक्षिणे ॥ नमस्ते श्रीनिवासाय जगद्धात्रे परात्मने ॥ ५ ॥ नारायणाय देवाय कृष्णाय मधुविद्विषे ॥ नमः पङ्कजनाभाय नमःपङ्कजचक्षुषे ॥ ६ ॥ नमःपङ्कजहस्ताय नमस्ते पङ्कजाङ्घ्रये ॥ भूयोभूयो जगन्नाथ नमःपङ्कजमालिने ॥ ७ ॥ दयामूर्ते नमस्तुभ्यमपराधं क्षमस्व मे ॥ मया निगडपाशाभ्यांयःकृतो मधुसूदन ॥ ८ ॥ अनयस्त्वं स्वरूपं तान् दैत्यांस्त्वदपराधिनः ॥ अतोमदपराधोयं क्षन्तव्योमधुसूदन ॥ ९ ॥

इस प्रकार विष्णुभगवान् की स्तुतिकर राजा पुण्यनिधि महालक्ष्मी की स्तुति करनेलगा ॥

राजोवाच ॥ नमो देवि जगद्धात्रि विष्णुवक्षस्स्थलालये ॥ नमोब्धिसम्भवे तुभ्यं महालक्ष्मि हरिप्रिये ॥ १ ॥

सिद्ध्यै पुष्ट्यै स्वधायै च स्वाहायै सततं नमः॥ सन्ध्यायै च प्रभायै च धात्र्यै भूत्यै नमोनमः॥ २॥ श्रद्धायै चैव मेधायै सरस्वत्यै नमोनमः॥ यज्ञविद्येमहाविद्ये गुह्यविद्येऽतिशोभने॥ ३॥ आत्मविद्ये च देवेशि मुक्तिदे सर्वदेहिनाम्॥ त्रयीरूपे जगन्मातर्जगद्रक्षाविधायिनि॥ ४॥ रक्ष मां त्वं कृपादृष्ट्या सृष्टिस्थित्यन्तकारिणि॥ भूयोभूयो नमस्तुभ्यं ब्रह्ममात्रेमहेश्वरि॥ ५॥

इसप्रकार लक्ष्मीजी की स्तुतिकर राजा भगवान् से प्रार्थना करनेलगा कि हे भगवन्! मैंने बड़ा अपराध किया कि आपके चरणों में बेड़ी डाली परन्तु यह अपराध मैंने अज्ञान से किया इसलिये आप क्षमा करें सब जगत् आपका पुत्र है और आप सब के पिता हैं पिता को पुत्रों का अपराध क्षमा करना चाहिये आपने बड़े अपराधी दैत्यों को अपना स्वरूप दिया इसलिये मेरा अपराध भी आप क्षमा करें पूतना आपके मारने के लिये आई उसको आपने सद्गति दी इसकारण मेरे ऊपर भी कृपादृष्टि कीजिये सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! राजा का यह वचन सुन विष्णुभगवान् बोले कि हे राजन्! भय मत कर हम भक्तों के वश हैं हमारी प्रीति के लिये तैंने बड़ा यज्ञ किया इसलिये हे राजन्! तू हमारा भक्त है और हम तेरे वश हैं भक्तों के अपराध हम सदा क्षमा करते हैं तेरी भक्ति की परीक्षा के लिये हमने लक्ष्मी को भेजा तैंने लक्ष्मी की भली भांति रक्षा की इसलिये हम तुझपर प्रसन्न हैं लक्ष्मी हमारा रूप है जो इस का भक्त होय वह हमारा भक्त होता है जो इससे विमुख होय वह हमारा द्वेषी है तैंने इसका भक्ति से पूजन किया उससे हमारा भी पूजन हुआ इस लिये हे राजन्! तैंने हमारा कोई अपराध नहीं किया तैंने लक्ष्मी की रक्षा के लिये हमारा बन्धन किया इसलिये हम बहुत प्रसन्न हैं यह लक्ष्मी जगन्माता है इसकी रक्षा के लिये हमारा बन्धन किया यह हमको अतिप्रिय है इसलिये हे राजन्! कुछ भय मतकर यह लक्ष्मी तेरी कन्या है यह तो

भगवान् ने कहा और लक्ष्मीजी बोलीं कि हे राजन्! मैं तुझ से बहुत प्रसन्न हूं मैं और विष्णुभगवान् दोनों विनोद कलह करके यहां आये और तेरे योग से तथा भक्ति से बहुत प्रसन्न हुये हमारी कृपा से हे राजन्! सदा तुझ को सुख होगा तू चक्रवर्ती राजा होगा और हमारे चरणों में दृढ़भक्ति होगी सदा धर्म में बुद्धि रहेगी पाप में कभी आसक्ति न होगी और देहान्त में हमारा सायुज्य मिलेगा विष्णुभगवान् ने कहा कि हे राजन्! जिस प्रकार तैंने हमको निगड़ से बांधा अब हम इसी रूप से यहां निवास करेंगे हम ने ही सेतु बांधा है इसकी रक्षा के लिये हम सेतुमाधव नाम से यहां रहेंगे रामनाथ शिवजी और ब्रह्माजी भी सेतु की रक्षा के लिये यहां निवास करेंगे इन्द्रादि लोकपाल यहां निवास करेंगे सब उपद्रव निवृत्त करने के लिये और सबके मनोरथ सिद्ध करने के अर्थ सेतुमाधव नाम से हम यहां स्थित होंगे तेरी निगड़ से बँधे हम को जो सेवन करेंगे वे हमारा सायुज्य पावेंगे हमारे और लक्ष्मी के इस चरित को जो पढ़ेंगे वे कभी दारिद्र्य को नहीं प्राप्त होंगे और ऐश्वर्य पावेंगे तेरे किये हमारे स्तोत्रको जो पढ़ेंगे सुनेंगे और लिखकर घर में रक्खेंगे वे जन्म मरण के क्लेश से छूटेंगे इतना कह विष्णुभगवान् वहां पूर्णरूप से स्थित होगये राजा भी विष्णु भगवान् का महापूजन कर और रामनाथ का सेवनकर अपने स्थान को गया और मथुरा का राज्य अपने पुत्र को सौंप आप रामनाथक्षेत्र में निवास करनेलगा और देह के अन्त में मुक्ति पाई रानी विन्ध्यावली राजा के साथ सती हुई और अपने पति के समीप पहुँची सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! जो पुरुष भक्ति से सेतुमाधव का सेवन करते हैं वे सदा कैलास में निवास करते हैं जो सेतुमाधव का सेवन विना किये रामेश्वर की सेवा करे उसकी सब सेवा व्यर्थ होती है जो पुरुष सेतुसे बालूरेत लेकर गङ्गा में डालें वे सदा वैकुण्ठ में वास करते हैं गङ्गा को जाने लगे तब सेतुमाधव के समीप संकल्प करके जाय नहीं तो यात्रा निष्फल होती है गङ्गा से काँवर भरकर रामनाथक्षेत्र में लावे और रामेश्वर पर गङ्गाजल चढ़ाय उस काँवर को सेतु के समीप समुद्र में डाले वह पुरुष ब्रह्मसायुज्य

को प्राप्त होता है हे मुनीश्वरो! यह सेतुमाधव का वैभव हमने वर्णन किया इसको जो पढ़े अथवा सुने वह वैकुण्ठवास पाता है॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सेतुमाधववैभवे नृपपुण्यनिधिलक्ष्मी-कथानकंनामपञ्चाशत्तमोऽध्यायः॥ ५०॥

इक्यावनवां अध्याय॥

सेतुयात्रा के क्रम का वर्णन और विधान॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! अब हम सेतुयात्रा का क्रम कहते हैं जिसके श्रवण करने से मनुष्य मुक्त होता है स्नान आचमन कर शुद्ध हो रामेश्वर और रामचन्द्रजी की प्रसन्नता के लिये वेदवेत्ता ब्राह्मणों को भोजन कराय मस्तक में भस्म का त्रिपुण्ड्र अथवा गोपीचन्दन का ऊर्ध्व-पुण्ड्र धारण कर रुद्राक्षमाला और कुश के पवित्रधार (सेतुयात्रामहं करिष्ये) यह संकल्पकर अष्टाक्षर अथवा पञ्चाक्षर मन्त्र को जपता हुआ घर से यात्रा करे मार्ग में एकबार हविष्य भोजन करे जितेन्द्रिय और जित-क्रोध रहे पादुका, छत्र, ताम्बूल, तैलाभ्यङ्ग, स्त्रीसङ्ग आदि का तीर्थयात्रा में निषेध है शौच आचार करके युक्त रहे तीनकाल सन्ध्यावन्दन गायत्री जप और रामेश्वर का चिन्तन करे मार्ग में नित्य सेतुमाहात्म्य रामायण अथवा और कोई पुराण पढ़े अथवा श्रवण करे व्यर्थ वाक्य उच्चारण न करे प्रतिग्रह न लेवे आचार में रहे मार्ग में यथाशक्ति शिव और विष्णु का पूजन करता जाय वैश्वदेव ब्रह्मयज्ञ अग्निहोत्र आदि करता जाय अति-थियों को अन्न देवे और संन्यासियों को यथाशक्ति भिक्षा देता रहे वित्त-शाठ्य न करे शिव विष्णु आदि के स्तोत्र नित्य पढ़े सदा धर्म सेवन करे और निषिद्ध कर्मको त्यागे इस नियम से सेतु पर पहुँच पहिले एक पाषाण समुद्रको देकर समुद्र का आवाहन करे फिर प्रणामकर अर्घ्य देकर समुद्र की आज्ञा ले स्नान करे और मुनि देवता पितर और वानरों का तर्पण करे सात पाषाण अथवा एक पाषाण॥

(पिप्पलादसमुत्पन्ने कृत्ये लोकभयंकरे॥ पाषाणं ते मया

दत्तमाहारार्थं प्रकल्पताम्) यह मन्त्र पढ़ समुद्रमें डाले तब स्नान सफल होता है (विश्वाचित्वंघृताचित्वं विश्वयोने विशांपते॥ सान्निध्यं कुरु मे देव सागरे लवणाम्भसि) यह आवाहन का मन्त्र है (नमस्ते विश्वगुप्ताय नमो विष्णो ह्यपांपते॥ नमो हिरण्यशृङ्गाय नदीनां पतये नमः) यह नमस्कार का मन्त्र है (सर्वरत्नमय श्रीमन्सर्वरत्नाकर प्रभो॥ सर्वरत्नप्रधानस्त्वं गृहाणार्घ्यं महोदधे) यह अर्घ्य का मन्त्र है (अशेषजगदाधार शङ्खचक्रगदाधर॥ देहि देव ममानुज्ञां युष्मत्तीर्थनिषेवणे) यह आज्ञा लेने का मन्त्र है फिर पूर्वदिशा में सुग्रीव दक्षिण में नल पश्चिम में मयन्द और उत्तर में द्विविद का स्मरण कर मध्य में राम लक्ष्मण सीता हनुमान् अङ्गद और विभीषण का स्मरण कर (पृथिव्यां यानि तीर्थानि प्राविशंस्त्वां महोदधे॥ स्नानस्य मे फलं देहि सर्वस्मात्त्राहि मैनसः) यह मन्त्र पढ़ हिरण्यशृङ्ग इत्यादि वैदिक मन्त्र पढ़े और नाभि में नारायण का स्मरण करे स्नान आदि कर्मों में नारायण का स्मरण करता रहे तो ब्रह्मलोक को प्राप्त होय और सब पापों का प्रायश्चित्त भी होजाय फिर प्रह्लाद, नारद, व्यास, अम्बरीष, शुकदेव आदि भगवद्भक्तों का स्मरणकर (वेदादियों वेदवशिष्ठयोनिः सरित्पतिःसागररत्नयोनिः अग्निश्चतेजेजइला च तेजोरेतोधाविष्णुरमृतस्यनाभिःइदंतेअन्याभिरस्यमानमद्भिर्याकाश्चसिन्धुंप्रविशन्त्यापः॥ सर्पोजीर्णामिवत्वचंजहामि पापं शरीरात्) यह मन्त्र पढ़ स्नान करे 'समुद्रावयूनां' इत्यादि मन्त्र पढ़ नमस्कार कर (सर्वतीर्थमयं शुद्धं नदीनां पतिमम्बुधिम्) यह मन्त्र और 'द्यौसमुद्रौ' इत्यादि मन्त्र पढ़ फिर स्नान करे फिर (ब्रह्माण्डोदरतीर्थानि करस्पृष्टानि ते रवे॥ तेन सत्येन मे सतो तीर्थं देहि दिवाकर) यह मन्त्र पढ़ पूर्व आदि दिशाओं में सुग्रीव आदि

का पूर्ववत् स्मरण कर तीसरा स्नान करे जो देवीपत्तन होकर जाय तो पहिले नव पाषाण के मध्य में समुद्र के बीच स्नान करे दर्भशय्या के मार्ग से जाय तो पहिले समुद्र में स्नान करे फिर पिप्पलाद, कवि, कण्व, कृतान्त, मृत्यु, कालरात्रि, विद्या, अहर्गणेश्वर, पराशर, वशिष्ठ, वामदेव, वाल्मीकि, नारद, वालखिल्यमुनि, नल, नील, गवाक्ष, गवय, गन्धमादन, मयन्द, द्विविद, शरभ, ऋषभ, सुग्रीव, हनुमान् और राम, लक्ष्मण, सीता का तीन २ बार तर्पण कर देवता ऋषि पितरों का तिल जल से तर्पण करे चतुर्थ्यन्त अथवा द्वितीयान्त नाम उच्चारण कर जल के बीच खड़ा रहकर तर्पण करे समुद्र के बीच तर्पण करने से सब तीर्थों में तर्पण करने का फल प्राप्त होता है इस भांति सबका तर्पण कर जल से निकल वस्त्र धारण कर पवित्र हो आचमनकर श्राद्ध करे धनाढ्य होय षड्रस अन्न से पिण्ड देकर गौ, भूमि, सुवर्ण आदि दान कर ब्राह्मणों को देवे और निर्धन होय तो तिल चावल से पिण्डदान करदेवे इसीभांति पाषाण दान से लेकर श्राद्धपर्यन्त सब विधान रामधनुष्कोटि में भी करे चक्रतीर्थ में जाकर स्नान कर वहां के अधिपति नारायण का दर्शन करे पश्चिम मार्ग से जाय तो उस दिशा के चक्रतीर्थ में स्नानकर दर्भशायी नारायण का दर्शन करे फिर कपितीर्थ सीतातीर्थ और ऋणमोचनतीर्थ में स्नान कर रामचन्द्रजी को प्रणाम करे फिर कण्ठ से ऊपर वपन कराय लक्ष्मणतीर्थमें स्नान करे फिर रामतीर्थ, पाप-विनाशनतीर्थ, गङ्गा, यमुना, सावित्री, गायत्री, सरस्वती, हनुमत्कुण्ड, ब्रह्मकुण्ड और नागकुण्ड में स्नान करे गङ्गा आदि सब तीर्थ नागकुण्ड में निवास करते हैं यह तीर्थ अनन्त आदि आठ नागोंने रचाहै फिर अगस्त्य-कुण्ड में स्नानकर अग्नितीर्थ में स्नान करे और विधिपूर्वक श्राद्धकर गौ, भूमि, सुवर्ण, अन्न आदि ब्राह्मणों को देवे तो सब पापों से मुक्त होय चक्रतीर्थ आदि जिस क्रम से वर्णन किये उसी क्रम से स्नान करे अथवा जैसी रुचि होय उसप्रकार तीर्थों में स्नान करे सब तीर्थों में स्नान और श्राद्धकर पीछे रामेश्वर महादेव, सेतुमाधव, राम, लक्ष्मण, सीता, हनुमान् और सुग्रीव आदि वानरों का सेवन करे सब तीर्थों में स्नानकर रामनाथ और रामचन्द्र

को प्रणाम कर रामचन्द्रधनुष्कोटि में स्नान करे वहां भी पाषाण दान आदि नियम सब करे धनुष्कोटितीर्थ में क्षेत्र, गौ, वस्त्र, अन्न आदि वेदवेत्ता ब्राह्मणों को यथाशक्ति देवे फिर नियमपूर्वक कोटितीर्थमें स्नानकर रामेश्वर देव को प्रणाम करे सामर्थ्य होय तो ब्राह्मणों को सुवर्णदक्षिणा देवे और तिल, धान्य, गौ, क्षेत्र, वस्त्र, अन्न भी ब्राह्मणों को देवे वित्तशाठ्य न करे धूप दीप नैवेद्य आदि पूजा के उपकरण वित्तानुसार रामेश्वरदेव के अर्पण करे रामेश्वरदेव की स्तुति और प्रणाम कर सेतुमाधव के समीप जाय वहां भी सब पूजा के उपचार समर्पण कर पूर्वोक्त नियमों करके युक्त अपने घर को आवे वहां आय षड्रस भोजन ब्राह्मणों को करावे इसप्रकार यात्रा करे तो रामेश्वरदेव सब मनोरथ सिद्ध करते हैं और धन सन्तान की वृद्धि होती है नरक और दारिद्रय का भय नहीं रहता और अन्त में मुक्ति प्राप्त होती है जो यात्रा करने की सामर्थ्य न होय तो सेतु के माहात्म्य का कोई ग्रन्थ श्रवण करे अथवा इसी सेतुमाहात्म्य को श्रवण करे तो भी सेतुयात्रा का फल प्राप्त होता है परन्तु यह बात लँगड़े लूले अन्धे आदि के लिये कही है हे मुनीश्वरो ! यह सेतुयात्रा का क्रम हमने कहा इसको जो पढ़े अथवा भक्ति से श्रवण करे वह सब दुःखों से छूटता है ॥

इति श्रीस्कान्दे सेतुमाहात्म्ये भाषाव्याख्यायां सेतुयात्राक्रमविधाननिरूपणं नामैकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५१ ॥

बावनवां अध्याय ॥

सेतु का और गन्धमादनपर्वत के तीर्थों का माहात्म्य अर्धोदय आदि पर्वदिनों में सेतुस्नान का माहात्म्य सेतुमाहात्म्य के पठन और श्रवण का विस्तार से माहात्म्य व्यासजी का नैमिषारण्य में आगमन सेतुमाहात्म्य की प्रशंसा और ग्रन्थ समाप्ति ॥

सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! अब आपकी प्रीति के लिये फिर भी हम सेतु का वैभव वर्णन करते हैं आप प्रीति से श्रवण करो सब स्थानों में यह स्थान उत्तमहै इस स्थान में किये हुये जप,तप,हवन,दान आदि कर्म अक्षय होते हैं धनुष्कोटि में स्नान करने से दशवर्ष तक किये काशीवास का फल प्राप्त होता है धनुष्कोटि में स्नान कर तीन दिन रामेश्वर का

दर्शन करे तो पुण्डरीकपुर के दश वर्ष वास का फल प्राप्त होता है अष्टोत्तर सहस्र जप षडक्षर मन्त्र का इस क्षेत्र में करे तो शिवसायुज्य पावे मध्यार्जुन, कुम्भकोण, मायूर, श्वेतकानन, हालास्य, गजारण्य, वेदारण्य, नैमिष, श्रीपर्वत, श्रीरङ्ग, वृद्धगिरि, चिदम्बर, वल्मीक शेषाद्रि, वरुणाचल, दक्षिण कैलास, वेंकटाद्रि, हरिस्थल, काञ्चीपुर, ब्रह्मपुर, वैद्येश्वरपुर आदि शिवक्षेत्र और विष्णुक्षेत्रों में वर्षभर निवास करने से जो फल होता है वह धनुष्कोटि में माघमास भर स्नान करने से प्राप्त होता है सेतु के उद्देश से 'द्यौसमुद्रौ' इत्यादि 'अदोयद्दारु' इत्यादि 'विष्णोःकर्माणि पश्यन्ते' इत्यादि 'तद्विष्णोः' इत्यादि कई श्रुति हैं और अनेक स्मृति इतिहास पुराण आदि सेतुमाहात्म्य को कहते हैं दशवर्ष पर्यन्त काशीवास कर गङ्गास्नान नित्य करने से जो फल होता है वह चन्द्र सूर्य ग्रहण में सेतुस्नान से प्राप्त होता है सेतुस्नान करतेही कोटिजन्म में किये पाप तत्क्षण नष्ट होजाते हैं और हजार अश्वमेध का फल प्राप्त होता है विषुव अयन सोमवार और पर्वदिनों में सेतुस्नान करे तो सात जन्म के पाप निवृत्त होते हैं और स्वर्ग प्राप्त होता है मकर के सूर्य और माघमास में सूर्योदय होने के अनन्तर तीन दिन धनुष्कोटि में स्नान करे तो गङ्गादि सब तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होय पांच दिन स्नान करे तो अश्वमेध आदि सब यज्ञों का फल पावे चान्द्रायण आदि व्रत और चारो वेद के पारायण का फल प्राप्त होताहै माघमास में दश दिन धनुष्कोटि में स्नान करे तो निश्चयही ब्रह्मलोक प्राप्त होय पन्द्रह दिन स्नान करे तो वैकुण्ठ प्राप्त होय बीस दिन स्नान करे तो शिवलोक में वास होय पचीस दिन स्नान करे तो सारूप्यमुक्ति पावे तीन दिन स्नान करे तो सायुज्य मिले इसलिये माघमास में अवश्यही धनुष्कोटि में स्नान करना चाहिये चन्द्र सूर्य ग्रहण अर्धोदय महोदय आदि पर्वदिनों में स्नान करे तो कभी गर्भवास न होय ब्रह्महत्या आदि पाप निवृत्त होयँ नरकक्लेश न होय सब सम्पत्ति मिले इन्द्रादि लोकों में निवास होय रावण के वध के लिये रामचन्द्रजी ने सेतु बनाया है जिसको देवता, सिद्ध, चारण, गन्धर्व, देवर्षि, राजर्षि, पितर, किन्नर, नाग आदि सब सेवते हैं उस सेतु का स्नान के समय स्मरण करे

और चाहे जहां तड़ाग आदि में स्नान करे तो भी सब पाप निवृत्त होजायँ सेतुक्षेत्र में एक मुट्ठी अन्न देने से भी सब रोग और भ्रूणहत्या आदि पाप निवृत्त होते हैं रामचन्द्रजी के धनुष् से कीहुई रेखा को जो देखे वह अक्षय वैकुण्ठवास पावे विभीषण की प्रार्थना से रामचन्द्रजी ने धनुष्कोटितीर्थ बनाया है उसमें भक्ति से स्नान करे गौ, भूमि, सुवर्ण, क्षेत्र, तिल, चावल, धान्य, दूध, दही, छाँछ, उड़द, वस्त्र, भूषण, घृत, जल, शाक, भात, शर्करा, मधु, लड्डू, अपूप आदि सब पदार्थों का दान करे धन का लोभ न करे तो सब मनोरथ सिद्ध होते हैं दान, जप, तप, हवन आदि सब कर्म धनुष्कोटितीर्थ पर कियेहुये अनन्तफल देनेहारे होते हैं धनुष्कोटि में स्नान करने से मनुष्य पवित्र होता है और देवता, पितर, मुनि, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, नाग, किम्पुरुष, यक्ष सब सन्तुष्ट होते हैं उसके सब कुल सद्गति को प्राप्त होते हैं रामधनुष्कोटि में स्नान करने से पांच करोड़ महापातक नष्ट होते हैं जहां सीता ने अग्नि में प्रवेश किया उस कुण्डमें स्नान करने से सौ भ्रूणहत्या क्षणमात्र में नष्ट होजाती हैं रामचन्द्र सेतु गङ्गा और विष्णु इनमें कुछ भेद नहीं स्नान के समय इनका स्मरण करे तो परमगति पावे अर्धोदय पर्व में सेतुस्नानकर सर्षप के तुल्य पिण्ड पितरों को देवे तो जबतक सूर्य चन्द्र रहें तबतक पितर तृप्त रहते हैं शमीपत्र के तुल्य पिण्ड देवे तो पितर स्वर्ग में होयँ तो मुक्ति पावें और नरक में होयँ तो सब पापों से छूट स्वर्ग को जायँ सेतु, पद्मनाभ, गोकर्ण, पुरुषोत्तम इन क्षेत्रोंमें सदा समुद्रके बीच स्नान करना लिखा है शुक्र सोम और शनिवार के दिन सन्तान की इच्छावाल पुरुष सेतु के विना अन्यत्र समुद्र में स्नान न करे गर्भिणीपति और प्रेतकृत्य न करचुका होय वह पुरुष सेतु के विना समुद्र में स्नान न करे वार तिथि नक्षत्र आदि का नियम और क्षेत्रों में है सेतुमें सदाही स्नान करना चाहिये जीवते हुये बान्धवों के निमित्त सेतुस्नान करे मृतहुओं के उद्देशसे न करे कुशा का पुतला बनाय उसको स्नान करावे और यह मन्त्र पढ़े (कुशोसि त्वं पवित्रोसि विष्णुना विधृतः पुरा। त्वयि स्नाते स च स्नातो यस्यैतद्ग्रन्थिबन्धनम्) और स्थानों में पर्व के बीच समु

पवित्र होता है सेतु में, गंगासागर में, गोकर्ण में, पुरुषोत्तमक्षेत्र में और किसी नदीसे समुद्रका संगम हुआ होय वहां सदाही पवित्रहै वहां सब काल में स्नान करना चाहिये और स्थानों में पर्वदिन के विना समुद्र को स्पर्श न करे पितर देवता और मुनियों के सम्मुख रामचन्द्रजी ने यह प्रतिज्ञा की है कि हमारे सेतु में जो स्नान करें वे जन्ममरण से छूटजाते हैं रामनाथ का माहात्म्य और सेतु का वैभव हम कोटि वर्ष में भी नहीं वर्णन करे सके हैं यह रामचन्द्रजी का वचन सुन सब देवता और मुनि बहुत प्रसन्न हो प्रशंसा करनेलगे सेतुकी रक्षा के लिये मध्य में ब्रह्माजी निवास करते हैं और सेतुमाधवनामक विष्णु सेतुमें विराजमान हैं और भी देवता, पितर, धर्मशास्त्र के प्रवर्तक महर्षि, गन्धर्व, किन्नर, नाग, यक्ष, विद्याधर, चारण, किम्पुरुष आदि सब सेतु में निवास करते हैं रामसेतु का दर्शन स्पर्शन श्रवण स्मरण आदि सब पापों से रक्षा करता है अर्धोदय में स्नान करने से आनन्द की प्राप्ति और मुक्ति की प्राप्ति होती है माघमास अमावास्या तिथि रविवार श्रवणनक्षत्र व्यतीपातयोग होय और श्रवणनक्षत्र का सूर्य होय तब अर्धोदययोग होता है उस योग में स्नान करने से सायुज्यमुक्ति मिलती है हजार व्यतीपात के तुल्य अमावास्या अर्कवार करके युक्त होय तो दश हजार अमावास्याके तुल्य होती है श्रवण नक्षत्र होय तो बहुतही पुण्य होता है इनमें एक २ भी स्नान, दान, जप, पूजन आदि का अनन्तफल देनेहारा है पांचों का योग होजाय तो क्या कहना है नक्षत्रों में श्रवण तिथियों में अमावास्या वारोंमें रविवार और योगों में व्यतीपातयोग श्रेष्ठ है इन चारों का योग मकर के सूर्य में होय और उस काल में सेतुस्नान करे तो जन्म मरण के भय से छूट मुक्ति पावे अर्धोदय तुल्य कोई पर्व न हुआ न होगा ऐसाही महोदयपर्व भी है इन पर्वकालों में सेतुक्षेत्रके बीच यथाशक्ति दान करना चाहिये आचार, तप, वेद, वेदान्त, शिव, विष्णु आदि देवताओं की भक्ति जिस ब्राह्मण में होय वह दानपात्र होता है उसीको सब दान देने चाहियें जो सत्पात्र ब्राह्मण न मिले तो सब दानवस्तु इकट्ठी कर रक्खे और जब उत्तम पात्र मिले तब दे देवे परन्तु अधम पात्रको न देवे इस

प्रसंग में एक इतिहास हम कहते हैं जो वशिष्ठजी ने राजा दिलीप को सुनाया था सब पात्रों में उत्तम पात्र वेद के आचार में तत्पर ब्राह्मण है और उनमें भी उत्तम वह है जिसके उदर में शूद्र का अन्न न गया होय जो ब्राह्मण वेद और पुराण जाने शिव विष्णु आदि का पूजन करे वर्णाश्रम धर्मों के अनुष्ठान में तत्पर होय दारिद्र्य और कुटुम्बी होय वह उत्तम पात्र होता है ऐसे पात्र को दान देने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त होते हैं उत्तम क्षेत्र में तो विशेष करके सत्पात्र कोही दान देना चाहिये अपात्र को दान देनेवाला मनुष्य दश जन्म तक कृकलास तीन जन्म गर्दभ दो जन्म तक मण्डूक एक जन्म चाण्डाल होकर फिर क्रम से शूद्र वैश्य क्षत्रिय और ब्राह्मण होता है परन्तु दारिद्र्य और रोगी होता है इस भांति और भी अनेक दोष अपात्र के दान देने से होते हैं इसलिये सत्पात्र कोही दान देना चाहिये जो सत्पात्र न मिले तो संकल्प कर भूमि में जल छोड़देवे सत्पात्र न मिले तो सत्पात्र के पुत्र को देवे वह भी न मिले तो महादेव के अर्पण करे परन्तु अपात्र को कभी न देवे सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो ! यह वशिष्ठजी का उपदेश मान उस दिन से राजा दिलीप सत्पात्र को दान देनेलगा सेतु आदि पुण्य क्षेत्रों में सत्पात्र कोही दान देवे जो तीर्थ पर पात्र न मिले तो वहां दान करके घर में आय वह वस्तु सत्पात्र को देदेवे नहीं तो धर्म का लोप होता है इस प्रकार दान देने से कभी दुःख नहीं होता और सायुज्य मुक्ति मिलती है अर्धोदय के समान कोई उत्तमकाल नहीं है कुम्भकोण, सेतुमूल, गोकर्ण, नैमिष, अयोध्या, दण्डकारण्य, विरूपाक्ष, वेंकट, शालग्राम, प्रयाग, काञ्ची, द्वारावती, मथुरा, पद्मनाभ, काशी, सब नदी, समुद्र, पर्वत आदि तीर्थों पर मुण्डन और उपवास करना चाहिये जो पुरुष लोभ अथवा मोह से मुण्डन और उपवास विना किये घर को चला आवे उसके सब पाप साथही चले आते हैं गन्धमादन में चौबीस तीर्थ मुख्य हैं उनमें लक्ष्मणतीर्थ पर मुण्डन कराना लिखा है परन्तु कण्ठ से ऊपर वपन कराना चाहिये वहां वपन कराय लक्ष्मणतीर्थ में स्नान कर ब्राह्मण को दक्षिणा देवे और लक्ष्मणेश्वर

महादेव का दर्शन करे तो सब पापों से छूट शिवलोक को जाय सेतुके तुल्य तीर्थ तप पुण्य और उत्तम गति कोई नहीं है हज़ार ग्रहण के तुल्य अर्धोदय पर्व होता है अर्धोदय के समान संसारमोचक कोई काल नहीं है अर्धोदय में रामसेतु के बीच स्नान करने से जो पुण्य होता है उसके तुल्य कोई पुण्य शास्त्र में नहीं कहा है साठिहज़ार वर्ष गङ्गा स्नान करने से जो पुण्य होता है वह सेतु स्नान एक बार करने से होता है अर्धोदय महोदय के पुण्य की तो क्या गणना है मकरमास में प्रयाग स्नान करने से सब पातक निवृत्त होते हैं उससे सहस्रगुणा अधिक पुण्य सेतु में एक बार अर्धोदय के बीच स्नान करने से होताहै तीन लोकों के सब तीर्थों में स्नान करने से जो पुण्य होता है वह अर्धोदय में एक बार सेतु स्नान करने से होता है ब्रह्मज्ञान से हीन कृतघ्न दुरात्मा महापातकी आदि सब अर्धोदय में सेतु स्नान करने से शुद्ध हो जाते हैं कृतघ्न का उद्धार और किसी तीर्थ में स्नान करने से नहीं होता परन्तु सेतुस्नान से उसकी भी सद्गति होजाती है जो अर्धोदय में मोहवश हो सेतु स्नान न करें वे अन्धे की भांति सदा संसारकूप में डूबते हैं अर्धोदय में सेतु स्नान करनेहारे मनुष्य सूर्यमण्डल को भेदन कर ब्रह्मलोक को जाते हैं इसमें कुछ सन्देह नहीं है अर्धोदय में सेतु स्नान कर रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण, रामेश्वर, सुग्रीव आदि वानरों का ध्यान कर अपना दारिद्र्य निवृत्त होने के लिये देवता ऋषि पितरों का तर्पण करे और अर्धोदयनामक जगन्नाथ का पूजन करे तो विष्णुभगवान् प्रसन्न होते हैं॥

दिवाकर नमस्तेस्तु तेजोराशे जगत्पते। अत्रिगोत्रसमुत्पन्न लक्ष्मीदेव्याः सहोदर॥ अर्घ्यं गृहाण भगवन्सुधाकुम्भ नमोस्तु ते। व्यतिपातमहायोगिन् महापातकनाशन॥ सहस्रबाहो सर्वात्मन् गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते। तिथिनक्षत्रवाराणामधीश परमेश्वर॥ मासरूप गृहाणार्घ्यं कालरूप नमोस्तु ते॥

इन मन्त्रों से अर्धोदय में अर्घ्य देवे ब्राह्मणों को वित्त के अनुसार सब पदार्थ देवे चौदह बारह आठ सात छह अथवा पांच ब्राह्मणों का पृथक् २ मन्त्रों से पूजन करे कांस्य का अथवा काष्ठ का नया पात्र खीर से भरकर फल, गुड़, घृत, ताम्बूल और दक्षिणा सहित ब्राह्मणों के आगे रक्खे और प्रत्येक ब्राह्मण को दूध देनेहारी गौ और यज्ञोपवीत देकर॥

श्रवणर्क्षे जगन्नाथ जन्मर्क्षे तव केशव ॥ यन्मया दत्त-मर्थिभ्यस्तदक्षयमिहास्तु ते॥ १ ॥ नक्षत्राणामधिपते देवा-नाममृतप्रद ॥ त्राहि मां रोहिणीकान्त कलाशेष नमोस्तु ते॥ २ ॥ दीनानाथ जगन्नाथ कालनाथ कृपाकर॥ त्वत्पाद-पद्मयुगले भक्तिरस्त्वचला मम ॥ ३ ॥ व्यतीपात नमस्तेस्तु सोमसूर्यसुतप्रभो॥ यद्दानादिकृतं किञ्चित्तदक्षयमिहास्तु ते॥ ४ ॥ अर्थिनां कल्पवृक्षोऽसि वासुदेव जनार्दन ॥ मास-त्वयनकालेश पापं शमय मे हरे ॥ ५ ॥

ये मन्त्र पढ़े इसप्रकार ब्राह्मणों का पूजन कर पार्वणश्राद्ध कर हिरण्य-श्राद्ध आमश्राद्ध अथवा पाकश्राद्ध करे वित्तशाठ्य न करे पीछे वस्त्र भूषण आदि से आचार्य का पूजनकर प्रतिमा, गौ, छत्र, उपानत्, वस्त्र आदि उसको देवे इसप्रकार अर्धोदय पर्व में सेतु के बीच व्रत करे वह कृत-कृत्य होजाता है फिर उसको कुछ करना शेष नहीं रहता और क्षेत्रों में भी अर्धोदय पर्व के बीच यही विधान करना चाहिये रामचन्द्रजी ने गन्ध-मादन पर्वत के बीच समुद्र में सेतु बांधा है स्नान के समय सेतु का स्मरण करने से करोड़ों पाप तत्क्षण नाश को प्राप्त होते हैं और विष्णु-लोक की प्राप्ति होती है जो पुरुष निमेषमात्र भी सेतु के समीप निवास करे उसके सम्मुख कभी यमदूत नहीं आते रामसेतु, धनुष्कोटि, रामचन्द्र, सीता, लक्ष्मण, रामनाथ, हनुमान्, सुग्रीव आदि वानर विभीषण, नारद, विश्वामित्र, अगस्त्य, वशिष्ठ, वामदेव, जाबालि, कश्यप आदि रामभक्तों

का जो सदा चिन्तनकरे वह सब दुःखों से छूट परमपद को प्राप्त होता है सत्यक्षेत्र, हरिक्षेत्र, कृष्णक्षेत्र, नैमिष, शालग्राम, बदरी, हस्तिगिरि, वृषाचल, शेषाद्रि, लक्ष्मीक्षेत्र, चित्रकूट, कुरङ्गक, काञ्ची, कुम्भकोण, मोहिनीपुर, ऐन्द्र-श्वेताचल, पद्मनाभ, महास्थल, फुल्लग्राम, घटिकाद्रि, सारक्षेत्र, हरिस्थल, श्रीनिवास, भक्तनाथ, आलिन्दक्षेत्र, शुकक्षेत्र, वारुणक्षेत्र, मथुरा, श्रीगोष्ठी, पुरुषोत्तम, श्रीरङ्ग आदि शिव विष्णु क्षेत्रों में स्नान करने से जो पातक नाश को प्राप्त होते हैं वे केवल सेतु स्नान सेही निवृत्त होजाते हैं जो पुरुष सेतु स्नान नहीं करते वे कभी संसार से मुक्त नहीं होते जो मनुष्य कभी शिवपञ्चाक्षर नारायणाष्टाक्षर और रामषडक्षर का कभी जप स्मरण आदि नहीं करते वे भी सेतु स्नान से निष्पाप होजाते हैं जो पुरुष एकादशी व्रत नहीं करते जाबाल्युपनिषद् के मन्त्रों करके भस्म नहीं धारते वेदोक्त मार्ग करके शिव विष्णु आदि देवताओं का पूजन नहीं करते उन सब के भी पाप सेतु स्नान करने से नाश को प्राप्त होते हैं जो पुरुष शिव विष्णुआदि देवताओं का गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि उपचारों करके पूजन नहीं करते और रुद्राध्याय, चमक, पुरुषसूक्त, पावमानीसूक्त, त्रिमधुरसूक्त, सुपर्ण, पञ्चशान्ति आदि करके कभी अभिषेक नहीं करते उन पापियों के पाप धनुष्कोटि स्नान करने से तत्क्षण निवृत्त होजाते हैं शिव विष्णु आदि देवताओं को जो नमस्कार प्रदक्षिणा आदि नहीं करते और धनुर्मास में प्रभातही पूजनकर महानैवेद्य नहीं लगाते वे भी रामसेतु में स्नान करने से निष्पाप होजाते हैं जो पुरुष शिव के अथवा विष्णु के नाम उच्चारण नहीं करते शालग्राम शिवनाम अथवा द्वारकाचक्र का पूजन नहीं करते गङ्गा की मृत्तिका तुलसी की मृत्तिका अथवा गोपी-चन्दन को मस्तक में छाती में और दोनों भुजाओं में नहीं धारते और कभी रुद्राक्ष अथवा तुलसीकाष्ठ को जो धारण नहीं करते वे सब धनुष्कोटि में स्नान करने से निष्पाप होजाते हैं जो पुरुष प्रभात उठ शिव विष्णु के नामस्तोत्र अथवा कोई मन्त्र चिन्तन नहीं करते वे धनुष्कोटि में स्नान करने से निष्पाप होजाते हैं जो पुरुष प्रभात उठ जलाशय पर जाय स्नान

सन्ध्यावन्दन कर गायत्री का सेवन नहीं करते जो प्रातःकाल सायं-काल और मध्याह्न के कर्म नहीं करते ब्रह्मयज्ञ वैश्वदेव अतिथि पूजन नहीं करते संन्यासियों को भिक्षा नहीं देते जो ब्राह्मण वेदत्रयी पढ़कर भूल जाते हैं अथवा वेद वेदाङ्ग पढ़तेही नहीं माता पिता का प्रति वर्ष श्राद्ध नहीं करते महालय में अष्टका श्राद्ध और नैमित्तिक श्राद्ध नहीं करते चैत्र की पूर्णमासी को चित्रगुप्त की प्रसन्नता के लिये पान व कदली शर्करासहित पायस, गुड़, आम्र, पनस, ताम्बूल, पादुका, छत्र, वस्त्र, पुष्प, चन्दनआदि ब्राह्मणों को नहीं देते उनके सब पातक धनुष्कोटि स्नान से निवृत्त होते हैं दुराचार होय चाहे सदाचार जो धनुष्कोटि का सेवन करे वह संसार से मुक्ति पाता है जो मुक्ति चाहे वह शीघ्रही धनुष्कोटि को जाय हे मुनीश्वरो! हम सत्यहित और सार कहते हैं कि शीघ्र धनुष्कोटि तीर्थको जावो धनुष्कोटि स्नान विना मुक्ति का कोई उपाय नहीं है वहां स्नान करने वालों को संसार का भय नहीं होता धनुष्कोटि स्नान करने से सत्यज्ञान अनन्त परब्रह्म की प्राप्ति होती है सूतजी कहते हैं कि हे मुनीश्वरो! यह सेतुमाहात्म्य हमने वर्णन किया इसके पढ़ने और श्रवण करने से महादुःख महारोग दुःस्वप्न अपमृत्यु आदि का नाश होता है और सबप्रकार से शान्ति होती है स्वर्ग और मोक्ष भी मिलता है इसको पढ़ने और सुनने से अग्नि-ष्टोम आदि यज्ञों का और चारोवेदों के सौ पारायण का फल प्राप्त होता है इसका एक अध्याय पढ़े तो अश्वमेध का फल पावे दो अध्याय पढ़े अथवा सुने तो गोमेधयज्ञ का फल प्राप्त होता है दश अध्याय पढ़े तो स्वर्ग जाय इन्द्रके साथ आनन्द भोगता है बीस अध्याय पढ़ने से ब्रह्मलोक की प्राप्ति होती है तीस अध्याय पढ़े तो विष्णुलोक को जाय चालीस अध्याय पढ़े तो रुद्रलोककी प्राप्ति होय जो पुरुष पचास अध्याय पढ़े वह साम्ब सदाशिव के समीप निवास करताहै जो इस सम्पूर्ण माहात्म्य को एक बार पढ़े वह शिव-सालोक्य पावे दो बार इस माहात्म्यको सुने वह विमान में बैठ शिवजी के समीप जाय तीन बार पढ़े अथवा श्रवण करे तो शिवसारूप्य पावे जो चार बार पढ़े वह शिवसायुज्य पाता है जो पुरुष प्रतिदिन इस माहात्म्य का एक

श्लोक आधा श्लोक एक चरण अथवा एक वर्णही नित्य पढ़े वह उस दिन के किये पाप से छूटजाता है इस सम्पूर्ण माहात्म्य को जो पढ़े अथवा सुने तो जितने अक्षर इस माहात्म्य में हैं उतनी ब्रह्महत्या उतने सुरापान उतने सुवर्णस्तेय उतने गुरुदारगमन और उतनेही संसर्ग दोष तत्क्षण नाश को प्राप्त होजाते हैं जितने इसमें अक्षर हैं उतने बार सेतु के सब तीर्थों में स्नान करने का फल इसके पठन और श्रवण से प्राप्त होता है जो इसको भक्ति से लिखे वह ज्ञान निवृत्ति कर शिवसायुज्य पाता है जिस घर में इस माहात्म्य की पुस्तक रहे वहां भूत, वेताल, रोग, चोर, अग्नि आदि का भय नहीं होता और ग्रहपीड़ा भी नहीं होती जिस घर में यह माहात्म्य होय वह घर सेतुक्षेत्र के समान है चौबीस तीर्थ और गन्धमादन पर्वत भी वहां निवास करते हैं ब्रह्मा विष्णु शिवआदि देवता वहां निवास करते हैं बहुत कहांतक कहें तीनों लोक वहां निवास करते हैं श्राद्ध के समय एक अध्याय पढ़े तो श्राद्ध की विकलता दूर होय और पितरों की तृप्ति होय जो पुरुष सदा इस माहात्म्य को ब्राह्मणों को सुनाता रहे उसकी गौ और महिषी नीरोग रहती हैं और बहुत दूध देती हैं यह माहात्म्य मठ देवालय नदी तड़ाग आदिके तीर पर पुण्यवन में और श्रोत्रियों के घर में पढ़ना चाहिये और किसी अपवित्र स्थान में इसको न पढ़े विषुवसंक्रान्ति अयनसंक्रान्ति हरि-वासर अष्टमी चतुर्दशी आदि पर्वदिनों में इसको पढ़े श्रावण भाद्रपद धनुर्मास और उत्तरायण में पवित्र हो इस माहात्म्य को पढ़े और श्रोता भी पवित्र होकर श्रवण करें इस माहात्म्य में अनेक पुण्यतीर्थ बड़े २ पुण्यात्मा राजा, तपस्वी, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि देवता वर्णन किये हैं और धर्म अधर्म का भी इसमें प्रतिपादन किया है यह पवित्र माहात्म्य वेद के अर्थ करके युक्त है और स्मृतिकर्ता व्यास आदि मुनीश्वरों का सम्मत है जो अपना कल्याण चाहे वह इसको अवश्य ही पढ़े जिससे यह माहात्म्य श्रवण करे उसको सुवर्ण वस्त्र आदि देवे वित्तशाठ्य न करे सुवर्ण, वस्त्र, गौ, भूमि आदि देकर सब श्रोता पौराणिक को सन्तुष्ट करें पौराणिक का पूजन करने से तीनों देवताओं का पूजन होता है और तीनों देवताओं का पूजन करने

से तीनलोक सन्तुष्ट होते हैं साक्षात् परमात्मा ने रामचन्द्ररूप से सीता लक्ष्मण सहित भूमिपर अवतार लिया इस माहात्म्य के पढ़ने और श्रवण करनेवालों को रामचन्द्रजी भोग और मोक्ष देते हैं यह माहात्म्य श्रीवेद-व्यासजी के मुखकमल से निकला है युधिष्ठिर महाराज भीमसेन आदि अपने भ्राताओं सहित अपने पुरोहित धौम्यऋषि के मुख से नित्य श्रवण किया करते हैं हे मुनीश्वरो ! हमारे मुख से यह अतिगुप्त और श्रुतिसम्मत माहात्म्य आपने श्रवण किया इसको नित्य आदर से पठन कीजिये यह वचन मुनीश्वरों को कह कर अपने गुरु वेदव्यासजी का हृदय में स्मरण कर प्रेम से रोमाञ्चित हो अश्रुपात करते हुये आनन्द से नाचनेलगे इसी अवसर में शिष्यों पर अनुग्रह करने के लिये वेदव्यासजी वहां प्रकट हुये सूतजी सहित सब मुनि उनके चरणों पर गिरे और आनन्द से अश्रुपात करनेलगे व्यासजी ने अपने हाथ से सूतजी को उठाय आलिङ्गन किया मुनियों ने आसन बिछाया उसपर व्यासजी बैठे और उनकी आज्ञा पाय सब मुनि अपने २ आसन पर बैठे तब व्यासजी शौनक आदि मुनियों से कहनेलगे कि हे मुनीश्वरो ! हमारे शिष्य सूतजी ने आपको सेतुमा-हात्म्य श्रवण कराया जिसके श्रवण से सब महापातक निवृत्त होते हैं श्रुति स्मृति पुराण इतिहास और सब शास्त्रों का अर्थ इस माहात्म्य में पर्यवसन्न है सब पुराणों में यह माहात्म्य हमको बहुत प्रिय है हमारी आज्ञा से राजा युधिष्ठिर इस माहात्म्य को धौम्यऋषि के मुख से नित्य श्रवण करते हैं इस लिये हे मुनीश्वरो ! आप भी सब इस माहात्म्य को सदा पढ़ें श्रवणकरें और अपने शिष्यों को पढ़ावें सब मुनीश्वरों ने व्यासजी की आज्ञा को अङ्गी-कार किया व्यासजी भी अपने शिष्य सूतजी को साथ ले मुनीश्वरों से बिदा हो कैलास को गये और नैमिषारण्यवासी मुनीश्वर भी उस दिन से नित्य सेतुमाहात्म्य को पठन और श्रवणकर आनन्द को प्राप्त होते हुये॥

दो० भाषा माहिं विचारि कै, तजि मन को परमाद ॥
रची रुचिर यह शिवकथा, बुध दुर्गापरसाद १
हरनेहारी श्रवण ते, भक्तन के भव फन्द ॥